पढ़ें और सीखें योजना

# हमारा अद्भुत वायुमंडल अब मैला क्यों ?


अजित राम वर्मा

*विभागीय सहयोग*

राम दुलार शुक्ल


राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्
NATIONAL COUNCIL OF EDUCATIONAL RESEARCH AND TRAINING

दिसम्बर 1999
पौष 1921

**PD 10T NSY**



**प्रकाशन सहयोग**

पूरन चंन्द प्रोफेसर एव *अध्यक्ष* प्रकाशन प्रभाग

नरेश यादव *संपादन सहायक* डी साई प्रसाद *उत्पादन अधिकारी*

प्रमोद रावत *सहायक उत्पादन अधिकारी*

विनोद कुमार *उत्पादन सहायक*

*वरिष्ठ कलाकार* : डी.के. शिन्दे

**एन.सी.ई.आर.टी. के प्रकाशन प्रभाग के कार्यालय**

| | | | |
|---|---|---|---|
| एनसीईआरटी कैम्पस | 108, 100 फीट रोड, होस्डेकेरे | नवजीवन ट्रस्ट भवन | सीडब्ल्यूसी कैम्पस |
| श्री अरविंद मार्ग | हेली एक्सटेंशन बनाशकरी III इस्टेज | डाकघर नवजीवन | 32, बीटीरोड, सुखचर |
| नई दिल्ली 110 016 | बैंगलूर 560 085 | अहमदाबाद 380 014 | 24 परगना 743 179 |

**आवरण :** जहाज से 11 हजार मीटर की ऊँचाई से लिया गया बादलों की ऊपरी सतह का एक दृश्य।

रू. 23.00

प्रकाशन प्रभाग में सचिव, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, श्री अरविंद मार्ग, नई दिल्ली 110 016 द्वारा प्रकशित तथा नाथ ग्राफिक्स, 1/21, सर्वप्रिय विहार, नई दिल्ली 110 016 द्वारा लेज़र टाइप सैट होकर अरावली प्रिन्टर्स एण्ड पब्लिशर्स प्रा० लि०, डब्ल्यू 30, ओखला फेस–II, नई दिल्ली 110 020 द्वारा मुद्रित।

# प्राक्कथन

विद्यालय शिक्षा के सभी स्तरों के लिए अच्छे शिक्षाक्रम, पाठ्यक्रमों और पाठ्यपुस्तकों के निर्माण की दिशा में हमारी परिषद् पिछले तीन दशकों से कार्य कर रही है। हमारे कार्य का प्रभाव भारत के सभी राज्यों और संघ शासित प्रदेशों में प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से दृष्टिगत होता है और इस पर परिषद् के कार्यकर्ता संतोष का अनुभव कर सकते हैं।

हमने देखा है कि अच्छे पाठ्यक्रम और अच्छी पाठ्यपुस्तकों के बावजूद भी हमारे विद्यार्थियों की रुचि प्राय: स्वत: पढ़ने की ओर अधिक नहीं बढ़ती। इसका एक मुख्य कारण अवश्य ही हमारी परीक्षा-प्रणाली है, जिसमें पाठ्यपुस्तकों में दिए गए ज्ञान की ही परीक्षा ली जाती है। इस कारण बहुत ही कम विद्यालयों में विद्यार्थियों को कोर्स से बाहर की पुस्तकें पढ़ने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है। लेकिन अतिरिक्त पठन में बच्चों की रुचि न होने का एक बड़ा कारण यह भी है कि विभिन्न आयु वर्ग के बालकों के लिए कम मूल्य की अच्छी पुस्तकें पर्याप्त संख्या में उपलब्ध भी नहीं हैं। यद्यपि पिछले कुछ वर्षों में इस कमी को पूरा करने के लिए कुछ काम प्रारंभ हुआ है पर यह बहुत ही अपर्याप्त है।

इस दृष्टि से परिषद् ने बच्चों की पुस्तकों के रूप में लेखन की दिशा में एक महत्त्वाकांक्षी योजना प्रारंभ की है। इसके अंतर्गत 'पढ़ें और सीखें' शीर्षक से एक पुस्तकमाला तैयार की जा रही है जिसमें विभिन्न आयु वर्ग के बच्चों के लिए सरल भाषा और रोचक शैली में अनेक विषयों पर बड़ी संख्या में पुस्तकें तैयार की जा रही हैं। परिषद् इस शीर्षक के अन्तर्गत ही शिशुओं के लिए पुस्तकें, कथा-साहित्य, जीवनियाँ, देश-विदेश परिचय, सांस्कृतिक विषय, सामाजिक विज्ञान-विषयों, तथा वैज्ञानिक विषयों में अनेकानेक पुस्तकें निर्मित करती आ रही है। हम आशा करते हैं कि बहुत शीघ्र ही हिन्दी में हम वैज्ञानिक विषयों पर 50 से भी अधिक पुस्तकें प्रकाशित कर सकेंगे।

वैज्ञानिक पुस्तकों के निर्माण में हम देश के जाने माने वैज्ञानिकों एवं अनुभवी, सुयोग्य प्राध्यापकों का सहयोग ले रहे हैं। प्रत्येक पुस्तक के प्रारूप पर भाषा, शैली और विषय-विवेचन की दृष्टि से सामूहिक विचार करके उसे अंतिम रूप दिया जाता है।

परिषद् इस माला की पुस्तकों को लागत मूल्य पर ही प्रकाशित कर रही है ताकि ये देश के हर कोने में पहुँच सकें। भविष्य में इन पुस्तकों को अन्य भारतीय भाषाओं में अनुवाद कराने की भी योजना है।

हम आशा करते हैं कि शिक्षाक्रम, पाठ्यक्रम और पाठ्यपुस्तकों के क्षेत्र में किए गए कार्यों की भांति ही परिषद् की इस योजना का भी व्यापक स्वागत होगा।

प्रस्तुत पुस्तक **हमारा अदभुत वायुमंडल अब मैला क्यों?** के लेखन के लिए प्रो. अजित राम वर्मा ने हमारा निमंत्रण स्वीकार किया, जिसके लिए हम उनके अत्यंत आभारी हैं। जिन-जिन विद्वानों, अध्यापकों और कलाकारों से इस पुस्तक को अंतिम रूप देने में हमें सहयोग मिला है, उनके प्रति मैं कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ।

''पढ़ें और सीखें'' पुस्तक माला की इस योजना में विज्ञान की पुस्तकों के लेखन का मार्गदर्शन, दिल्ली विश्वविद्यालय तथा प्रयाग विश्वविद्यालय के भूतपूर्व कुलपति और राजस्थान विश्वविद्यालय के वर्तमान प्रोफेसर-एमेरिट्स प्रो. रामचरण मेहरोत्रा कर रहे हैं। विज्ञान की पुस्तकों के लेखन के संयोजना और अंतिम संपादन आदि का दायित्व हमारे विज्ञान एवं गणित शिक्षा विभाग के अध्यक्ष प्रो. राम दुलार शुक्ल वहन कर रहे हैं। सुश्री शोभालक्ष्मी साहू (जूनियर प्रोजेक्ट फेलो) इस योजना में अपना सहयोग दे रही हैं।

मैं डा. रामचरण मेहरोत्रा को और अपने सभी सहयोगियों को हार्दिक धन्यवाद और बधाई देता हूँ।

इन पुस्तकों को इतने अच्छे ढंग से प्रकाशित करने के लिए मैं परिषद् के प्रकाशन प्रभाग के अध्यक्ष और उनके सहयोगियों को हार्दिक धन्यवाद देता हूँ।

इस माला की पुस्तकों पर बच्चों, अध्यापकों और बच्चों के माता-पिता की प्रतिक्रिया का हम स्वागत करेंगे, ताकि इन पुस्तकों को और भी उपयोगी बनाने में हमें सहयोग मिल सके।

**जगमोहन सिंह राजपूत**
*निदेशक*
राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्

नई दिल्ली
नवम्बर 1999

# दो शब्द

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् (एन.सी.ई.आर.टी.) की **पढ़ें और सीखें** योजना के अंतर्गत यह एक छोटा-सा प्रयास है। जब परिषद् के प्रगतिशील निदेशक प्रो. जगमोहन सिंह राजपूत ने मुझे इस दिशा में विज्ञान के विषयों का कार्यभार सँभालने के लिए आमंत्रित किया तो अपने वैज्ञानिक मित्रों की अतिव्यस्तता के कारण यह उत्तरदायित्व स्वीकार करने में मुझे संकोच था।

इस दिशा में मेरा प्रयास रहा है कि विज्ञान के विभिन्न विषयों के जाने-माने विद्वानों को इस सराहनीय कार्य के लिए निमंत्रित कर सकूँ। ऐसा मेरा विश्वास है कि खोज और अनुसंधान की आनंदपूर्ण अनुभूतियों वाले वैज्ञानिक ही अपने आनंद की एक झलक बच्चों तक पहुँचा सकते हैं। मैं उनका हृदय से आभारी हूँ कि उन्होंने अंकुरित होने वाली पीढ़ी के लिए अपने बहुमूल्य समय में से कुछ क्षण निकालने का प्रयास किया। बालक राष्ट्र की सबसे बहुमूल्य और महत्वपूर्ण निधि है और मेरे लिए यह किंचित आश्चर्य और संतोष की बात है कि हमारे इतने लब्धप्रतिष्ठ और अत्यंत व्यस्त वैज्ञानिक बच्चों के लिए थोड़ा परिश्रम करने के लिए सहर्ष मान गए हैं। मैं सभी वैज्ञानिक मित्रों के लिए हृदय से आभारी हूँ।

इन पुस्तकों की तैयारी में हमारा मुख्य ध्येय रहा है कि विषय ऐसी शैली में प्रस्तुत किया जाए कि बच्चे स्वयं इसकी ओर आकर्षित हों, साथ ही भाषा इतनी सरल हो कि बच्चों को इनके अध्ययन से विज्ञान के गूढ़तम रहस्यों को समझने में कोई कठिनाई न हो। इन पुस्तकों के पढ़ने से उनमें अधिक पढ़ने की रुचि पैदा हो, उनके नैसर्गिक कौतूहल में वृद्धि हो जिससे ऐसे कौतूहल और उसके समाधान के लिए स्वप्रयत्न उनके जीवन का एक अंग बन जाए।

यह योजना परिषद् के वर्तमान निदेशक प्रो. जगमोहन सिंह राजपूत की प्रेरणा से चल रही है। मैं उन्हें इसके लिए बधाई और धन्यवाद देता हूँ।

प्रो. अजित राम वर्मा ने इस पुस्तक को लिखने के लिए मेरा अनुरोध स्वीकार किया जिसके लिए मैं हृदय से आभारी हूँ। परिषद् के विज्ञान एवं गणित शिक्षा विभाग के अध्यक्ष प्रो. राम दुलार शुक्ल विज्ञान की पुस्तकों के लेखन से संबंधित योजना के संयोजक एवं संपादक हैं और बहुत परिश्रम और कुशलता से अपना कार्य कर रहे हैं। मैं प्रो. शुक्ल को हृदय से धन्यवाद देता हूँ।

आशा है कि ऐसी पुस्तकों से हमारी नई पीढ़ी की बाल्यकाल ही में वैज्ञानिक मानसिकता का शुभारंभ हो सकेगा और विज्ञान के नवीनतम ज्ञान के साथ ही उन्हें अपने देश की प्रगतियों एवं वैज्ञानिकों के कार्य की झलक मिल सकेगी जिससे उनमें अपने राष्ट्र के प्रति गौरव की भावना का भी सृजन होगा।

**रामचरण मेहरोत्रा**
*अध्यक्ष*
पढ़ें और सीखें योजना
(विज्ञान)

# गांधी जी का जन्तर

तुम्हें एक जन्तर देता हूं। जब भी तुम्हें सन्देह हो या तुम्हारा अहम् तुम पर हावी होने लगे, तो यह कसौटी आजमाओ :

जो सबसे गरीब और कमजोर आदमी तुमने देखा हो, उसकी शकल याद करो और अपने दिल से पूछो कि जो कदम उठाने का तुम विचार कर रहे हो, वह उस आदमी के लिए कितना उपयोगी होगा। क्या उससे उसे कुछ लाभ पहुंचेगा ? क्या उससे वह अपने ही जीवन और भाग्य पर कुछ काबू रख सकेगा ? यानि क्या उससे उन करोड़ों लोगों को स्वराज्य मिल सकेगा जिनके पेट भूखे हैं और आत्मा अतृप्त है ?

तब तुम देखोगे कि तुम्हारा सन्देह मिट रहा है और अहम् समाप्त होता जा रहा है।

# लेखक परिचय

प्रो. अजित राम वर्मा भौतिकी के क्षेत्र में एक जाने माने वैज्ञानिक हैं। आपने प्रावस्था विपर्यासी सूक्ष्मदर्शिकी (phase contrast microscopy) के प्रयोग द्वारा क्रिस्टल सतह पर स्क्रू प्रभंश (screw dislocation) के कारण उत्पन्न होने वाली वृद्धि सर्पिलों (growth spirals) के सफलतापूर्वक फोटोग्राफ लिए। इस कार्य को प्रो. वर्मा की दो पुस्तकों "क्रिस्टल वृद्धि और प्रभंश (Crystal growth and Dislocations)" और "क्रिस्टल में बहुरूपण और बहुलप्ररूपण (polymorphism and polytypism in crystals)" में प्रकाशित किया गया है। इन दोनों ही पुस्तकों का अनुवाद रूसी भाषा में भी हो चुका है।

1965 से 1982 तक, प्रो. वर्मा राष्ट्रीय भौतिक प्रयोगशाला (National Physical Laboratory), नई दिल्ली के निदेशक रहे। उन्होंने पदार्थों के प्रोहण और अभिलक्षण के अध्ययन और वास्तविक क्रिस्टलों में संरचना एवं गुणों में संबंधों के अध्ययन के लिए एक उच्चस्तरीय ग्रुप की स्थापना की जिसमें वे अब तक कार्यरत हैं।

प्रो. वर्मा ने 'पढ़ें और सीखें' योजना में **नापो तो सच पता चले** पुस्तक मूल रूप से हिन्दी में लिखी और इस पुस्तक को विज्ञान और प्रौद्योगिकी विभाग (भारत सरकार) द्वारा प्रथम पुरस्कार मिला। प्रस्तुत पुस्तक **हमारा अद्भुत वायुमंडल अब मैला क्यों?** में प्रो. वर्मा ने अपने अनुसंधान की उपलब्धि को बच्चों के स्तर पर लाकर सरल एवं सुबोध भाषा में प्रस्तुत किया है। आशा है कि प्रस्तुत पुस्तक बच्चों के लिए ही नहीं अपितु शिक्षकों एवं वायुमंडल के क्षेत्र में कार्यरत सभी विशेषज्ञों के लिए समान रूप से उपयोगी होगी।

# विज्ञान संबंधित मूल्य

जिज्ञासा, ज्ञान-पिपासा, वस्तुनिष्ठता, ईमानदारी व सच्चाई, प्रश्न करने का साहस, क्रमबद्ध तर्क, प्रमाण/सत्यापन के पश्चात स्वीकृति, खुला दिमाग, पूर्णता प्राप्त करने की अभिलाषा तथा मिलजुल कर कार्य करने की भावना आदि विज्ञान संबंधी कुछ आधारभूत मूल्य हैं। इन मूल्यों द्वारा विज्ञान के उन प्रक्रमों को अभिलक्षणित किया जाता है, जो प्रकृति एवं उसकी अपघटनाओं से संबंधित सत्य के अन्वेषण में सहायता प्रदान करते हैं। विज्ञान का उद्देश्य विभिन्न वस्तुओं एवं अपघटनाओं की व्याख्या करना है। अतः विज्ञान सीखने एवं उसका अभ्यास करने के लिए –

* **अपने परिवेश की वस्तुओं तथा घटनाओं के प्रति जिज्ञासु बनें।**
* **प्रचलित विश्वासों एवं मान्यताओं पर प्रश्नचिह्न लगाने का साहस करें।**
* **"क्या", "कैसे" तथा "क्यों" में प्रश्न करें एवं सूक्ष्म प्रेक्षणों, प्रयोगों, परामर्शों, चर्चाओं व तर्कों द्वारा अपना उत्तर प्राप्त करें।**
* **प्रयोगशाला में अथवा उसके बाहर प्राप्त अपने प्रेक्षणों एवं प्रायोगिक परिणामों को सच्चाईपूर्वक लिखें।**
* **आवश्यकता पड़ने पर, प्रयोगों की पुनरावृत्ति सावधानीपूर्वक एवं क्रमबद्ध तरीके से करें, किन्तु किसी भी परिस्थिति में अपने परिणामों में हेरफेर न करें।**
* **तथ्यों, विचार-बुद्धि एवं तर्कों द्वारा अपना मार्गदर्शन करें, पूर्वाग्रहों से ग्रस्त न हों।**
* **अनवरत एवं समर्पित कार्य के द्वारा नई खोजों एवं नए आविष्कारों के लिए उत्कट अभिलाषा रखें।**

# विषय सूची

# भूमिका

## हमारा अद्भुत वायुमंडल

हम पृथ्वी पर रहते हैं। इसके ऊपर एक हवा की परत है जिसमें हम रहते है और साँस लेते हैं और इस प्रकार जीवित रहते हैं। यह हवा हमारे विशाल वायुमंडल का भाग है। क्या आपने कभी सोचा है कि हमारी पृथ्वी अनोखी है और हमारा वायुमंडल अद्भुत है? ये दोनों ही प्रकृति की अद्भुत देन हैं। इस पुस्तक में हम पृथ्वी के बारे में विशेष अध्ययन न करके केवल उन्हीं बातों पर ध्यान देंगे जिनका हमारे वायुमंडल से संबंध है। अत: इस पुस्तक में हम अपने वायुमंडल का अध्ययन करेंगे और उन गुणों पर ध्यान देंगे जिनके कारण हमारा वायुमंडल वास्तव में अद्भुत है और जिसके फलस्वरूप यहाँ जीवन सम्भव हुआ।

हमारी पृथ्वी सौर परिवार का ही एक सदस्य ग्रह है। यदि हम सौर परिवार के समस्त ग्रहों के वायुमंडलों पर ध्यान दें तो देखेंगे कि हमारी पृथ्वी के वायुमंडल के समान किसी और ग्रह में वायुमंडल नहीं है, और न ही इस प्रकार का जीवन। भिन्न-भिन्न ग्रहों पर किस प्रकार का वायुमंडल है? वहाँ मुख्य गैसें क्या हैं और कितनी हैं? ग्रहों के ऊपरी सतह पर ताप क्या है? इन बातों का संक्षिप्त विवरण अगली सारणी में दिया गया है। हम विशेष रूप से अपने दो निकट के ग्रहों, शुक्र (Venus) तथा मंगल (Mars) के वायुमंडल पर विचार करेंगे। निकटतम उपग्रह चाँद (Moon) पर तो कोई वायुमंडल ही नहीं है, अत: उस पर तो कोई विचार करने की आवश्यकता ही नहीं है।

पहले शुक्र (Venus) को लीजिए। यह पृथ्वी की अपेक्षा सूर्य से कुछ निकट* है। इसका द्रव्यमान पृथ्वी के द्रव्यमान का (0.815) गुना है अर्थात् थोड़ा-सा कम है। इसलिए यह आशा हो सकती थी कि शुक्र का वायुमंडल कुछ हमारे जैसा ही होगा। परन्तु इसके वायुमंडल में 96% $CO_2$ गैस है, और 3.5% $N_2$ गैस है और थोड़ी मात्रा में $SO_2$ गैस और जलवाष्प है। इस ग्रह के ऊपरी ठोस सतह का औसत ताप (और उसके छूते हुए वायुमंडल का ताप) 730K है। इस प्रकार आक्सीजनरहित तथा अधिक ताप वाला शुक्र का वायुमंडल अत्यन्त भीषण है जिसका दाब पृथ्वी के दाब से सौ गुना अधिक है।

अब मंगल (Mars) को ही लीजिए। इसमें 95% $CO_2$ तथा 2.7% $N_2$ गैसें हैं। थोड़ी-सी मात्रा में

---

*पृथ्वी से सूर्य की दूरी लगभग $1.5 \times 10^8$ किलोमीटर है। शुक्र से सूर्य लगभग $0\ 723 \times 1.5 \times 10^8$ किलोमीटर दूर है। पृथ्वी अपने अक्ष पर लगभग 24 घंटे में एक चक्कर लगाती है परन्तु शुक्र 243 दिनों में एक चक्कर लगाता है। एक और विशेष बात है। पृथ्वी पश्चिम से पूर्व की ओर घूमती है, शुक्र उल्टा घूमता है।

## सारणी

| ग्रह | वायुमंडल की मुख्य गैसें | औसत ताप, ऊपरी सतह पर | वायुमंडल का द्रव्यमान ($kg/m^2$) |
|---|---|---|---|
| बुध (Mercury) | कोई वायुमंडल नहीं है | 440 K | नहीं के बराबर |
| शुक्र (Venus) | ठोस धरती के ऊपर सशक्त वायुमंडल है जिसमें निम्न गैसें हैं: 96% $CO_2$; 3.5% $N_2$; 0.15% $SO_2$ | 730 K | 1030000 |
| पृथ्वी (Earth) | ठोस धरती और समुद्रों के ऊपर सशक्त वायुमंडल है जिसमें निम्न गैसें विद्यमान हैं: 78% $N_2$, 21% $O_2$; 0 93% Ar, 0 032% $CO_2$ तथा जलवाष्प जो समय और स्थान पर बदलता रहता है। | 288 K | 10360 |
| चाँद (Moon) | कोई वायुमंडल नहीं है | 250 K | नहीं के बराबर |
| मंगल (Mars) | कमजोर वायुमंडल जिसमें निम्न गैसें हैं: 95% $CO_2$, 2.7% $N_2$; 1.6% Ar, 0.13% $O_2$; तथा थोड़ी-सी CO और $H_2O$ | 218 K | 160 |
| वृहस्पति (Jupiter) | सशक्त वायुमंडल जो लगातार द्रव बनता रहता है। यहाँ $H_2$, He, $CH_4$ विद्यमान हैं। | — | — |
| शनि (Saturn) | सशक्त वायुमंडल जो लगातार द्रव बनता रहता है। यहाँ $H_2$, He, $CH_4$ विद्यमान हैं। | — | — |
| यूरेनस (Uranus) | सशक्त वायुमंडल जिसमें $H_2$, He विद्यमान हैं। | — | — |
| नेप्च्यून (Neptune) | वायुमंडल में $H_2$, He हैं। | — | — |
| प्लूटो (Pluto) | वायुमंडल में $CH_4$ और संभवत: Ar है। | 50-60 K | 20 से अधिक |

आरगन और न के बराबर आक्सीजन है। इसके ऊपरी सतह का औसत ताप 218 K है। अर्थात् पृथ्वी के ताप से लगभग 70 डिग्री कम ताप है। इसके वायुमंडल का द्रव्यमान 160 kg/m$^2$ है अर्थात् हमारे वायुमंडल से लगभग सौ गुना कम। अतएव यहाँ का वायुमंडल बहुत ठंडा, बहुत कमजोर और आक्सीजनरहित है।

सारांश यह है कि शुक्र (Venus) और मंगल (Mars), दो निकट ग्रहों के वायुमंडल को ध्यान से देखने से पता चलता है कि न तो वहाँ पर्याप्त आक्सीजन है और न ही जल। इसके अलावा शुक्र पर दाब व ताप दोनों बहुत अधिक हैं और मंगल पर दोनों बहुत कम। ग्रहों में केवल हमारी पृथ्वी पर पर्याप्त आक्सीजन तथा जल उपलब्ध हैं और वायुमंडल के ताप और दाब की सीमाएँ भी उपयुक्त हैं। इसी कारण से वर्तमान जीवन सम्भव हो सका।

स्वाभाविक है अपने इस जीवन देने वाले वायुमंडल की संरचना का हम विस्तार से अध्ययन करना चाहेंगे। इस वायुमंडल की संरचना का ज्ञान कब और कैसे हुआ? वास्तव में इसकी संरचना के खोज की एक बड़ी रोचक कहानी है। इन खोजों से पता चला है कि वायुमंडल के वर्तमान स्वरूप में जलवाष्प के. अलावा मुख्यतया $N_2$ तथा $O_2$ गैसें हैं। $CO_2$ के अलावा थोड़ी-सी मात्रा में नोबुल (noble) या निष्क्रिय गैसें He, Ne, Ar, Kr, Xe हैं। ये निष्क्रिय गैसें रासायनिक क्रियाएँ नहीं करती हैं, फिर उनकी खोज कैसे सम्भव हुई? इसका संक्षेप में विवरण अध्याय 1 में दिया गया है।

अब देखिये किसी और ग्रह के वायुमंडल में $O_2$ नहीं है। हमारे अद्भुत वायुमंडल में ही $O_2$ गैस है। हमारे वायुमंडल की उत्पत्ति कैसे हुई होगी? उसमें $O_2$ गैस कैसे बन गई होगी? कुछ अन्य ग्रहों पर $H_2$ तथा He गैसें विद्यमान हैं, परन्तु हमारे वायुमंडल में ये दोनों गैसें नहीं के बराबर क्यों हैं? इन प्रश्नों के संक्षिप्त उत्तर अध्याय 2 में हैं।

हमारे समस्त वायुमंडल का द्रव्यमान कितना है और कितनी ऊँचाई तक फैला है? यह अध्याय 3 में है। वर्तमान वायुमंडल के ताप पर ध्यान दीजिए। पृथ्वी का ताप भूमध्य रेखा के आस पास अधिक है और उत्तरी तथा दक्षिणी ध्रुवों पर कम। यदि हम औसत ताप लगभग 20°C मान लें तो यह स्पष्ट है कि वायुमंडल के इसी ताप के पास ही जीवन संभव है। जब यह जिज्ञासा होती है, कि यदि एक काल्पनिक गुब्बारे में बैठकर हम ऊपर जाएँ तो हमें वायुमंडल के तापमान में क्या परिवर्तन दिखाई देंगे? इसका उत्तर अध्याय 4 में दिया गया है।

हमारी पृथ्वी पर अंतरिक्ष से तरह-तरह की विकिरणों की बौछार हो रही है। ये विकिरणें कहाँ से आती हैं? स्पष्ट है कि इन विकिरणों का अधिकांश भाग सूर्य से आता है। कौन-कौन सी विकिरणें, वायुमंडल पार करके, हम तक पहुँचती हैं? घातक किरणें जैसे $\gamma$ (गामा) किरणें, X-किरणें आदि वायुमंडल में ही क्यों

रुक जाती हैं जिस कारण हम पृथ्वी पर सुरक्षित हैं? इसका संक्षिप्त अध्ययन अध्याय 5 में है। सूर्य की किरणों द्वारा हमारे वायुमंडल में भिन्न-भिन्न ऊँचाइयों पर क्या बदलाव आते हैं? सूर्य की किरणों का वायुमंडल के साथ प्रक्रिया के फलस्वरूप लगभग 30 किलोमीटर की ऊँचाई पर ओजोन, $O_3$, गैस कैसे बनती है? इस गैस की एक पतली-सी परत समस्त पृथ्वी पर छायी हुई है। यह परत पराबैंगनी किरणों को हम तक पहुँचने से कैसे रोकती है? दूसरे शब्दों में यह कवच का काम करती है वरना हम लोग चर्म कैंसर (Skin Cancer) से पीड़ित होते। इधर कुछ दशकों से मानवी करतूतों ने ओजोन परत में छेड़छाड़ की है और संकट आने वाला है इसका संक्षेप में विवरण अध्याय 6 और 7 में है।

यह तो सर्वविदित है कि हमारी पृथ्वी तथा वायुमंडल पर सूर्य की किरणें लगातार पड़ती हैं। इस कारण पृथ्वी तथा वायुमंडल दोनों को लगातार सौर ऊर्जा प्राप्त होती रहती है। प्रश्न यह है कि इसके फलस्वरूप पृथ्वी और वायुमंडल दोनों, दिन-पर-दिन गर्म क्यों नहीं होते जाते? वास्तव में पृथ्वी का औसत ताप स्थिर है। इसका यह अर्थ हुआ कि पृथ्वी तथा वायुमंडल को अलग-अलग जितनी ऊर्जा सूर्य से मिलती है उतनी ही ऊर्जा वे अंतरिक्ष को वापस लौटा देते होंगे। हमारी पृथ्वी और हमारा वायुमंडल यह संतुलन किस प्रकार बनाये रखते हैं? इस संतुलन के कारण ही पृथ्वी तथा वायुमंडल का औसत ताप हजारों वर्षों से स्थिर है और इसी अद्‌भुत गुण के कारण जीवन चल रहा है। इस अहम समस्या का अध्ययन हम अध्याय 8 में करेंगे।

इस संतुलन को बनाये रखने में हमारे अद्‌भुत वायुमंडल में थोड़ी-सी मात्रा में ($\approx 0.03\%$) विद्यमान $CO_2$ गैस बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। इसी से जुड़ा हुआ प्रश्न है कि हम श्वास क्रिया में $O_2$ गैस अपने अंदर लेकर $CO_2$ गैस बाहर निकालते हैं जिस कारण दिन-पर-दिन वायुमंडल में $O_2$ की कमी और $CO_2$ की वृद्धि होनी चाहिए। परन्तु हमारे अद्‌भुत वायुमंडल में इन दोनों का अनुपात सदियों से बदला नहीं है। पेड़-पौधों और प्राणियों द्वारा यह संतुलन किस प्रकार बना हुआ है? इस समस्या का अध्ययन हम अध्याय 9 में करेंगे।

इतनी थोड़ी-सी मात्रा में वायुमंडल में $CO_2$ गैस क्या करती है? यह बहुचर्चित हरित गृह प्रभाव (Green house effect) क्या है? हम यह देखेंगे कि यदि यह प्रभाव बढ़ जाए तो पृथ्वी का बड़ा भाग समुद्र में डूब जाएगा। यदि यह घट जाए तो सारी पृथ्वी पर बर्फ छा जाएगी। इस प्रभाव को संक्षेप में अध्याय 10 में बताया गया है।

अभी तक मानव यह समझता आया है कि स्वच्छ वायुमंडल और नीला आकाश तो प्रकृति की देन है और यह अद्‌भुत वायुमंडल सदैव ही ऐसा ही रहेगा। परन्तु औद्योगीकरण तथा मनुष्य की गतिविधियों और

करतूतों के कारण वायुमंडल प्रदूषित होता जा रहा है। वायुमंडल में किस प्रकार का प्रदूषण उत्पन्न हो रहा है? इस प्रदूषण का क्या प्रभाव होगा? इसका अध्ययन हम अध्याय 11 में करेंगे।

एक दृश्य जो हम सब देखते हैं वह यह है कि कभी आँधी चलती है, तो कभी तूफान उठते हैं और कभी मानसून की वर्षा होती है आदि। यह क्यों? ये सब दृश्य भी इसी पृथ्वी पर और इसी अद्‌भुत वायुमंडल में होते हैं। $O_2$ के अलावा वाष्प भी हमारे वायुमंडल में ही विद्यमान है। इन विषयों पर संक्षेप में अध्याय 12 में चर्चा की गई है।

अब एक प्रश्न और उठता है कि हमारा यह अद्‌भुत वायुमंडल पृथ्वी पर रुका क्यों है और स्थिर क्यों है? वायुमंडल की गैसों के अणु उड़कर सदैव के लिए अंतरिक्ष में क्यों नहीं चले जाते? यह हमारी पृथ्वी और वायुमंडल की गैसों के गुणों के कारण है। यदि ऐसा न होता तो दिन-पर-दिन यह वायुमंडल गायब होता जाता। इसका अध्ययन अध्याय 13 में संक्षेप में करेंगे।

अंत में यह याद दिलाना आवश्यक है कि हमारी अनोखी पृथ्वी और अद्‌भुत वायुमंडल दोनों प्रदूषित और मैले होते जा रहे हैं। सबका धर्म है कि इसे स्वच्छ रखना। ये पंक्तियाँ इस समय याद दिलाने योग्य हैं:

हम लाये हैं तूफान से ''किश्ती'' निकालकर।<br>
इस ''किश्ती'' को रखना मेरे बच्चो सँभालकर॥

यह ''किश्ती'' है हमारी अनोखी पृथ्वी और अद्‌भुत वायुमंडल की, जो अब प्रदूषण के सागर में डाँवाडोल हो रही है। पृथ्वी के जल तथा वायुमंडल के प्रदूषण को रोकना समस्त संसार का धर्म है और जिम्मेदारी है। विज्ञान और टैक्नोलॉजी के बिना यह संभव नहीं है। अतएव अपने वायुमंडल को भलीभाँति समझना सबके लिए आवश्यक है।

अध्याय 1

# हमारे वायुमंडल की संरचना – उत्कृष्ट गैसों की खोज

## वायुमंडल की संरचना

वायुमंडल के अध्ययन में सबसे पहले यह प्रश्न उठता है कि हमारे वायुमंडल की संरचना क्या है? यह हवा क्या है और किन तत्वों से बनी है? पुराने लोग यह मानते आये हैं कि हमारा शरीर पाँच मूल तत्वों से बना है। वे हैं पृथ्वी, जल, हवा (वायु), आकाश और अग्नि। इसके अनुसार हवा को एक मूल तत्व माना गया था। अर्थात् हवा एक ऐसा पदार्थ है जो किसी अन्य सरल पदार्थ से मिलकर नहीं बना है। यह विश्वास लगभग 17वीं शताब्दी तक चलता रहा। उस समय जब रासायनिक क्रियाओं का विशेष अध्ययन किया गया, तब पता चला कि हवा कई गैसों का मिश्रण है। इस खोज का श्रेय कई वैज्ञानिकों को है जिनमें प्रमुख हैं जोजेफ प्रीस्टली (Joseph Priestley) (1773–1804) तथा हेनरी कैवेन्डिश (Henry Cavendish) (1731–1810)। इनकी खोजों से पता चला कि हवा में लगभग 80 प्रतिशत नाइट्रोजन ($N_2$), 20 प्रतिशत आक्सीजन ($O_2$) गैस और थोड़ी-सी मात्रा में कार्बन डाइआक्साइड ($CO_2$) गैस है। हवा में पानी के वाष्प की मात्रा मौसम के हिसाब से जगह-जगह पर घटती-बढ़ती रहती है। हवा की संरचना के खोज का इतिहास बहुत रोचक है। संक्षेप में इस प्रकार् है:

कैवेन्डिश के मन में यह प्रश्न उठा कि यदि हवा को $CO_2$ तथा पानी की भाप से बिलकुल मुक्त कर दिया जाए तो क्या नाइट्रोजन और आक्सीजन के अलावा कुछ और बचेगा? उन्हें यह पता था कि आक्सीजन और नाइट्रोजन कुछ विशेष तत्वों के साथ क्रियाशील हैं। अतएव रासायनिक क्रियाओं द्वारा नाइट्रोजन और आक्सीजन को हवा से निकाला जा सकता है। इस ध्येय के लिए कैवेन्डिश ने एक बहुत सुन्दर उपाय सोचा। वह यह कि बाहर से उपयुक्त रसायन डालकर नाइट्रोजन और आक्सीजन से क्रिया कराने के बजाय, क्यों न नाइट्रोजन और आक्सीजन की आपसी क्रिया कराई जाए। अतएव उन्होंने पहले $CO_2$ तथा पानी से हवा को मुक्त किया। इस मुक्त हवा में थोड़ी-सी और आक्सीजन मिलाकर उस मिश्रण में बिजली की चिनगारी (Spark) भेजी। इस कारण पूरे नाइट्रोजन की आक्सीजन से प्रक्रिया हुई और फलस्वरूप नाइट्रिक आक्साइड, NO तथा नाइट्रोजन डाइआक्साइज $NO_2$ गैसें बनीं। अब इन दोनों गैसों को क्षार (alkali) के घोल में अवशोषित (absorb) कर दिया। चूँकि कुछ आवश्यकता से ज्यादा आक्सीजन की मात्रा मिलाई गई थी, इसलिए अब कुछ आक्सीजन बची उसको पाइरोगैलोल (Pyrogallol) में घुलाकर हटाया गया। इसके अतिरिक्त एक दूसरी तरकीब और थी: उस बची हुई आक्सीजन में सल्फर (S) जलाकर सल्फर डाइआक्साइड ($SO_2$) बनाया जाए और उसको भी क्षार के घोल में अवशोषित करा लिया जाए। अर्थात् इस तरह उन्होंने हवा की सारी नाइट्रोजन तथा सारी आक्सीजन का अवशोषण कर लिया। उनको एक आश्चर्यजनक परिणाम मिला। सब प्रक्रिया के बाद भी थोड़ी-सी गैस बच गई। यह देखा गया कि हवा में चाहे कितनी भी देर तक बिजली की चिनगारी भेजी जाए अन्त में हमेशा थोड़ी-सी गैस बच ही जाती थी। बची हुई गैस सदैव प्रारंभिक गैस का लगभग 1/120वाँ भाग होती थी। कैवेन्डिश को यह नहीं पता चला कि हवा से नाइट्रोजन तथा आक्सीजन को पूरी तरह हटाने के बाद यह कौन-सी गैस बचती है? इस रहस्य का लगभग 100 साल बाद पता चला जब वैज्ञानिकों ने बताया कि कैवेन्डिश की बची हुई गैस में आरगन (Argon) तथा अन्य उत्कृष्ट (noble) या अक्रिय गैसें थीं। ये गैसें रासायनिक दृष्टि से निष्क्रिय थीं अतएव रासायनिक क्रियाओं द्वारा हटाई नहीं जा सकीं। इन उत्कृष्ट गैसों की खोज का श्रेय विशेष तौर से लार्ड रैले, जॉन विलियम स्ट्रट (Lord

Rayleigh, John William Strutt) तथा सर विलियम रैमजे (Sir William Ramsey) को है। यह लम्बी कहानी संक्षेप में इस प्रकार है:

लार्ड रैले ने 1882 में आक्सीजन तथा हाइड्रोजन का घनत्व नापने का प्रयोग शुरू किया। वे जानना चाहते थे कि क्या सब मूल तत्वों के परमाणु भार (atomic weight) को हाइड्रोजन के परमाणु भार से भाग कर देने पर पूर्णांक प्राप्त होगा? उन्हें O:H का अनुपात 15.882:1 प्राप्त हुआ। इस खोज को आगे बढ़ाकर उन्होंने नाइट्रोजन का घनत्व नापा। एक विचित्र बात उनके सामने आई। उन्होंने शुद्ध नाइट्रोजन दो प्रकार से बनाई। पहली तो रासायनिक क्रिया से। दूसरी वायुमंडल से पूर्णतया आक्सीजन, कार्बन डाइआक्साइड तथा जल के भाप को हटाकर। उन्होंने देखा कि वायुमंडल से प्राप्त नाइट्रोजन का औसत घनत्व 1.2555 ग्राम प्रति लीटर है। दूसरी ओर रासायनिक क्रियाओं से प्राप्त शुद्ध नाइट्रोजन का औसत घनत्व 1.2505 ग्राम प्रति लीटर पाया गया। वायुमंडल से प्राप्त नाइट्रोजन, रासायनिक नाइट्रोजन की अपेक्षा सदैव 0.5 प्रतिशत भारी होती है। उन्होंने नाइट्रोजन को कई और रासायनिक स्रोतों से बनाया। जैसे शुद्ध नाइट्रिक आक्साइड, अमोनियम नाइट्रेट, अमोनियम नाइट्राइट, यूरिया (Nitric Oxide, ammonium nitrate, ammonium nitrite, urea) आदि। हर बार बराबर यह पाया गया कि वायुमंडल से प्राप्त नाइट्रोजन रासायनिक स्रोतों से बनी शुद्ध नाइट्रोजन की अपेक्षा लगभग 0.5 प्रतिशत भारी होती है। परन्तु ऐसा क्यों है, पता नहीं चल रहा था।

इस स्थिति में सर विलियम रैमजे ने इस समस्या को सुलझाने का प्रयास किया। उनका विचार था कि वायुमंडल की हवा में कोई भारी गैस अल्प मात्रा में उपस्थित है। इस अध्ययन के लिए उन्होंने वायुमंडल की गैस से पूर्णतया आक्सीजन हटाने के बाद जो नाइट्रोजन प्राप्त हुई उसे मैगनीशियम (Mg) के साथ गरम किया। तृप्त Mg बड़ी क्षमता के साथ नाइट्रोजन से क्रिया करता है। इस रासायनिक क्रिया द्वारा वायुमंडल से पूर्णतया आक्सीजन तथा नाइट्रोजन हटाने के बाद जो गैस बची उसका घनत्व नापा गया। इसका घनत्व रासायनिक नाइट्रोजन के घनत्व से थोड़ा–सा अधिक पाया गया। फिर इस गैस का स्पैक्ट्रम

(Spectrum) लेकर उसकी जाँच की गई। इस गैस का स्पैक्ट्रम पृथ्वी पर समस्त जाने-पहचाने तत्वों के स्पैक्ट्रम से भिन्न पाया गया। इधर लार्ड रैले ने भी कैवेन्डिश का प्रयोग फिर से किया। दोनों इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि वायुमंडल में कोई नई गैस है। इस गैस का परमाणु भार (atomic weight) आक्सीजन को 16 मानकर 39.9 आँका गया। चूँकि यह पाया गया कि यह गैस रासायनिक क्रियाओं में निष्क्रिय थी, इसलिए इसे आरगन (Argon), जिसका अर्थ है "the lazy one" आलसी या अनुपयोगी गैस, कहा गया।

रैमजे को अब यह लगने लगा कि वायुमंडल में अक्रिय गैसों का एक पूर्ण परिवार है जिसका आरगन एक सदस्य है। रैमजे तथा ट्रैवर्स ने अगले 6 सालों में आवर्त सारणी (Periodic table) में विद्यमान इस पूरे परिवार को खोज निकाला। उन्होंने इसके लिए एक नया तरीका प्रयोग किया। उस समय द्रवित वायु (liquid air) उपलब्ध हो गई थी। उन्होंने द्रवित वायु ली और उसे उबलने दिया ताकि हल्के अंश, आक्सीजन और नाइट्रोजन उड़ जाएँ। बचे हुए भारी अंशों के द्रव का प्रभाजी आसवान (fractional distillation) या विसरण (diffusion) किया गया। बची हुई गैस के स्पैक्ट्रम विश्लेषण से जो गैस खोजी गई उसे क्रिप्टान (Krypton) कहा गया। क्रिप्टान का अर्थ ग्रीक भाषा में ''छुपा हुआ'' है। इसका परमाणु भार (atomic weight) 84 आँका गया। इसी प्रकार (प्राप्त) आरगन गैस को आसवित (distil) करने से उन्हें दो और नई गैसें मिलीं जिनमें एक आरगन से भारी और दूसरी हल्की थी। एक गैस का परमाणु भार (atomic weight) 20 आँका गया। इसे नियोन (Neon) कहा गया। नियोन का अर्थ है ''नवीन''। दूसरी गैस का परमाणु भार 128 आँका गया। इसे जेनान (Xenon) कहा गया। जेनान का अर्थ है ''अपरिचित''। इस परिवार में अब बची हीलियम। इस गैस का नाम ग्रीक शब्द (helios) पर रखा गया है जिसका अर्थ सूर्य है। इस तत्व का आविष्कार सर्वप्रथम सूर्य स्पैक्ट्रम के अध्ययन करते समय हुआ था।

सूर्य ग्रहण के समय बाहरी भाग क्रोमोस्फीयर (chromosphere) के स्पैक्ट्रम का अध्ययन करते समय यह पाया गया कि सोडियम (Sodium) के स्पैक्ट्रम की पीली लाइनें ($\lambda$ = 5890 Å, 5896 Å), जिन्हें $D_1$ तथा $D_2$ लाइनें कहा जाता है, के पास एक और

स्पैक्ट्रम लाइन थी जिसे $D_3$ लाइन कहा गया। परन्तु पृथ्वी पर पाये गए किसी तत्व के स्पैक्ट्रम में यह लाइन नहीं मिली। इसलिए इस नये तत्व को हीलियम (helium) कहा गया। सन् 1881 में इटली के पालमीयरी ने यह $D_3$ लाइन माउंट वेसुवियस (Mount Vesuvius) से प्राप्त एक ठोस खनिज पदार्थ के स्पैक्ट्रम में देखी। अन्त में रैमजे ने इस गैस के कुछ कण एक खनिज क्लेवाइट (clevite) से प्राप्त आरगन गैस में पाये। 1900 में रैमजे तथा ट्रैवर्स ने वायुमंडल से प्राप्त नियोन से भी हीलियम गैस पाई। इस तरह उत्कृष्ट गैसों के पूरे परिवार He, Ne, Ar, Kr, Xe की पहचान कर ली गई। इन उत्कृष्ट गैसों का सबसे भारी अन्तिम सदस्य रेडान (Radon) या थोरान (Thoron 220) है। यह वायुमंडल में नहीं होता है। यह रेडियोधर्मी थोरियम (Thorium) से प्राप्त होता है।

पृथ्वी की सतह पर शुष्क वायु की संरचना इस प्रकार है जो सारणी 1.1 में दी गई है और चित्र 1.1 में दिखाई गई है।

**सारणी 1.1**

| | | |
|---|---|---|
| नाइट्रोजन | $N_2$ | 78.084 प्रतिशत (आयतन के अनुसार) |
| आक्सीजन | $O_2$ | 20.946 प्रतिशत (आयतन के अनुसार) |
| आरगन | Ar | 0.934 प्रतिशत (आयतन के अनुसार) |
| कार्बन डाइआक्साइड | $CO_2$ | 0.032 प्रतिशत (आयतन के अनुसार) |
| नियोन | Ne | $1.818 \times 10^{-3}$ प्रतिशत (आयतन के अनुसार) |
| हीलियम | He | $5.24 \times 10^{-4}$ प्रतिशत (आयतन के अनुसार) |
| क्रिप्टान | Kr | $1.14 \times 10^{-4}$ प्रतिशत (आयतन के अनुसार) |
| जेनान | Xe | $9.0 \times 10^{-6}$ प्रतिशत (आयतन के अनुसार) |
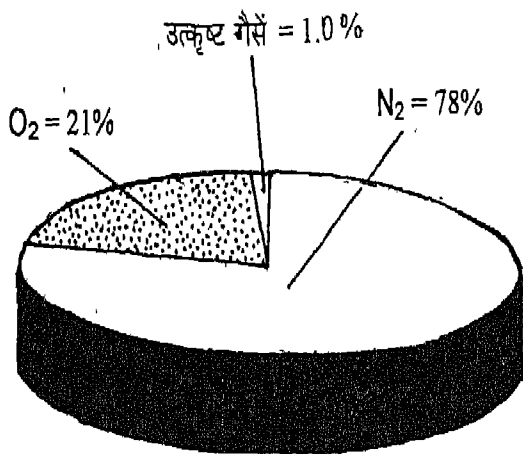
चित्र 1.1

यह विशेष तौर से नोट करने की बात है कि वायु में आरगन की मात्रा $CO_2$ की अपेक्षा लगभग 30 गुनी अधिक है। वायुमंडल में इसके अलावा बहुत थोड़ी-सी मात्रा में मीथेन तथा नाइट्रस आक्साइड तथा हाइड्रोजन गैस भी होती है।

जैसा कि हम जानते हैं हवा में धूल के कण उड़ते हैं जिसका जिक्र बाद में करेंगे। संक्षेप में यह है वायुमंडल की संरचना के खोज की रोचक कहानी।

## अध्याय 2

# वायुमंडल में हाइड्रोजन, हीलियम गैसों का अभाव-वायुमंडल की उत्पत्ति और समय के साथ बदलाव

हम जान चुके हैं कि वायुमंडल के 99 प्रतिशत भाग में केवल दो गैसें हैं। वे हैं नाइट्रोजन तथा आक्सीजन। शेष एक प्रतिशत भाग में अन्य गैसें हैं जो अक्रिय हैं। प्रश्न यह है कि ऐसा कैसे हुआ? विशेष तौर पर हाइड्रोजन और हीलियम गैसें वायुमंडल में क्यों नहीं हैं? आक्सीजन गैस कहाँ से आई और कैसे उसकी उत्पत्ति हुई। कहीं किसी और ग्रह पर तो आक्सीजन गैस नहीं है।

अवश्य ही इस पृथ्वी का वायुमंडल इसकी उत्पत्ति के इतिहास पर निर्भर है। जब शुरू में पृथ्वी बनी तो बहुत गर्म थी। मान लीजिए उस समय पृथ्वी पर सभी मूल तत्व (elements) भिन्न-भिन्न अनुपात में उपस्थित थे। उस समय के ताप तथा दाब पर उन मूल तत्वों में आपस में रासायनिक प्रक्रिया हुई होगी। इस क्रिया के फलस्वरूप बने भारी यौगिक पदार्थ नीचे बैठ गये होंगे और इस तरह वे पृथ्वी का भीतरी भाग बन गये होंगे। साथ ही उससे हल्के पदार्थ पृथ्वी की बाहरी पपड़ी (Outer crust) बन गये होंगे। रासायनिक क्रिया के बाद जो गैसें बनी होंगी उनसे उस समय का वायुमंडल बना होगा। अवश्य ही वायुमंडल में बहुत मात्रा में पानी की भाप रही होगी जिसने ठंडा होकर समुद्र और महासागर का रूप ले लिया होगा।

इसके अलावा कुछ ऐसी गैसें बनीं होंगी जो अम्ल आक्साइड (acidic oxide) हैं जैसे सल्फर डाइआक्साइड ($SO_2$)। वे समुद्र के जल से अभिक्रिया करके अम्ल बन गई होंगी। ये अम्ल पृथ्वी के ऊपरी भाग (Outer crust) से अभिक्रिया करके लवण (Salts) बन गये होंगे। इनमें से जो लवण पानी में घुलनशील थे वे समुद्र में घुल गये होंगे और शेष ने अवसादी शैल (Sedimentary rocks) का रूप धारण कर लिया होगा।

इसके बाद, अब विचार कीजिए कि आवर्त सारणी (periodic table) में वे कौन से मूल तत्व (elements) हैं जो आज के ताप व दाब पर गैस के रूप में हैं? वे हाइड्रोजन, हीलियम, नाइट्रोजन, आक्सीजन तथा शेष निष्क्रिय गैसें (Ne, Ar, Kr, Xe) हैं। इस सूची में हम देखते हैं कि वायुमंडल में बाकी सब गैसें विद्यमान हैं परन्तु हाइड्रोजन तथा हीलियम वर्तमान वायुमंडल में न के बराबर हैं। यदि हम यह मान लें कि प्रारंभ में ये गैसें भी वायुमंडल में थीं तो प्रश्न है कि वे कहाँ गईं? उत्तर यह है कि धीमे-धीमे अंतरिक्ष (Outer space) की ओर ये गैसें निकल कर चली गई होंगी। अब प्रश्न यह है कि हाइड्रोजन और हीलियम गैसें ही क्यों पलायमान होकर अंतरिक्ष की ओर चली गईं? बाकी और गैसें जैसे आक्सीजन, नाइट्रोजन क्यों नहीं गईं? इसका क्या कारण है?

इसके लिए हमें दो बातें समझनी आवश्यक हैं। पहले, किसी वस्तु को पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण को पार करके अंतरिक्ष में चले जाने के लिए एक पलायन वेग (escape velocity) की आवश्यकता होती है। अर्थात् यदि हम किसी वस्तु को इस विशेष वेग से फेंकेंगे तब वह वापस लौटकर पृथ्वी पर नहीं आयेगी। अतएव हम पहले यह गणना करेंगे कि वह वेग कितना है? दूसरी बात यह है कि हमें पता है कि प्रत्येक गैस के अणु बड़ी तेजी से सदैव चलायमान हैं, और आपस में बराबर टकराते रहते हैं (चित्र 2.1)। हमें पृथ्वी की सतह के ताप पर इन गैसों के अणुओं की औसत वेग की गणना करनी होगी। स्पष्ट है कि यदि यह औसत वेग पलायन वेग के निकट होगा तो उनमें से कुछ अणुओं का वेग पलायन वेग के बराबर या अधिक होगा। ऐसे अणु पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण को पार करके अंतरिक्ष की ओर चले जायेंगे और धीरे-धीरे वायुमंडल में गायब हो

जायेंगे। अब हम यह दिखायेंगे कि यह पलायमान केवल हाइड्रोजन तथा हीलियम के अणुओं के लिए ही सम्भव है।

विचार कीजिए कि पृथ्वी पर कोई भी वस्तु चाहे वह भारी हो या हल्की, क्यों टिकी हुई है? इसका कारण है पृथ्वी का गुरुत्वाकर्षण। यही गुरुत्वाकर्षण पूरे वायुमंडल को पृथ्वी के साथ रखता है। इसका अर्थ यह हुआ कि पृथ्वी का गुरुत्वाकर्षण इन दो हल्की गैसों (हाइड्रोजन तथा हीलियम) को पकड़कर रखने में पूरी तरह सक्षम नहीं है। अतएव वे धीरे-धीरे अंतरिक्ष (Outer space) की ओर निकल भागी होंगी। यह ध्यान देने योग्य बात है कि वृहस्पति (Jupiter) तथा शनि (Saturn) का गुरुत्वाकर्षण अधिक है और उनके वायुमंडल में हाइड्रोजन तथा हीलियम प्रचुर मात्रा में विद्यमान है। इसी कारण सूर्य में भी हाइड्रोजन तथा हीलियम प्रचुर मात्रा में है।

अब इसी बात को हम जरा और ध्यान से विचार कर सकते हैं। एक वस्तु लीजिए जिसका द्रव्यमान $m$ है। न्यूटन के द्वितीय नियम के अनुसार पृथ्वी उसे $mg$ बल से अपने केन्द्र की ओर आकर्षित करती है। यह बल $mg$ न्यूटन के बराबर है, जब द्रव्यमान $m$ किलोग्राम है और गुरुत्वीय त्वरण (acceleration due to gravity), $g = 9.8$ m/s$^2$ है। पृथ्वी की सतह पर टिकी हुई वस्तुएँ पृथ्वी के केन्द्र से $R$ मीटर की दूरी पर हैं जहाँ $R$ पृथ्वी की त्रिज्या है जो लगभग 6400 किलोमीटर है। अतः इस वस्तु की स्थितिज ऊर्जा (potential energy) = $mgR$ जूल (Joule) है।

यदि हम इस वस्तु को वेग $v$ से ऊपर फेंकें तो वह $h$ ऊँचाई तक जाने के बाद वापस लौटने लगेगी। हम $h$ की गणना इस समीकरण से कर सकते हैं।

$$v^2 = 2gh$$

यदि हम वेग $v$ बढ़ाते जाएँ तो ऊँचाई $h$ बढ़ती जायेगी। यहाँ तक कि यदि हम उस वस्तु की गतिज ऊर्जा $1/2\ mv^2$ को उसकी स्थितिज ऊर्जा $mgR$ के बराबर कर दें तो वह वस्तु पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण से बाहर चली जायेगी और वापस नहीं लौटेगी। इसे

पलायन वेग (escape velocity) कहते हैं जिसकी गणना निम्न समीकरण से की जा सकती है:

$$\frac{1}{2}mv^2 = mgR$$

$$\therefore \quad v = \sqrt{2gR} = \sqrt{2(9.8)(6400 \times 10^3)}$$

$$= 11200 \text{ m/s}$$

$$= 11.2 \text{ km/s}$$

इसका अर्थ यह हुआ कि यदि हाइड्रोजन तथा हीलियम के अणुओं (molecules) को किन्हीं परिस्थितियों में यह वेग 11.2km/s मिल जाए तो फिर वे अंतरिक्ष की ओर चले जायेंगे। प्रश्न यह है कि क्या यह केवल हाइड्रोजन तथा हीलियम के लिए ही संभव है?

गैस के अणुओं की गति की गणना हम गतिकी सिद्धांत (kinetic theory of gases) के अनुसार कर सकते हैं। इस सिद्धांत के अनुसार हर गैस के अणु सदैव गतिशील हैं और भिन्न-भिन्न वेग से सब दिशाओं में दौड़ रहे हैं। परन्तु गैस के अणुओं की संख्या इतनी अधिक* है कि पृथ्वी के ताप व दाब पर, थोड़ी दूर चलने पर किसी न किसी अणु से टक्कर हो ही जाती है। उसके बाद फिर उनका वेग तथा दिशा बदल
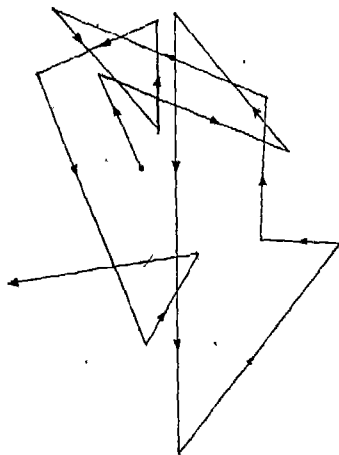
चित्र 2.1

* 2 ग्राम हाइड्रोजन, या 4 ग्राम हीलियम, या 28 ग्राम नाइट्रोजन, या 32 ग्राम आक्सीजन में इन अणुओं की संख्या $6.02 \times 10^{23}$ है। यह एवोगैड्रो स्थिरांक (Avogadro's constant) कहलाता है।

जाती है। अतएव किसी एक अणु की गति का पथ कुछ इस प्रकार होगा जैसा चित्र 2.1 में दिखाया गया है। कुछ थोड़े से अणु काफी धीमी चाल से और कुछ थोड़े से बहुत तेज चाल से चलते हैं। पर अधिकांश अणुओं का एक औसत वेग $v$ है। इस वेग $v$ की गणना गैसों का गतिकी सिद्धांत के आधार* पर की गई है। भिन्न-भिन्न अणुओं का औसत वेग $v$ इस प्रकार है:

$H_2$ का औसत वेग $v = 1.8$ km/s
He का औसत वेग $v = 1.3$ km/s
$N_2$ तथा $O_2$ दोनों का औसत वेग $v = 0.5$ km/s

इन अंकों को देखने से तो यह लगता है कि ये सब वेग पलायन वेग से काफी कम हैं। अतएव पृथ्वी अपने वायुमंडल में इन सभी गैसों को पकड़कर रखने में सक्षम होनी चाहिए। परन्तु वास्तव में ये गैसें धीरे-धीरे अंतरिक्ष की ओर सदैव के लिए खिसक जाती हैं विशेष तौर पर $H_2$ तथा He के अणु। इसके दो कारण हैं। पहली ध्यान देने योग्य बात यह है कि ये वेग अणुओं के औसत वेग हैं। कुछ अणुओं का वेग कम और कुछ का वेग इससे अधिक होगा। मैक्सवेल (Maxwell) तथा बोल्ट्ज़मैन (Boltzmann) ने यह गणना की है कि एक

---

* गतिकी सिद्धांत के आधार पर यह पाया गया कि यह वेग उस गैस के केल्विन ताप और उसके अणु द्रव्यमान पर निर्भर है। $v$ की गणना इस समीकरण से की जा सकती है:

$$v = \sqrt{\frac{3kT}{m}}$$

जहाँ $k$ को बोल्ट्ज़मैन स्थिरांक (Boltzmann constant) कहते हैं। इसका मान $1.38 \times 10^{-23}$ J/K है और $m$ उस गैस के एक अणु का द्रव्यमान है। हाइड्रोजन तथा हीलियम के अणुओं का द्रव्यमान इस प्रकार है:

$$m_{H_2} = 2\,(1.67 \times 10^{-27})kg;\; m_{H_e} = 4\,(1.67 \times 10^{-27})kg$$

अतएव 0°C = 273 K ताप पर हाइड्रोजन अणु का औसत वेग $v$

$$v = \sqrt{\frac{3\left(1.38 \times 10^{-23}\right)(273)}{2\left(1.67 \times 10^{-27}\right)}} = 1840 \text{ m/s} = 1.8 \text{ km/s}$$

इसी प्रकार गणना करने पर हीलियम का औसत वेग 1.3km/s है। नाइट्रोजन तथा आक्सीजन अणुओं का यह वेग 0.5 km/s है।

दिये गए ताप पर किसी अणुओं के समूह में भिन्न-भिन्न वेगों वाला भाग (fraction) कितना होगा? यह स्पष्ट है अधिकतर अणुओं का वेग तो यही औसत वेग होगा। प्रश्न था कि वह भाग जिसका वेग इससे अधिक होगा वह कितना होगा? उन्होंने दिखाया कि अणु का जितना ही कम द्रव्यमान होगा, तेज वेग वाले अणुओं का अनुपात उतना ही अधिक* होगा।

इसलिए तेज वेग वाला भाग $H_2$ में सबसे अधिक और He में उससे कुछ कम और $N_2$ तथा $O_2$ में काफी कम। इसलिए $H_2$ तथा He के कुछ अणुओं के निकल भागने की संभावना $O_2$ तथा $N_2$ अणुओं की अपेक्षा अधिक है। दूसरी एक और बात है कि वायुमंडल के बहुत ऊपरी भाग का ताप काफी अधिक होता है, यहाँ तक कि 1200K तक हो सकता है। (आगे चलकर हम अध्ययन करेंगे कि वायुमंडल के ऊपरी भाग में ताप किस प्रकार बदलता है)। यदि पृथ्वी की सतह का ताप 300K मान लिया जाये तो 1200K ताप पर अणुओं का औसत वेग ($v = \sqrt{3kT/m}$ के अनुसार) दोगुना होगा। अतएव इस ताप पर कुछ अणुओं का वेग पलायन वेग तक पहुँच जाने की संभावना और अधिक हो जायेगी।

अब यह स्पष्ट है कि भिन्न-भिन्न तारों या ग्रहों पर पलायन वेग भिन्न-भिन्न होगा क्योंकि यह उनके गुरुत्वाकर्षण पर निर्भर करेगा। परन्तु अणुओं का औसत वेग उसके ताप और उसके द्रव्यमान पर ही निर्भर है। इसलिए बड़े-बड़े ग्रह या तारे जिनका गुरुत्वाकर्षण अधिक है, अपने वायुमंडल में हाइड्रोजन $H_2$, तथा हीलियम He, को पकड़कर रखने में सक्षम हैं। उदाहरण है: शनि और वृहस्पति ग्रह। सूर्य पर भी $H_2$ तथा He प्रचुर मात्रा में है। बहुत कम गुरुत्वाकर्षण के कारण चाँद पर तो कोई गैस टिक नहीं सकती अतः चाँद पर वायुमंडल नहीं है।

---

* एक उदाहरण से इस बात को स्पष्ट किया जा सकता है। पहले हाथियो के चलते हुए एक झुंड को देखिए। मान लीजिए उनका औसत वेग 2km प्रति घंटा है। उनमें कुछ धीमे और कुछ जरा तेज चाल से चल रहे होंगे। हाथियों का वह भाग जो काफी तेज चल रहा हो और दौड़ रहा हो, बहुत ही छोटा होगा। इसके विपरीत अब बकरियों के चलते हुये झुड को देखिए। मान लीजिए उनका औसत वेग 4km प्रति घटा है। कुछ बकरियाँ तो धीमे परन्तु कुछ तेजी से भाग दौड़ रही होंगी। अर्थात् अपेक्षाकृत वह भाग जो तेजी से चल रहा होगा, बकरियों में अधिक होगा। $O_2$ के अणु हाथी की तरह और $H_2$ के अणु बकरी की तरह है।

## वायुमंडल की संरचना का समय के साथ बदलाव

अब एक बहुत रोचक प्रश्न उठता है कि क्या हमारे वायुमंडल की संरचना आदिकाल से अब तक किन्हीं कारणों से बदलती रही है? विशेष रूप से $CO_2$ तथा $O_2$ की मात्रा किस प्रकार बदलती रही है? इस विषय पर वैज्ञानिकों के क्या विचार हैं? ये विचार इस प्रकार हैं:

### *300 करोड़ वर्ष पहले*

एक नया विचार आजकल रखा गया है कि $3 \times 10^9$ वर्षों पहले वायुमंडल में कोई आक्सीजन गैस नहीं थी और सूर्य भी लगभग 25 प्रतिशत कम चमकदार था। वायुमंडल में बहुत अधिक मात्रा में $CO_2$ थी, शायद आजकल के मुकाबले में 200 गुना अधिक। चूँकि $CO_2$ गैस सौर ऊर्जा की लघु तरंगों का अवशोषण नहीं करती अतएव सूर्य की लघु तरंगें पृथ्वी पर बराबर पड़ती रहीं। उस समय समस्त पृथ्वी का ताप उष्ण कटिबंधीय ताप था। इस ताप पर आदिकालिक समुद्रों में बहुत छोटा जीव ही जो एक-सेल-जीव (one cell organism) था, जीवित रह सका। ज्वालामुखी (Volcano) से निकली सल्फ्यूरस रसायन (Sulphurous chemicals) तथा सूर्य प्रकाश से इसने अपना पोषण किया। उसने इस क्रिया में आक्सीजन बाहर निकाली। यह सिलसिला चलता रहा। आक्सीजन उसके लिए घातक थी। अंत में वह जीव (Organism) तथा और सब जीव मर गये और हमारे वायुमंडल को आक्सीजन बनाकर दे गये।

### *10 करोड़ वर्ष पहले*

एक और विचार वैज्ञानिकों ने रखा है कि $10^8$ वर्षों पहले पृथ्वी आजकल के मुकाबले में काफी गर्म थी। उसका ताप शायद आजकल के पृथ्वी के ताप से 3°C से 6°C अधिक था। अतएव उत्तरी तथा दक्षिणी ध्रुवों पर जमी हुई बर्फ का भंडार नहीं था। उस समय सारी पृथ्वी की भूमि जुड़कर एक विशाल भूमि का टुकड़ा थी। जब यह पृथ्वी का टुकड़ा टूटकर कई

महाद्वीपों में बँट गया तब ज्वालामुखी फूटे और गहरे समुद्र में दरारें हो गई। इसने सारे वायुमंडल में भाप और $CO_2$ भर दिया। इससे हरित गृह प्रभाव (green house effect) बढ़ गया (हरित गृह प्रभाव के बारे में हम बाद में अध्ययन करेंगे)। उस समय के दृश्य की यह कल्पना की गई है। उस समय पृथ्वी पर डायनोसोर (dianosour) विचरते थे और ग्रीनलैंड तक वे ही घूमते थे।

## 18 हजार वर्ष पहले

उपग्रहों द्वारा यह पता लगाया गया है कि आजकल भी लगभग 10 प्रतिशत पृथ्वी का भाग हिमनदीय (glacial) बर्फ से ढका हुआ है। ये हिमनद बर्फ के बहुत विशाल ढेर होते हैं जो बहुत धीमी गति से फिसलते हैं। उदाहरण के तौर पर दक्षिणी ध्रुव के हिमनद की गति लगभग 8–9 मीटर प्रति वर्ष उत्तर की ओर है। हिमनद जब चट्टानों पर खिसकते हैं तब उनको चूरा कर देते हैं। यह चूरा अवसाद (तलछट (Sediment)) के रूप में समुद्रों तक चला जाता है। यह माना जाता है कि हमारी पृथ्वी अपने जीवन काल में बर्फ से कई बार ढकी गई होगी।

भू-वैज्ञानिक समय (geological time) के निकटतम युग (epoch) को प्लाइस्टोसीन (pleistocene) कहते हैं जो $1.6 \times 10^6$ वर्षों से दस हजार वर्ष पूर्व तक माना जाता है। इस युग में कई बार हिमानी युग (glacial periods) हुए थे। इनके बीच-बीच में गर्मी के भी युग थे। हिमानी निक्षेपों (glacial deposits) की भिन्न-भिन्न परतों के अध्ययन से इसके विषय में पता चलता है। परतों में दफनाये लकड़ी के टुकड़ों की रेडियोधर्मी कार्बन-काल-निर्धारण-विधि (radio active carbon dating) के द्वारा उनकी उम्र काफी यथार्थता से नापी जा सकती है। यह अनुमान लगाया गया है कि सबसे आधुनिक हिमानी युग लगभग 18000 वर्ष पहले हुआ था। उस समय समुद्र की सतह 130 मीटर घट गई थी क्योंकि जल की बहुत विशाल मात्रा बर्फ बन गई थी। अनुमान है उस समय $7 \times 10^7$ घन किलोमीटर बर्फ थी जो आजकल की बर्फ की मात्रा से लगभग 3 गुनी थी। यह हिमनदन (glaciation) क्यों

होता है? इस पर कई विचार हैं। एक सिद्धांत पृथ्वी का सूर्य के चारों ओर चक्कर लगाने के कक्ष में, तथा अपनी धुरी में घूमने में कुछ फेर बदल, के कारण होता है।

उस समय पृथ्वी का औसत ताप आजकल की अपेक्षा 3°C कम रहा होगा। वायुमंडल में $CO_2$ की मात्रा कम थी। अनुमान है कि उस समय $CO_2$ की मात्रा वर्तमान मात्रा की लगभग 60 प्रतिशत ही थी। स्पष्ट है हरित गृह प्रभाव कम था और ताप भी कम रहा होगा। धीमे-धीमे वायुमंडल वर्तमान स्थिति में आ गया। वायुमंडल की वर्तमान स्थिति में $CO_2$ तथा $O_2$ का प्रकृति ने एक अद्भुत संतुलन कायम किया है। यह कैसे है? इसका हम बाद में अध्ययन करेंगे।

अध्याय 3

# वायुमंडल का द्रव्यमान – उसकी ऊँचाई और उसका विस्तार

हम सब जानते हैं कि पृथ्वी पर यह वायुमंडल बहुत ऊँचाई तक फैला है। ऊँची पहाड़ी की चोटियों पर चढ़ने से पता चलता है कि उस ऊँचाई पर हवा काफी कम और हल्की हो जाती है और साँस लेने में भी कठिनाई हो सकती है। हमारे समस्त वायुमंडल का द्रव्यमान कितना है? हवा का घनत्व क्या है? स्पष्ट है हवा का घनत्व उसके ताप और दाब पर निर्भर करता है। $0^{\circ}C$ तथा 760 mm Hg के दाब पर शुष्क हवा का घनत्व 1.239 $kg/m^3$ है। अक्सर हवा के द्रव्यमान का लोगों को अनुमान नहीं होता। जरा अन्दाज लगाइये कि एक साधारण कमरे की हवा का द्रव्यमान क्या होगा यदि कमरे का नाप $5m \times 4m \times 3m$ है? शायद यह जानकर आपको आश्चर्य होगा कि इस कमरे की हवा का द्रव्यमान लगभग 75 kg होगा जो एक स्वस्थ पुरुष के द्रव्यमान के बराबर है।

अब प्रश्न यह है कि हमारे समस्त वायुमंडल का द्रव्यमान कितना है? हम पृथ्वी पर फैले समस्त वायुमंडल के द्रव्यमान का अनुमान बड़ी आसानी से लगा सकते हैं। इसके लिए हमें निम्न आंकड़ों का पता होना चाहिए:

1. पृथ्वी का क्षेत्रफल
2. गुरुत्वीय त्वरण, g (acceleration due to gravity)
3. पृथ्वी की सतह पर हवा का दाब (air pressure)

इन तीनों आकड़ों का विवरण इस प्रकार है: हम जानते हैं कि पृथ्वी की त्रिज्या लगभग $6.37 \times 10^{3}$m है। अतएव पृथ्वी की सतह का क्षेत्रफल (Surface area) = $4 \pi R^2$ $= 4\pi (6.37 \times 10^{6})^2 \; m^2$। गुरुत्वीय त्वरण का मान जगह-जगह पर थोड़ा-सा बदलता है। इसका निर्धारण साधारण लोलक के प्रयोग द्वारा किसी भी स्थान पर किया जा सकता है। इसका मानक मान 9.80665 $m/s^2$ माना जाता है।

अब हमको पृथ्वी की सतह पर हवा के दाब का पता लगाना है। जैसा कि हम सब जानते हैं कि हवा का दाब बैरोमीटर (barometer) द्वारा नापा जाता है (चित्र 3.1)। मौसम के हिसाब से यह दाब रोज थोड़ा-थोड़ा-सा बदलता रहता है। मानक वायुमंडल का दाब (standard atmospheric pressure) को 760 mmHg के स्तम्भ (column) के बराबर लिया जाता है। हम इस दाब, p की गणना इस प्रकार कर सकते हैं।

$p = \rho g h$ जिसमें $\rho$ = Hg का घनत्व = $13.6 \times 10^{3} kg/m^{3}$ है और h = 76 cm

अतएव $p = \left(13.6 \times 10^{3} \frac{kg}{m^{3}}\right)\left(9.8 \frac{m}{s^{2}}\right)\left(\frac{76}{100} m\right)$

$= 1.013 \times 10^{5}\ N/m^{2} = 1.013 \times 10^{5}$ Pascals
$= 1.013 \times 10^{5}$ Pa
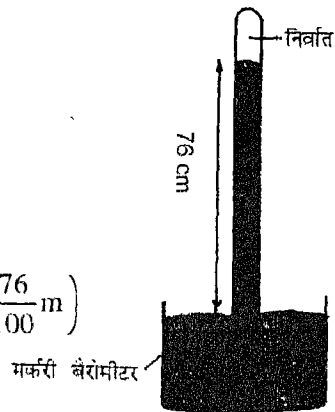
चित्र 3.1

इस गणना के अनुसार पृथ्वी की सतह पर प्रति वर्गमीटर पर यह बल $1.013 \times 10^5$N है। यह दाब लगभग 10N प्रति $cm^2$ है। जिसका अर्थ यह हुआ कि प्रति $cm^2$ पर लगभग यह 1kg के भार के बराबर है। हमारी हथेली लगभग 80 $cm^2$ है। अतएव हमारी हथेली पर लगभग 80kg के भार के बराबर दाब है। परन्तु हमें यह भार पता क्यों नहीं लगता? कारण यह है कि जिस बल से ऊपर की हवा हथेली को नीचे दबा रही है उसी बल से नीचे की हवा हथेली को ऊपर धकेल रही है। अब गणना करें कि पूरी पृथ्वी पर यह बल कितना है? यह बल $\mathbf{F} = 4\pi\,(6.37 \times 10^6 m)^2\,(1.013 \times 10^5)N$ हुआ। अब प्रश्न यह है कि वायुमंडल का पृथ्वी पर इतना बल किस कारण उत्पन्न होता है? स्पष्ट है कि यह गुरुत्वाकर्षण (gravitation) के कारण है। इसलिए हम न्यूटन के दूसरे सिद्धांत के अनुसार वायुमंडल के द्रव्यमान (mass) की गणना कर सकते हैं। इस सिद्धांत के अनुसार हम जानते हैं कि यदि हथेली पर रखे पदार्थ का द्रव्यमान $m$ है तो उस पदार्थ के कारण हथेली पर बल $mg$ है। अर्थात् बल की मात्रा को $g$ से भाग कर देने पर उस पदार्थ का द्रव्यमान निकाला जा सकता है। अतएव यदि वायुमंडल का द्रव्यमान $M_A$ है तो

$$M_A g = \mathbf{F} = 4\pi\,(6.37 \times 10^6)^2\,(1.013 \times 10^5)$$

$$\therefore M_A = \frac{\mathbf{F}}{g} = \frac{4\pi\,(6.37 \times 10^6)^2\,(1.013 \times 10^5)}{9.3}$$

$$= 5.3 \times 10^{18}\,\text{kg}$$

वायुमंडल के इस द्रव्यमान का एक अच्छा अंदाज हमें इसे पृथ्वी के द्रव्यमान से तुलना करने से पता चलता है। पृथ्वी का द्रव्यमान $5.98 \times 10^{24}$kg है। इसका अर्थ यह हुआ कि वायुमंडल का द्रव्यमान पृथ्वी के द्रव्यमान का केवल एक दस लाखवाँ भाग है।

एक और तुलना हम इसे पृथ्वी पर कुल जल के द्रव्यमान से कर सकते हैं। पृथ्वी पर कुल जल का द्रव्यमान लगभग $1.4 \times 10^{21}$kg है। इस हिसाब से कुल जल का द्रव्यमान कुल हवा के द्रव्यमान से 266 गुना है।

वास्तव में हम वायुमंडल रूपी समुद्र की तली में रहते हैं। जल की तरह हवा का स्तम्भ भी दबाव डालता है जो प्रति वर्ग मीटर पर $1.013 \times 10^5$N है। अब प्रश्न है कि यह हवा हमारे ऊपर कितनी दूर तक है? हमें यह पता है कि जैसे–जैसे हम ऊपर जाते हैं हवा हल्की होती जाती है। परन्तु यदि हम यह मान लें कि हवा का घनत्व ऊपर जाने पर भी वही है जो पृथ्वी की सतह पर है तब हम गणना कर सकते हैं कि इस प्रकार की काल्पनिक भारी हवा भी कितनी ऊँचाई तक होगी? हम इस काल्पनिक वायुमंडल की ऊँचाई की गणना इस तरह कर सकते हैं। यदि यह ऊँचाई $h$ मीटर है और हवा का कुल द्रव्यमान $M_A$ है और हवा का घनत्व 1.239 kg/m$^3$ है, तब $M_A = 4\pi\,(6.37 \times 10^6)^2 \times h \times 1.293$। हमें पता है $M_A = 5.3 \times 10^{18}$ kg है। अतएव इन दोनों से $h$ की गणना की जा सकती है जो लगभग 8km होगी। इसका अर्थ यह हुआ कि यदि ऊपरी हवा उतनी ही भारी हो जितनी पृथ्वी की सतह पर है तब भी कुल हवा इतनी है कि वह 8 km की ऊँचाई तक होगी। वास्तव में ऊँचाई के साथ हवा का घनत्व घटता जाता है और हवा बराबर हल्की होती जाती है। हवा का दाब भी ऊँचाई के साथ घटता जाता है। पृथ्वी की सतह पर यह दाब 760 mmHg स्तम्भ है। जैसे–जैसे हम ऊपर जाते हैं हवा सूक्ष्म होती जाती है परन्तु सैकड़ों किलोमीटर की ऊँचाई तक फैली है। उदाहरण के तौर पर 9km की ऊँचाई पर यह दाब $2 \times 10^4$ Pa है अर्थात् पृथ्वी के दाब का केवल 1/5 भाग। 100km की ऊँचाई पर यह दाब लगभग $10^{-3}$ mmHg के स्तम्भ के बराबर। भू–स्थिर उपग्रह की ऊँचाई, लगभग 36000km, पर यह दाब केवल $10^{-8}$mmHg स्तम्भ के बराबर है। ऊँचाई के साथ वायुमंडल सूक्ष्म होता जाता है और धीमे–धीमे अंतरिक्ष में मिल जाता है। यह आँका गया है कि वायुमंडल का 90 प्रतिशत भाग 16km की ऊँचाई से नीचे ही है।

अध्याय 4

# ऊँचाई के साथ वायुमंडल के विभिन्न स्तर और उनके ताप में बदलाव

अब प्रश्न यह उठता है कि ऊपर जाने पर वायुमंडल में ताप में क्या परिवर्तन होते हैं?

पृथ्वी की सतह पर वायुमंडल के दाब का तथा घनत्व के मान के बारे में हम चर्चा कर चुके हैं। सर्वप्रथम पृथ्वी की सतह के ताप पर विचार कीजिए। हमें पता है कि भूमध्य रेखा पर काफी गर्मी होती है तथा उत्तरी तथा दक्षिणी ध्रुवों के पास बहुत ठंड होती है। एक ही स्थान पर वर्ष में मौसम बदलते हैं। प्रश्न यह है कि किसी एक स्थान पर यदि हम एक दिन एक काल्पनिक गुब्बारे में बैठ कर ऊपर उठते चले जाएँ तो जैसे-जैसे हम ऊपर जायेंगे तो वायुमंडल के तापमान में क्या बदलाव आयेगा? यह एक रोचक परन्तु जटिल समस्या है जिसे अब हम संक्षेप में समझेंगे।

जैसे-जैसे हम ऊपर जायेंगे हवा का दाब कम होता चला जायेगा। यह तो स्पष्ट है क्योंकि हवा का द्रव्यमान सीमित है; अतएव जैसे-जैसे हम ऊपर जायेंगे हवा के स्तम्भ की लम्बाई घटती जायेगी। इसके फलस्वरूप दाब घटेगा। क्योंकि किसी भी ताप पर गैस का घनत्व उसके दाब पर निर्भर है। इसलिए जैसे-जैसे दाब घटेगा वैसे-वैसे घनत्व भी घटता जायेगा।

होता भी यही है। जैसे-जैसे हम ऊपर जाते हैं हवा हल्की होती जायेगी। यह सिलसिला ऊँचाई के साथ चलता रहेगा।

अब प्रश्न है कि ऊँचाई के साथ वायुमंडल का ताप कैसे बदलता है? इसे हम विस्तार से समझेंगे। यह तो सबका अनुभव है कि मैदानी क्षेत्र की अपेक्षा पहाड़ों पर ठंड अधिक होती है। अर्थात् पृथ्वी की सतह से ऊपर जाने पर तापमान घटता है। क्या यह तापमान जैसे जैसे ऊपर जायेंगे, लगातार घटता जायेगा? उत्तर है नहीं। शुरू में कुछ ऊँचाई तक यह ताप घटने के बाद फिर बढ़ना शुरू होता है। कुछ ऊँचाई तक बढ़ने के बाद ताप एक बार फिर घटता जाता है। कुछ ऊँचाई तक घटने के बाद फिर बढ़ता ही चलता जाता है। पृथ्वी की ऊँचाई (altitude) और ताप का संबंध ग्राफ में दिखाया गया है (चित्र 4.1)।
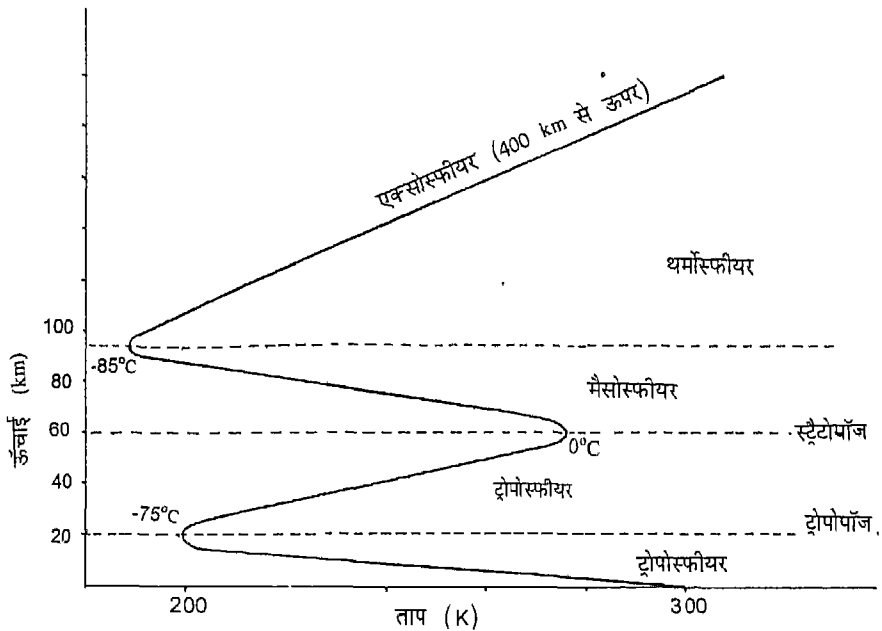
चित्र 4.1

तापमान के हिसाब से पृथ्वी के वायुमंडल को 4-5 परतों में बाँटा गया है। वायुमंडल की सबसे नीचे की परत जो पृथ्वी को छूती है, ट्रोपोस्फीयर (troposphere) कहलाती है। इस परत में जैसे-जैसे ऊँचे जाते हैं तापमान घटता जाता है और 15-20 किलोमीटर की ऊँचाई पर न्यूनतम तापमान -75°C तक पहुँच जाता है। तापमान के स्थिर होने को ट्रोपोपॉज (tropopause) कहते हैं। वास्तव में यह ट्रोपोपॉज की ऊँचाई भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में थोड़ी-सी अलग होती है। उष्ण कटिबन्ध क्षेत्र में यह ऊँचाई लगभग 17 किलोमीटर है और न्यूनतम ताप -75°C है। ध्रुवीय क्षेत्र में यह ऊँचाई लगभग 10 किलोमीटर है और न्यूनतम ताप -55°C है। कितने आश्यर्च की बात है कि ध्रुव के ऊपर ट्रोपोपॉज का ताप उष्ण क्षेत्र के ताप की अपेक्षा अधिक है।

अगली परत में ऊँचाई के साथ तापमान बढ़ना शुरू होता है। यह परत लगभग 20 किलोमीटर की ऊँचाई से 60 किलोमीटर की ऊँचाई तक मानी जाती है। इसे स्ट्रैटोस्फीयर (stratosphere) कहते हैं। लगभग 60 किलोमीटर की ऊँचाई पर इस परत में अधिकतम तापमान 0°C तक पहुँच जाता है। ताप की बढ़ोत्तरी के स्थिर हो जाने को स्ट्रैटोपॉज (stratopause) कहते हैं।

इससे ऊपर की तीसरी परत को मैसोस्फीयर (mesosphere) कहते हैं। यह परत लगभग 60 किलोमीटर की ऊँचाई से 90 किलोमीटर तक होती है। इस परत में तापमान फिर कम होने लगता है और कम होते-होते -85°C तक पहुँच जाता है।

90 किलोमीटर से ऊपर की चौथी परत को थर्मोस्फीयर (thermosphere) कहते हैं। इसमें तापमान लगातार बढ़ता जाता है। यहाँ तक कि लगभग 400 किलोमीटर पर तापमान 1000 K से 1200 K तक पहुँच जाता हैं।

इससे ऊपरी परत को एक्जोस्फीयर (exosphere) कहते हैं। मजेदार बात यह है कि कुछ धर्मों के अनुसार आकश को सात भागों में बाँटा गया है। सातवाँ आसमान सबसे ऊँचा है। आधुनिक विज्ञान में तापमान के आधार पर आकाश की 5 परत ही हैं। यह ताप घटता बढ़ता क्यों है? इसे हम बाद में समझेंगे।

अध्याय 5

# अंतरिक्ष से पृथ्वी पर विभिन्न विकिरणों की बौछार: वायुमंडल में प्रवेश

इस संदर्भ में अब कई महत्वपूर्ण प्रश्न उठते हैं। हमारे वायुमंडल के ऊपर वे कौन-कौन से विकिरण हैं जो अंतरिक्ष से आकर पृथ्वी पर पड़ते हैं? ये विकिरण कहाँ से आते हैं? उनमें से कौन-कौन से विकिरण हमारा वायुमंडल पार करके हम तक पहुँचते हैं?

संक्षेप में अंतरिक्ष से हमारी पृथ्वी की ओर तरह-तरह के विकिरण आते हैं। इन विकिरणों का बहुत बड़ा स्पैक्ट्रम है। परन्तु उन सब विकिरणों का कुछ थोड़ा-सा ही भाग पृथ्वी की सतह तक पहुँचता है। बाकी सब विकिरण हमारे वायुमंडल में रुक जाते हैं। यदि हम इन विकिरणों के पूरे स्पैक्ट्रम पर ध्यान दें, तो मोटे तौर पर इसको हम सुविधा के लिए निम्न 6 भागों में बाँट सकते हैं। परन्तु यह समझना चाहिए कि इन विकिरणों को पक्के तौर पर बाँटने के लिए कोई निश्चित सीमा नहीं है। इस पूरे विकिरण स्पैक्ट्रम की भिन्न-भिन्न किरणें इस प्रकार हैं: $\gamma$- किरणें, X- किरणें, पराबैंगनी किरणें (ultraviolet rays), दृश्य प्रकाश (visible light), अवरक्त किरणें (infrared radiation), रेडियो किरणें। वास्तव में यह सब विकिरण विद्युत चुम्बकीय (electromagnetic waves) तरंगें हैं और अंतरिक्ष के रास्ते को प्रकाश की गति से तय करती हैं। यह गति c = 299792458 मीटर प्रति सेकंड है। इन सब किरणों में आपस में

भेद केवल उनके तरंगदैर्ध्य ($\lambda$) या आवृत्ति (n) का है। आवृत्ति अलग-अलग होने से इन किरणों के फोटान (photon) की ऊर्जा, E, भी अलग-अलग है। हम जानते हैं कि यह ऊर्जा E = hn जिसमें h प्लैंक स्थिरांक है और n उस किरण की आवृत्ति है। (h स्थिरांक का मान $6.63 \times 10^{-34}$ Js है)। आवृत्ति n को $c = n\lambda$ संबंध से निकाला जा सकता है जिसमें $\lambda$ इन किरणों की तरंगदैर्ध्य है । इन किरणों का तरंगदैर्ध्य $\lambda$ निम्न तालिका में दिया गया है।

| | *तरंगदैर्ध्य* | | | |
|---|---|---|---|---|
| γ- किरणें (गामा किरणें) | 0 nm | से | $10^{-2}$nm* | तक |
| X- किरणें (एक्स किरणें) | $10^{-2}$nm | से | 10 nm | तक |
| पराबैंगनी किरणें | 10 nm | से | 390 nm | तक |
| दृश्य प्रकाश किरणें | 390 nm | से | 700 nm | तक |
| अवरक्त किरणें | 700 nm | से | 1 mm | तक |
| रेडियो तरंगें | 1 mm | से | $10^3$, $10^4$m | तक |

*1 nm = $10^{-9}$m

किरणों के तरंगदैर्ध्य के स्पैक्ट्रम को निम्नलिखित रेखाचित्र (चित्र 5.1) में लॉगरिथ्म (logarithm) के पैमाने पर दिखाया गया है।
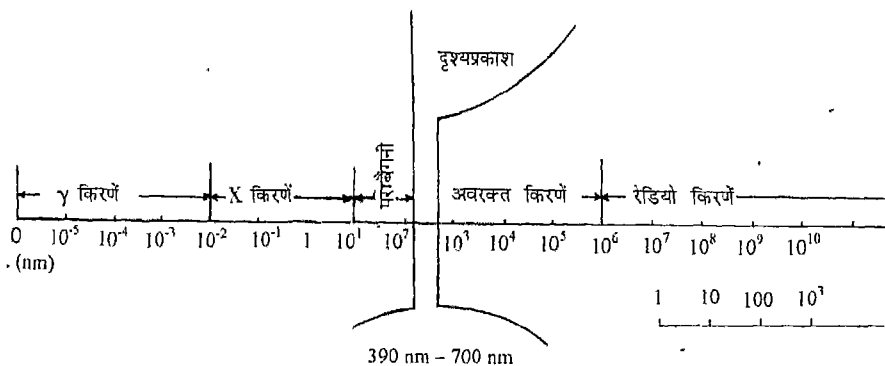
चित्र 5.1

यह नोट करने की बात है कि दृश्य् प्रकाश विद्युत चुम्बकीय किरणों के एक छोटे से क्षेत्र में सीमित है। केवल इसी क्षेत्र की किरणों को हमारी आँखें देख सकती हैं।

अब प्रश्न उठता है कि ये विकिरण अंतरिक्ष में कहाँ से आते हैं और किस तरह उत्पन्न होते हैं? यह एक लम्बा चौड़ा विषय है और इसका पूरा ज्ञान नहीं है। हम कुछ मोटी-मोटी बातें संक्षेप में बतायेंगे।

हम जानते हैं कि हर वस्तु अपने परम ताप T के अनुसार ऊर्जा उत्सर्जित करती है। इस ऊर्जा की मात्रा $T^4$ के अनुपात में होती है। अर्थात् जैसे-जैसे ताप T बढ़ता जाता है, उत्सर्जित ऊर्जा तेजी से बढ़ती जाती है। दूसरी बात यह है कि हर ताप पर विकिरणों का एक स्पैक्ट्रम उत्सर्जित होता है। अर्थात् किसी ताप पर केवल एक तरंगदैर्ध्य $\lambda$ के विकिरण नहीं उत्सर्जित होते, बल्कि एक सतत् स्पैक्ट्रम उत्सर्जित होता है। प्लैंक विकिरण नियम (Planck's law of radiation) द्वारा इस स्पैक्ट्रम में भिन्न-भिन्न तरंगदैर्ध्य पर उत्सर्जित ऊर्जा की मात्रा की गणना की जा सकती है। यदि हम उस उत्सर्जित ऊर्जा के स्पैक्ट्रम की सबसे अधिक तीव्रता वाली तरंगदैर्ध्य पर ध्यान दें तो यह पता चलता है कि जैसे-जैसे ताप बढ़ता जाता है यह तरंगदैर्ध्य घटती जाती है। हमारा प्रतिदिन का भी यही अनुभव है। आपने देखा होगा जैसे-जैसे किसी धातु की छड़ को गर्म करके उसका ताप बढ़ाया जाता है तो पहले वह छड़ लाल, फिर नारंगी और पीला आदि रंग की होती हुई, श्वेत रंग की प्रतीत होती जाती है। अर्थात् किसी वस्तु का ताप बढ़ने पर उससे उत्सर्जक तरंगदैर्ध्य घट जाती है। उदाहरण के तौर पर पृथ्वी का औसत ताप लगभग 20°C है और पृथ्वी से उत्सर्जित ऊर्जा में अधिकतम तीव्रता वाली तरंगदैर्ध्य अवरक्त क्षेत्र में होती है। 800 K ताप पर पदार्थ लाल रंग के प्रतीत होते हैं। 3000 K ताप पर टंगस्टन की तार (tungsten filament) से निकली रोशनी वह है जो बिजली के बल्ब से निकलती है। 6000 K ताप पर सूर्य की रोशनी है।

अब प्रश्न है कि वह कौन-सा ताप है जिस पर $\gamma$- किरणें, X- किरणें तथा पराबैंगनी आदि किरणें उत्सर्जित होंगी? इन किरणों को उत्सर्जित करने के लिए उपयुक्त ताप वाले पदार्थ अंतरिक्ष में कहाँ हैं? इसका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है :

1. *γ- किरणें* ($\lambda = 0$ से $10^{-2}$nm तक): इन किरणों को उत्सर्जित करने के लिए पदार्थ का ताप $10^{8}$ K से अधिक होना चाहिए। अंतरिक्ष में इस ताप पर कोई वस्तु नहीं है। तब प्रश्न है कि अंतरिक्ष में ये किरणें कहाँ से आती हैं? ये किरणें पल्सर (pulsar) तथा अंतरिक्ष में नाभिकीय अभिक्रियाओं (nuclear reaction) द्वारा उत्पन्न होती हैं।

2. *X-किरणें* ($\lambda = 10^{-2}$nm से 10nm तक): इन किरणों को उत्सर्जित करने के लिए पदार्थों का ताप $10^{8}$ K और $5 \times 10^{5}$ K के बीच होना चाहिए। सुदूर गैलेक्सी के झुण्डों के बीच वाली गैस का ताप करोड़ों डिग्री होता है। यह माना जाता है कि वहाँ से X - किरणें उत्सर्जित होती हैं।

3. *पराबैंगनी किरणें* ($\lambda = 10$nm से 390nm तक): ये किरणें बहुत उच्च ताप वाले तारों (जैसे सूर्य) से उत्सर्जित होती हैं।

4. *दृश्य प्रकाश* ($\lambda = 390$nm से 700nm तक): यह प्रकाश 3000 K से 6000 K तक के ताप वाले तारों से उत्सर्जित होता है। हमारे लिए दृश्य प्रकाश का प्रमुख स्रोत हमारा सूर्य है। इस प्रकाश की भिन्न-भिन्न तरंगदैर्ध्य वाली किरणें आँख को अलग-अलग रंग के रूप में दिखाई देती हैं।

5. *अवरक्त किरणें* ($\lambda = 700$ nm से 1mm तक): ये किरणें अंतरिक्ष में ठंडी वस्तुओं और गैसों से उत्सर्जित होती हैं जिनका ताप 1000 K से 10 K के बीच होता है।

6. *रेडियो किरणें:* ये किरणें अंतरिक्ष में अत्यन्त ही ठंडी वस्तुओं से जिनका ताप 1 K से कम हो, उत्सर्जित हो सकती हैं। इतनी ठंडी वस्तुएँ अंतरिक्ष में नहीं पाई गई हैं। फिर भी 1930 में रेडियो दूरबीन (radio telescope) द्वारा यह पाया गया है कि इस तरंग की किरणें पृथ्वी पर अंतरिक्ष से आ रही हैं। इन किरणों की उत्पत्ति के लिए यह सोचा जाता है कि गैलेक्सी के केन्द्र में विस्फोट होने से इलैक्ट्रोन निकलते हैं जो अधिक चुम्बकीय क्षेत्रों में तुल्यकालिक विकिरण सिनक्रोट्रान किरण (synchrotron radiation) उत्सर्जित करते हैं।

इन सभी किरणों की बौछार पृथ्वी पर होती है। यह चित्र 5.2 में दिखाया गया है।
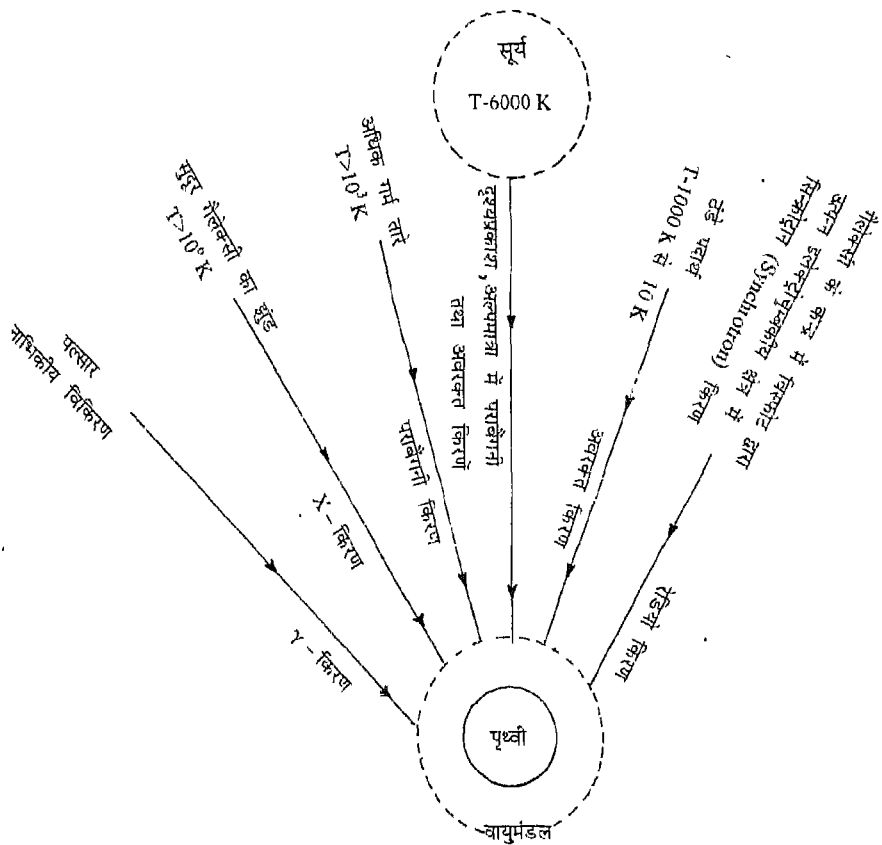
चित्र 5.2

अब यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि यदि पृथ्वी पर γ- किरणें, X- किरणें, पराबैंगनी किरणें आदि की बौछार हो रही है तो हमारे वायुमंडल को पार करके हम तक कौन-कौन सी किरणें पहुँचती हैं? संक्षेप में इसका निम्न उत्तर है।

हमारे वायुमंडल की गैसें अंतरिक्ष से आई हुई $\gamma$- किरणों को, X- किरणों को, तथा छोटी तरंगदैर्ध्य वाली पराबैंगनी किरणों को पूरी तरह रोक लेती हैं और इस प्रकार हमें इनके दुष्प्रभाव से बचा लेती हैं। मोटे तौर पर इन किरणों का लम्बी तरंगदैर्ध्य वाला भाग तो वायुमंडल में काफी ऊँचाई पर ही रुक जाता है। अब इन विकिरणों के छोटी तरंगदैर्ध्य वाले भाग पर ध्यान दें जो पृथ्वी के काफी कुछ निकट आ जाता है। $\gamma$- किरणों का छोटी तरंगदैर्ध्य वाला भाग जिसका तरंगदैर्ध्य $\lambda \sim 10^{-8}$nm है, अधिक से अधिक पृथ्वी से 10km की ऊँचाई तक पहुँच पाता है। यह नोट करने की बात है कि यह ऊँचाई एवरेस्ट पर्वत की चोटी की ऊँचाई है। इसी तरह X- किरणों को लीजिए। छोटी तरंगदैर्ध्य वाली X- किरणों का तरंगदैर्ध्य $\lambda \sim 0.02$nm है। ये किरणें पृथ्वी की सतह से लगभग 40 km की ऊँचाई तक पहुँच जाती हैं। इसके विपरीत X- किरणों की लम्बी तरंगदैर्ध्य वाला भाग वायुमंडल में पृथ्वी से 100km की ऊँचाई पर ही रुक जाता है।

अब पराबैंगनी किरणों पर विचार कीजिए। पराबैंगनी किरणों का स्पैक्ट्रम 10nm से 390nm तक फैला होता है। इनमें $\lambda = 10$nm से 100nm तक की किरणें लगभग 100km पर रुक जाती हैं। 100nm से 200nm वाली किरणें लगभग 50km तक घुस आती हैं। 200nm से 310nm वाली किरणें लगभग 30km की ऊँचाई तक पहुँचती हैं। तथा 310nm लम्बी तरंगदैर्ध्य वाली पराबैंगनी किरणें और दृश्य प्रकाश (390nm से 700nm तक) पृथ्वी की सतह तक पहुँचती हैं। इसे हमने रेखाचित्र (चित्र 5.3) में दिखाया है।

अवरक्त किरणों का स्पैक्ट्रम 700nm से $10^6$nm $= 10^{-3}$m $= 1$mm तक फैला है। इन विकिरणों का कुछ भाग पृथ्वी तक पहुँचता है जैसा कि हमें धूप की गरमी महसूस करके पता चलता है। वायुमंडल में विद्यमान गैसें जैसे $CO_2$, जलवाष्प आदि अवरक्त किरणों के कुछ-कुछ भागों का अवशोषण कर लेती हैं। इन गैसों द्वारा अवशोषित किरणें हरित गृह प्रभाव उत्पन्न करती हैं (हरित गृह प्रभाव का हम बाद में अध्ययन करेंगे)। $CO_2$ आदि गैसों के अवशोषण के बाद भी अवरक्त किरणें पृथ्वी पर काफी मात्रा में पहुँचती हैं, और पृथ्वी तथा वायुमंडल के निचले भाग को गर्म करती हैं।
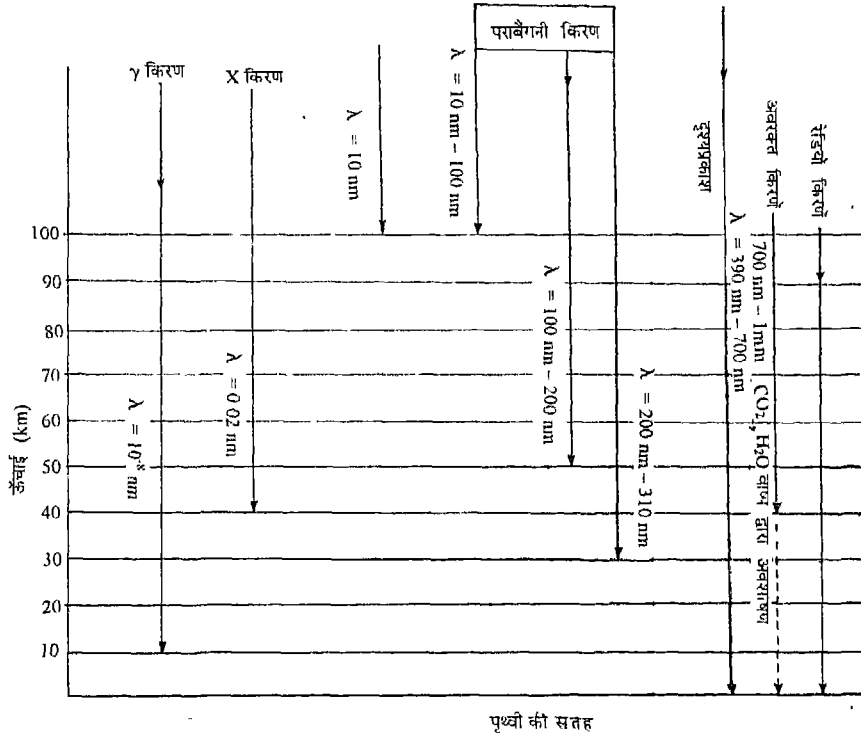
**चित्र 5.3**

सारांश यह है कि घातक γ- किरणें तथा X- किरणें तो हमारी पृथ्वी की सतह तक बिलकुल नहीं पहुँचतीं। इस प्रकार हमारा वायुमंडल इन घातक किरणों से हमारी रक्षा करता है। पराबैंगनी किरणों का लघु तरंगदैर्ध्य वाला भाग भी बिलकुल रुक जाता है*। केवल 310nm से अधिक तरंगदैर्ध्य वाला भाग पृथ्वी तक पहुँचता है। दृश्य प्रकाश, तथा अवरक्त किरणें पृथ्वी तक प्रचुर मात्रा में पहुँचती हैं। रेडियो किरणें तो वायुमंडल को पार करती हैं और एक स्थान से दूसरे स्थान तक आसानी से जाती हैं।

*हम अध्याय 6 तथा 7 में देखेंगे कि लगभग 30km की ऊँचाई पर ओजोन $O_3$ गैस की एक पतली परत वायुमंडल में उत्पन्न हो जाती है जो हम लोगों की पराबैंगनी किरणों से रक्षा करती है।

अध्याय 6

# सूर्य की किरणों द्वारा हमारे वायुमंडल के विभिन्न स्तरों पर प्रभाव और वायुमंडल का बदला हुआ स्वरूप

## सूर्य का प्रकाश

यह तो हम सब जानते हैं कि हमारी पृथ्वी पर अंतरिक्ष से विकिरणों का एक स्पैक्ट्रम आकर पड़ता है और हमारी पृथ्वी पर अंतरिक्ष से आने वाली विकिरणों का अधिकांश भाग सूर्य से आता है। सूर्य से आने वाले विकिरण और सौर ऊर्जा हमारे लिए बहुत ही महत्त्वपूर्ण हैं। अतएव सूर्य से आने वाले विकिरण का हमें विशेष अध्ययन करना चाहिए। इस संदर्भ में कई प्रश्न उठते हैं: सौर ऊर्जा में कौन-कौन से विकिरण होते हैं और किस-किस मात्रा में? ये विकिरण जब वायुमंडल के विभिन्न स्तरों से गुजरते हैं, तब वायुमंडल और उनमें क्या पारस्परिक क्रिया होती है और उसके फलस्वरूप वायुमंडल में क्या बदलाव आते हैं? वायुमंडल को पार करके पृथ्वी की सतह तक कौन-कौन से विकिरण पहुँचते हैं, और किस-किस मात्रा में पहुँचते हैं? आदि।

सबसे पहले हम यह जानना चाहेंगे कि वायुमंडल में प्रवेश करने से पहले पृथ्वी के ऊपर सूर्य से कौन-कौन से विकिरण आते हैं और ये किस मात्रा में होते हैं? भिन्न-भिन्न विकिरण और उनकी मात्रा को चित्र 6.1 में दिखाया गया है।
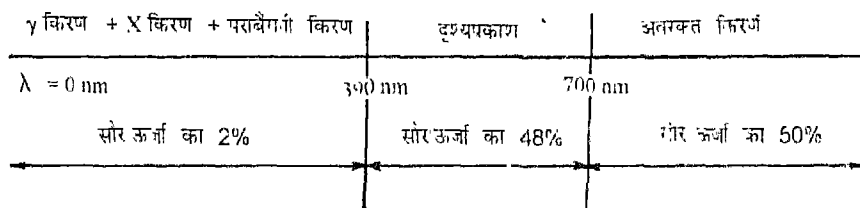
चित्र 6.1

यहाँ हमने सौर ऊर्जा के तीन बड़े भाग दिखाये हैं। पहला भाग छोटी तरंगदैर्ध्य वाली विकिरण का है। इसमें γ - किरणें, X- किरणें तथा पराबैंगनी किरणें सम्मिलित हैं। और इनकी तरंगदैर्ध्य लगभग 0nm से 390nm तक है। ये सब मिलकर सौर ऊर्जा का केवल लगभग 2 प्रतिशत भाग है। यह प्रकाश आँख को दिखाई नहीं देता परन्तु यदि यह प्रकाश आँखों पर पड़े तो बहुत हानिकारक है।

दूसरा भाग दृश्य प्रकाश है जो बैंगनी रंग λ = 390 nm से लाल रंग λ = 700 nm तक फैला है। यह भाग सौर ऊर्जा का लगभग 48 प्रतिशत है। यह प्रकाश आँखों को विभिन्न रंगों के रूप में दिखाई देता है।

तीसरा भाग अवरक्त किरणों का है। ये किरणें भी आँखों को दिखाई नहीं देतीं। इनकी तरंगदैर्ध्य 700 nm से अधिक है और ये ऊष्मा की किरणें हैं। यह भाग सौर ऊर्जा का लगभग 50 प्रतिशत है।

यदि हम सूर्य से उत्सर्जित ऊर्जा के दृश्य प्रकाश तथा निकट अवरक्त स्पैक्ट्रम पर ध्यान दें तो यह पाया गया है कि यह लगभग वही है जो एक कृष्णपिंड (blackbody) से उत्सर्जित होगा जिसका ताप 6000 K है। यह प्रकाश सूर्य के प्रकाश मंडल (photosphere) से आता है। पराबैंगनी तथा X- किरणें आदि सूर्य के क्रोमोस्फीयर (chromosphere) तथा कोरोना (corona) वाले भाग से निकलती हैं जहाँ का ताप लाखों डिग्री है।

## सूर्य की किरणों द्वारा वायुमंडल के स्तरों में बदलाव

अब प्रश्न है कि सौर ऊर्जा की किरणों का यह स्पैक्ट्रम जब पृथ्वी के वायुमंडल से होकर गुजरता है तब उनकी आपसी प्रतिक्रिया क्या होती है? विकिरण और पदार्थों की आपसी प्रतिक्रिया एक महत्वपूर्ण और व्यापक प्रश्न है। हम इसका विवरण संक्षेप में तीन चरणों में करेंगे।

1. इस प्रतिक्रिया के फलस्वरूप वायुमंडल के विभिन्न स्तरों पर क्या बदलाव आता है? अर्थात् हम पहले बदले हुये वायुमंडल का स्वरूप बतायेंगे।
2. सूर्य के कौन-कौन से विकिरण वायुमंडल के किस-किस स्तर पर प्रतिक्रिया करते हैं जिसके कारण वायुमंडल का उपरोक्त स्वरूप हो जाता है और इन विकिरणों का इन स्तरों पर अवशोषण हो जाता है?
3. हमें यह समझना होगा कि विकिरण और वायुमंडल की गैसों में आपसी प्रतिक्रिया क्यों होती है? इसके लिए हम सूर्य की किरणों की ऊर्जा को फोटान के रूप में लेंगे और फिर उनका गैस के अणुओं के साथ प्रतिक्रिया का अध्ययन करेंगे।

## सूर्य के विकिरण द्वारा हमारे वायुमंडल का स्वरूप कैसे बनता है ?

सौर विकिरण के कारण वायुमंडल भिन्न-भिन्न स्तरों में बँट जाता है। संक्षेप में इन स्तरों की सीमायें तथा स्वरूप, मोटे तौर पर इस प्रकार हैं:

1. 90 km से 200km तथा और अधिक ऊँचाई तक की वायुमंडल की गैसों का आयनीकरण होता है। इस कारण इस ऊँचाई पर बहुत से स्वतंत्र इलैक्ट्रान विद्यमान होते हैं और यहाँ एक आयनमंडली स्तर (ionospheric layer) बन जाता है।

2. 50 km से 100 km तक के मध्यमंडल (mesosphere) की ऊँचाई पर, $O_2$ आक्सीजन गैस के अणु टूट कर आक्सीजन परमाणु O बन जाते हैं।
3. स्ट्रैटोस्फीयर (stratosphere) में लगभग 30km से 60km की ऊँचाई के स्तर में प्रकाश रासायनिक अभिक्रिया (photochemical reaction) के द्वारा $O_3$ ओजोन अणु बनते हैं। उत्पादन के साथ-साथ उनका विनाश भी होता रहता है तथा इस प्रकार एक गतिक संतुलन (dynamic equilibrium) स्थापित हो जाता है।
4. सबसे नीचे का स्तर ट्रोपोस्फीयर (troposphere) 0km से 20km तक के वायुमंडल में $N_2$, $O_2$, $CO_2$ आदि गैसों के अणु विद्यमान होते हैं। यहाँ $H_2O$ जल की वाष्प भी विभिन्न मात्रा में विद्यमान होती है। यह नोट करने की बात है कि विभिन्न स्तरों की सीमाएँ थोड़ा बहुत बदलती रहती हैं। चित्र 6.2 में वायुमंडल के ये चार स्तर दिखाये गये हैं।
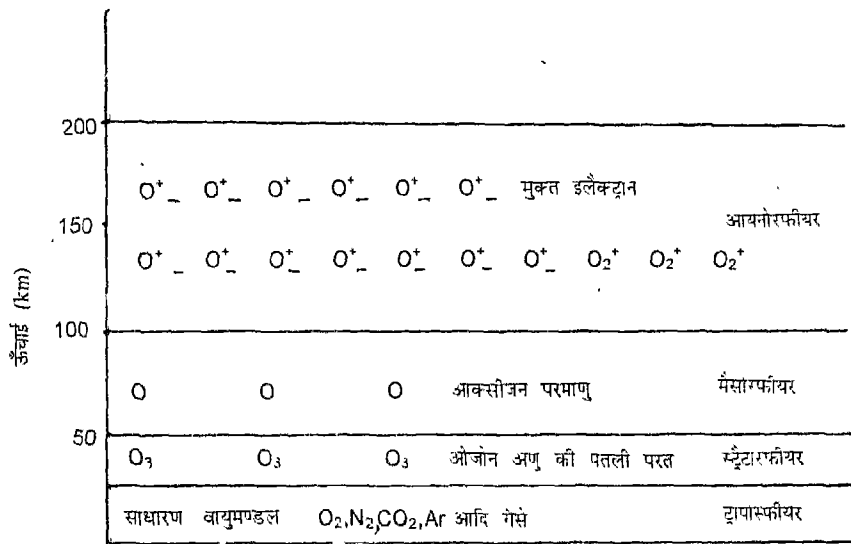
**चित्र 6.2**

## सूर्य के विभिन्न विकिरण द्वारा वायुमंडल की विभिन्न स्तरों में प्रतिक्रिया

चित्र 6.2 में वायुमंडल के चार भागों पर प्रभाव दिखाया गया है। पहले सबसे ऊपरी भाग आयनोस्फीयर पर ध्यान दीजिए। यहाँ सूर्य की विकिरण ने वायुमंडल के ऊपरी भाग (90 km - 200 km) की गैसों का आयनीकरण कर दिया है।

अब प्रश्न यह है कि वायुमंडल की गैसों का आयनीकरण क्यों हुआ? दूसरा प्रश्न यह है कि यह आयनीकरण 200 km की ऊँचाई से शुरू होकर लगभग 90 km तक की ऊँचाई तक ही क्यों सीमित रहा? 90km से नीचे वाले वायुमंडल में यह क्यों नहीं हुआ?

इसका संक्षेप में उत्तर इस प्रकार है। सूर्य की छोटी तरंगदैर्ध्य वाली विकिरणों ($\lambda < 100$ nm अर्थात् $\gamma$- किरणें, X- किरणें और अत्यन्त छोटी पराबैंगनी किरणें) की ऊर्जा इतनी अधिक है कि वह $O_2$ जैसी गैस के अणुओं को तोड़कर उनके परमाणु तथा फिर उनमें से इलैक्ट्रान निकाल कर उस गैस का आयनीकरण करने में सक्षम है। फलस्वरूप गैसों का आयनीकरण होता है।

दूसरा प्रश्न है कि यदि ये विकिरण इतने सक्षम हैं तो 90 km से नीचे आकर नीचे वाले वायुमंडल के स्तरों में आयनीकरण क्यों नहीं करते? इसका संक्षेप में उत्तर इस प्रकार है। माना कि इन विकिरण की ऊर्जा तो इतनी अधिक है परन्तु 200 km से 90 km के बीच के सफर में इन विकिरण की सम्पूर्ण ऊर्जा इस आयनीकरण करने की क्रिया में व्यय हो जाती है। अर्थात् इस सफर में इन विकिरणों का पूर्णतया (100%) अवशोषण हो जाता है। यह भी नोट करने की बात है कि सौर ऊर्जा में 100nm से कम तरंगदैर्ध्य वाले विकिरण कुल सौर ऊर्जा का केवल $3 \times 10^{-6}$ भाग है। अतएव 90 km की ऊँचाई से नीचे वाले स्तर में जो सूर्य विकिरणों का शेष भाग पहुँचता है उसका तरंगदैर्ध्य $\lambda > 100$ nm से अधिक होता है। इस तरह पराबैंगनी किरणें, दृश्य प्रकाश तथा अवरक्त किरणें ही इस भाग में घुसती हैं।

अब वायुमंडल के 100 km से 50 km की ऊँचाई वाले भाग पर ध्यान दीजिए। इस स्तर में आक्सीजन गैस के अणु $O_2$ टूटकर आक्सीजन परमाणु O बन गये हैं। फिर पहले की

भांति प्रश्न उठता है कि इस स्तर में आक्सीजन के अणुओं का वियोजन क्यों हुआ? और यह वियोजन 50 km से नीचे क्यों नहीं होता?

संक्षेप में इसका उत्तर यह है कि सूर्य की विकिरण का $\lambda = 100$ nm से $\lambda = 200$ nm वाला भाग यह वियोजन की क्रिया करता है क्योंकि इन विकिरणों की ऊर्जा अणु को तोड़ने के लिए आवश्यक ऊर्जा के बराबर है। इस क्रिया को प्रकाशीय अणु वियोजन (photodissociation of molecules) कहते हैं। 100 nm से 200 nm वाला भाग कुल सौर ऊर्जा का केवल $10^{-4}$ भाग अर्थात् दस हजारवाँ भाग है। 100 km से 50 km वाले वायुमंडल स्तर में इस ऊर्जा का शत-प्रतिशत (100%) अवशोषण हो जाता है और इस तरह 50 km से नीचे जाने के लिए इस तरंगदैर्ध्य वाली विकिरणें बचती ही नहीं।

*अब इस चित्र के तीसरे स्तर पर ध्यान दें। यहाँ एक बहुत ही महत्वपूर्ण बात दिखाई गई* है कि लगभग 30 km से 60 km के स्तर में $O_3$ ओजोन के अणु विद्यमान हैं। प्रश्न यह है कि वायुमंडल के इस स्तर पर $O_3$ गैस कैसे पैदा हो गई? यह तो हम देख चुके हैं कि 50 km से 100 km की ऊँचाई पर आक्सीजन अणु $O_2$ प्रकाशीय वियोजन (photodissociation of oxygen-molecule) द्वारा O परमाणु बन जाते हैं। अब प्रश्न यह है कि जब अणु $O_2$ तथा O परमाणु दोनों किसी स्तर पर विद्यमान होंगे तब क्या होगा? उचित स्थिति में निम्नलिखित क्रियाएँ संभव होंगी:

1. एक परमाणु O दूसरे परमाणु O से मिलकर वापस $O_2$ अणु बन जाये

   $$O + O \rightarrow O_2$$

2. तीन परमाणु O मिलकर ओजोन $O_3$ का परमाणु बन जाये

   $$O + O + O \rightarrow O_3$$
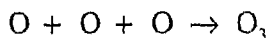
3. एक परमाणु O दूसरे $O_2$ अणु से मिलकर ओजोन $O_3$ अणु बन जाये

   $$O + O_2 \rightarrow O_3$$

अतएव उचित स्थिति में ओजोन का निर्माण सम्भव है। यह भी स्पष्ट है कि $O_3$ के अणु भी टूटते रहेंगे। ओजोन के अणुओं का टूटना दो तरह से सम्भव है। पहला प्रकाशीय वियोजन द्वारा और दूसरा रासायनिक प्रक्रिया तथा पुनः संयोजन क्रिया (recombination reaction) द्वारा जिसमें O परमाणु भाग लेता है। इस क्रिया द्वारा $O_3$ अणु टूटकर अन्त में $O_2$ अणु बनेंगे। यह इस प्रकार है।

$$O_3 + O \rightarrow 2O_2$$
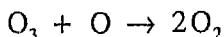
इस प्रकार $O_3$ का निर्माण तथा उसका विनाश दोनों होते रहेंगे और एक गतिक संतुलन स्थापित हो जाता है।

अब चित्र 6.2 के सबसे नीचे वाले स्तर पर ध्यान दीजिए। यह पृथ्वी के स्तर से शुरू होकर लगभग 20 km की ऊँचाई तक है। इसे ट्रोपोस्फीयर (troposphere) कहते हैं। इस स्तर में जो किरणें पहुँचती हैं वे हैं, निकट पराबैंगनी किरणें ($\lambda > 310$ nm), दृश्य प्रकाश ($\lambda = 390$ nm से 700 nm) तथा अवरक्त किरणें ($\lambda > 700$ nm)। इनका इस स्तर पर बहुत कम अवशोषण होता है। ये विकिरण सौर ऊर्जा के 98 प्रतिशत भाग होते हैं। इस स्तर के शुष्क वायुमंडल में साधारण तौर पर उदासीन $N_2$, $O_2$, $CO_2$ तथा अन्य उत्कृष्ट या अक्रिय गैसें Ar, Ne, He, Kr, Xe विद्यमान हैं। जैसा कि सारणी 1.1 में दिखाया गया है, इन गैसों का आयतन के हिसाब से क्रमशः प्रतिशत भाग इस प्रकार है: 78.08, 20.94, 0.03, 0.93, $1.81 \times 10^{-3}$, $5.24 \times 10^{-4}$, $1.14 \times 10^{-4}$, $9.0 \times 10^{-6}$। इन गैसों के अलावा बहुत थोड़ी मात्रा में मीथेन ($CH_4$) तथा $N_2O$ गैस तथा $H_2$ गैस भी वायुमंडल में होती हैं। जल वाष्प की मात्रा अलग-अलग स्थानों पर अलग-अलग होती है।

## विकिरण और द्रव्य पदार्थों की आपसी प्रतिक्रिया का कारण

हमने यह देखा कि सूर्य के विकिरण ने वायुमंडल के ऊपरी भाग में गैसों का आयनीकरण किया, उससे निचले भाग में आक्सीजन के अणु तोड़ कर उसके परमाणु बनाये, और उससे भी नीचे वाले भाग में ओजोन $O_3$ के अणुओं का निर्माण किया। परन्तु सबसे

नीचे वाले भाग में साधारण वायुमंडल रहने दिया। प्रश्न यह है कि ऐसा क्यों और कैसे हुआ?

यह एक व्यापक प्रश्न है कि विकिरण और द्रव्य पदार्थों में आपसी प्रतिक्रिया क्या होती है और कैसे होती है? यहाँ पर हम सीमित रूप से वायुमंडल की गैसों का तथा सूर्य से उत्सर्जित विभिन्न विकिरण की पारस्परिक प्रतिक्रिया पर विचार करेंगे।

यहाँ पर दो तीन बातें समझने की हैं। पहली बात यह है कि साधारण तौर पर गैसें अणु के रूप में होती हैं जैसे $O_2$ का अणु। आक्सीजन के अणु पर विचार कीजिए। यह आक्सीजन के दो परमाणुओं के मिलन से बना है। आक्सीजन के दो परमाणु आपस में एक विशेष ऊर्जा द्वारा जुड़े हुए हैं। इसे आबन्ध ऊर्जा (binding or bond energy) कहते हैं। अतएव यदि हम इसी अणु को तोड़कर अलग-अलग O परमाणु प्राप्त करना चाहें तो आबन्ध ऊर्जा के बराबर ऊर्जा लगानी पड़ेगी। यह ऊर्जा कितनी होगी? ऊर्जा को नापने के लिए कई मात्रक प्रयोग किये जाते हैं। यहाँ पर एक उपयुक्त मात्रक इलैक्ट्रान वोल्ट eV है। ($1 \text{ eV} = 1.6 \times 10^{-19}$J)। यह प्रयोग द्वारा दिखाया गया है कि आक्सीजन के अणु को तोड़ने के लिए 5.1 eV ऊर्जा की आवश्यकता होती है।

अब आक्सीजन के परमाणु पर विचार कीजिए। साधारण तौर पर प्रत्येक परमाणु यदि उसे कोई अतिरिक्त ऊर्जा नहीं दी गई है तो वह एक उदासीन परमाणु (neutral atom) होगा। किसी उदासीन परमाणु के नाभिक में जितने प्रोटान होते हैं, उतने ही इलैक्ट्रान उसके चारों ओर चक्कर लगाते हैं। उदाहरण के तौर पर हाइड्रोजन के नाभिक में एक प्रोटान है और एक ही इलैक्ट्रान उसके चारों ओर एक निश्चित कक्ष में चक्कर लगाता है। हीलियम के नाभिक में दो प्रोटान हैं और बाहरी कक्ष में दो इलैक्ट्रान। इलैक्ट्रान को अपने कक्ष से निकालकर, उसे परमाणु से दूर हटाने के लिए एक निश्चित ऊर्जा की आवश्यकता होती है। किसी भी परमाणु से एक इलैक्ट्रान बिलकुल अलग हटा देने पर उस परमाणु का आयनीकरण हो जायेगा। स्पष्ट है कि यदि उदासीन परमाणु से एक इलैक्ट्रान निकल गया है तब उस परमाणु पर एक धन आवेश होगा। वह मुक्त इलैक्ट्रान उस परमाणु से दूर होगा और उससे उसका कोई संबंध नहीं होगा। उदाहरण के तौर पर आक्सीजन आयन इस प्रकार $O^+$

लिखेंगे। परन्तु भिन्न-भिन्न परमाणुओं से एक इलैक्ट्रान हटाने की ऊर्जा अलग-अलग है और यह ऊर्जा उस परमाणु के आयनन विभव (ionization potential) पर निर्भर है। यह ऊर्जा हाइड्रोजन अणु, $H_2$ के लिए 24.6 eV तथा आक्सीजन अणु $O_2$ के लिए 13.6 eV और नाइट्रोजन अणु $N_2$ के लिए 14.5eV है। सारांश यह है कि आक्सीजन के अणु $O_2$ को तोड़कर उसके दो O परमाणु बनाने के लिए 5.1 eV ऊर्जा देनी होगी। इसके बाद अलग-अलग आक्सीजन परमाणु O का आयनीकरण करने के लिए 13.6 eV ऊर्जा लगानी पड़ेगी।

$$h\upsilon = 5.1\ eV \rightarrow O_2 \rightarrow O + O;$$

$$h\upsilon = 13.6\ eV \rightarrow O \rightarrow O^+ + e^-$$
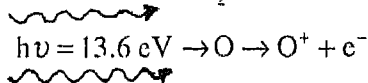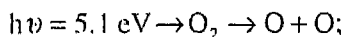
अब प्रकाश के विकिरण की ऊर्जा पर ध्यान दीजिए। हम जानते हैं कि प्रकाश विद्युत चुम्बकीय तरंगों के रूप में है और भिन्न-भिन्न विकिरणों का तरंगदैर्ध्य अलग-अलग है। जैसे बैंगनी रंग का तरंगदैर्ध्य, $\lambda$, 390 nm और लाल रंग का तरंगदैर्ध्य, $\lambda$, 700 nm है। निर्वात् (Vacuum) में ये तरंगें प्रकाश की गति (c = 299792458 m/s) से चलती हैं। इन तरंगों की आवृत्ति (frequency)n को हम $c = n\lambda$ समीकरण द्वारा निकाल सकते हैं। इससे स्पष्ट है कि जब विकिरण का तरंगदैर्ध्य कम होगा तो उसकी आवृत्ति n उसी अनुपात में अधिक होगी।

क्वांटम सिद्धांत के अनुसार हम प्रकाश को फोटान (photon) के रूप में सोच सकते हैं। यह फोटान प्रकाश की गति c से चलते हैं। प्रत्येक फोटान की अपनी एक विशेष ऊर्जा होती है जो उसकी आवृत्ति पर निर्भर है। प्रकाश के फोटान की ऊर्जा $E = hn$ होती है जहाँ h प्लेंक स्थिरांक है जिसका मान $6.6 \times 10^{-34}$ Js है, और n उस प्रकाश की आवृत्ति। हर फोटान की ऊर्जा की गणना इस प्रकार की जा सकती है। उदाहरण के तौर पर हम उस प्रकाश की जिसका तरंगदैर्ध्य $\lambda = 200$ nm है, ऊर्जा की गणना इस प्रकार कर सकते हैं:

$$\lambda = 200 \times 10^{-9} \text{ m}$$

$$\therefore n = \frac{c}{\lambda} = \frac{3 \times 10^8 \text{ m/s}}{200 \times 10^{-9} \text{ m}} = 1.5 \times 10^{15} /\text{s}$$

$$E = hn = \left(6.6 \times 10^{-34} \text{ Js}\right) \times 1.5 \times 10^{15}, \frac{1}{s}$$

$$= 9.90 \times 10^{-19} \text{ J}$$

$$= \frac{9.9 \times 10^{-19}}{1.6 \times 10^{-19}} \approx 6.2 \text{eV}$$

इसी प्रकार पराबैंगनी किरण ($\lambda = 242$ nm) की ऊर्जा, गंणना करने पर 5.1 eV मिलती है।

अब देखिये जब भिन्न-भिन्न विकिरण के फोटान रास्ते में गैस के अणुओं से टकरायेंगे, तो क्या होगा? यदि फोटान में पर्याप्त ऊर्जा है तब वह उस अणु को तोड़कर उसका परमाणु बना देगा। इस प्रक्रिया को अणु का प्रकाशीय वियोजन (photodissociation) कहते हैं। $O_2$ को तोड़ने के लिए 5.1 eV ऊर्जा की आवश्यकता होगी। अतएव पराबैंगनी किरणें जिनकी तरंगदैर्ध्य $\lambda = 242.4$ nm से कम होगी, वह इस क्रिया में सक्षम होंगी।

अब ओजोन के अणु पर ध्यान दीजिए। ओजोन अणु के प्रकाशीय वियोजन के लिए 1.1 eV ऊर्जा पर्याप्त है। यह गणना करके दिखाया जा सकता है कि $\lambda = 1180$ nm से कम वाले विकिरणों में यह ऊर्जा मौजूद है। इसका अर्थ यह हुआ कि समस्त दृश्य प्रकाश और निकट अवरक्त किरणों द्वारा $O_3$ का विभाजन हो सकता है। परन्तु ऐसा नहीं होता। इसका कारण है कि ओजोन द्वारा विकिरणों का अवशोषण विशेष रूप से 200 nm से 300 nm के बीच ही होता है और 250 nm पर अधिकतम है। अतएव इन्हीं विकिरणों द्वारा वियोजन होगा। यह एक महत्वपूर्ण बात है कि सौर स्पैक्ट्रम की इन्हीं विकिरणों का ओजोन द्वारा पूर्ण रूप से अवशोषण हो जाता है। यह 30 km से 60 km की ऊँचाई वाले स्तर पर होता है।

इस तरह ओजोन के अणु 200 nm से 300 nm तरंगदैर्ध्य वाली पराबैंगनी किरणों का अवशोषण करके, इन किरणों के हानिकारक प्रभावों से हम सभी की रक्षा करते हैं।

सूर्य की किरणों का वायुमंडल के विभिन्न स्तरों से प्रक्रिया समझने के बाद अब हम इस स्थिति में पहुँच गये हैं कि वायुमंडल के विभिन्न स्तरों के तापमान के उतार-चढ़ाव की मोटे रूप से व्याख्या कर सकते जिसे अब हम समझने का प्रयत्न करेंगे।

## वायुमंडल के विभिन्न स्तरों के ताप में बदलाव का कारण

हम यह देख चुके हैं कि वायुमंडल के विभिन्न स्तरों में ताप घटता बढ़ता है (चित्र 4.1) और एक सा नहीं है। पृथ्वी से ऊपर यात्रा करने पर सबसे पहली परत में, जिसे ट्रोपोस्फीयर कहते हैं, वायुमंडल का तापमान घटता जाता है। यह सिलसिला पृथ्वी के धरातल से लगभग 20 km की ऊँचाई तक चलता रहता है और इस ऊँचाई पर यह ताप घटते-घटते लगभग −75°C तक पहुँच जाता है। इससे ऊपरी दूसरी परत में, जिसे स्ट्रैटोस्फीयर कहते हैं, यह तापमान फिर बढ़ने लगता है और लगभग 60 km की ऊँचाई पर यह तापमान बढ़ते-बढ़ते 0°C हो जाता है। इससे ऊपरी वाली तीसरी परत में, जिसे मैसोस्फीयर कहते हैं, तापमान फिर घटने लगता है और लगभग 90 km की ऊँचाई पर यह तापमान घटते-घटते लगभग −85°C तक पहुँच जाता है। 90 km से अधिक ऊँची वाली चौथी परत है और इसे थर्मोस्फीयर कहते हैं। इस परत में तापमान लगातार बढ़ता जाता है। 400 km की ऊँचाई पर यह लगभग 1000°C हो जाता है। इससे ऊपर वाले अंतरिक्ष की ओर वाले वायुमंडल को ऐक्ज़ोस्फीयर (Exosphere) कहते हैं और यह उच्च तापमान वाला स्तर है।

अब प्रश्न यह है कि पृथ्वी से ऊपर जाने पर पहले तापमान घटता क्यों है, फिर बढ़ता क्यों है, और इसके ऊपर जाने पर घटने के बाद बराबर बढ़ता क्यों चला जाता है? इसका संक्षेप में उत्तर है, सूर्य से प्राप्त ऊर्जा के विभिन्न विकिरण का वायुमंडल के चारों स्तरों में भिन्न-भिन्न प्रक्रिया के कारण विकिरण का विभिन्न अवशोषण। इसको विस्तार से समझने से पहले यह याद रखने की बात है कि चारों स्तरों के वायुमंडल की संरचना

अलग-अलग है जो सूर्य के विकिरण के विभिन्न अवशोषण के कारण उत्पन्न होती है। जैसा कि हम चित्र 6.2 से देख सकते हैं, ट्रोपोस्फीयर के वायुमंडल में साधारण गैसों के अणु हैं जिनमें मुख्यतया $O_2$, $N_2$, $CO_2$, Ar और दूसरी अक्रिय गैसें हैं जो उदासीन (neutral) रूप में हैं। इसके अलावा $H_2O$ वाष्प की कुछ मात्रा है जो समय और स्थान के हिसाब से बदलती रहती है। इससे ऊपरी दूसरी स्तर स्ट्रैटोस्फीयर के वायुमंडल में साधारण गैसों के अलावा थोड़ी-सी मात्रा में ओजोन $O_3$ के अणु विद्यमान हैं। तीसरी परत में जो 90km तक की ऊँचाई तक है, अब अणुओं के स्थान पर गैसों के परमाणु विशेष रूप से O परमाणु, विद्यमान हैं।

यह पाया गया है कि 90 km से नीचे वाले वायुमंडल की गैसें आपस में अच्छी प्रकार मिश्रित हैं अर्थात् किसी ऊँचाई पर जो संरचना एक स्थान पर है वही दूसरे स्थान पर है। दूसरे शब्दों में 90 km की ऊँचाई तक का वायुमंडल एक समान (homogenous) है और इसे होमोस्फीयर (homosphere) कहते हैं। इससे ऊपरी आकाश के वायुमंडल की संरचना सब स्थानों पर एक सी नहीं है। 90 km से ऊपरी वायुमंडल को हिटरोस्फीयर (heterosphere) कहते हैं। यहाँ हाइड्रोजन और हीलियम गैसें हैं। इनकी मात्रा कम है, परन्तु 700 km की ऊँचाई पर लगभग ये ही गैसें हैं।

अब सर्वप्रथम ट्रोपोस्फीयर पर ध्यान दें। इस स्तर के वायुमंडल के लिए सौर ऊर्जा का वह भाग जो निकट पराबैंगनी किरण ($\lambda > 310$ nm) से लेकर निकट अवरक्त किरण ($\lambda > 700$ nm) तक है, लगभग पारदर्शी है। इस भाग में सूय की ऊर्जा का लगभग 98% है। अतएव यह ऊर्जा पृथ्वी की सतह पर पड़ती है और पृथ्वी और वायुमंडल को गरम करती है। फलस्वरूप पृथ्वी के भूमंडल का औसत तापमान लगभग 15°C है। ट्रोपोस्फीयर के निचली परतों को पृथ्वी से ऊर्जा मिलती है और वह गरम हो जाती है। यह गरम हवा ऊपर उठती है और इस कारण नीचे से ऊपर एक प्रवाह चल पड़ता है (विभेदी ताप के कारण भूमंडल पर हवाओं के प्रवाह का विस्तार से अध्ययन अध्याय 12 में दिया गया है)। इसके अलावा एक और प्रभाव है जिसे हमें समझना होगा। हम जानते हैं कि जैसे-जैसे हम ऊपर

जाते हैं, वायुमंडल का दाब घटता जाता है। जब निचले स्तर की हवा जहाँ दाब अधिक है, ऊपर की ओर, जहाँ दाब कम है, उठती है, तब हवा का आयतन बढ़ेगा अर्थात् हवा का प्रसार होगा। हवा का एक विशिष्ट गुण है कि जब हवा का प्रसार होगा तब ताप घटेगा। यदि इस क्रिया में बाहरी स्रोत से न ऊर्जा अन्दर आये और न बाहर जाये, इसे रूद्धोष्म प्रसार (adiabatic expansion) कहते हैं। अतएव यदि कोई और कारण बीच में न आ जाये, तो रूद्धोष्म प्रसार के कारण, जैसे-जैसे हम ऊपर जायेंगे, तो तापमान घटता जायेगा। इस प्रभाव को विस्तार से अध्याय 13 में दिया गया है। वास्तव में, ताप नापने पर ट्रोपोस्फीयर में यही पाया जाता है कि ऊँचाई के साथ ताप घटता जाता है, जो मुख्यतया ऊपर उठती हुई हवा के रूद्धोष्म प्रसार के कारण है। इसलिए यदि वायुमंडल की संरचना ऊँचाई के साथ स्ट्रैटोस्फीयर वाली ही बनी रहे तो यह ताप के घटने का कार्यक्रम ऊँचाई के साथ चलता रहना चाहिए क्योंकि यह हवा का प्रसार तो ऊँचाई के साथ होता ही रहेगा। परन्तु 20 km की ऊँचाई पर ताप का घटना रुक जाता है और उसके ऊपर ताप बढ़ने लगता है। अब हम यह जानना चाहेंगे कि ऐसा क्यों होता है?

जैसा कि हम जानते हैं कि 20 km से ऊपर वाली परत स्ट्रैटोस्फीयर में ताप बढ़ता जाता है और लगभग 60 km की ऊँचाई पर यह ताप 0°C हो जाता है। यह तभी संभव है जब इस परत में बाहर से ऊर्जा आ रही हो जो इसे गरम कर रही हो। स्पष्ट है यह ऊर्जा सूर्य की किरणों द्वारा मिल रही है। हम देख चुके हैं कि स्ट्रैटोस्फीयर वाली परत में रासायनिक अभिक्रिया (Photochemical reaction) के कारण $O_2$ अणु टूट कर O परमाणु बनते हैं और ओजोन $O_3$ अणु का निर्माण होता रहता है। हम देख चुके हैं कि अणु को तोड़ने के लिए पराबैंगनी किरण $\lambda = 272$ nm प्रयोग होती है। अतएव इस स्तर पर इन किरणों का अवशोषण होगा। अब $O_3$ अणुओं पर विचार कीजिए। ओजोन के अणुओं द्वारा सौर ऊर्जा का वह भाग जो 200 nm से 300 nm तक है विशेष रूप से अवशोषण होता है। इस तरह सौर ऊर्जा का यह भाग इसी स्तर में अवशोषण हो जाता है और इस स्तर को गरम करता है। इस तरह लगभग 20 km से 60 km की परत के तापमान में वृद्धि होती है।

अब 50 km से 100 km वाले मैसोस्फीयर स्तर पर ध्यान दें। यहाँ के वायुमंडल में, हम देख चुके हैं, सूर्य की किरणों द्वारा अणु टूटकर परमाणु बन जाते हैं। विशेष रूप से यहाँ O के परमाणु विद्यमान हैं जैसा कि चित्र 6.2 में दर्शाया गया है। इस स्तर में पराबैंगनी किरणें स्पैक्ट्रम का एक छोटा-सा भाग जो $\lambda = 100$ nm से $\lambda = 210$ nm तक है, अवशोषण होता है (देखिए चित्र 5.3)। यह ऊर्जा थोड़ी-सी है और इस स्तर का तापमान घटता जाता है। लगभग 90 km पर तापमान −85°C हो जाता है।

अन्त में अब ध्यान सबसे ऊपर वाले स्तर थर्मोस्फीयर पर दें। यहाँ पर ऊँचाई के साथ ताप बढ़ता ही जाता है। जैसा कि हम देख चुके हैं सूर्य की छोटी तरंगदैर्ध्य वाली विकिरण $\lambda < 100$ nm अर्थात् $\gamma$- किरण और X- किरणें और अत्यन्त छोटी वाली पराबैंगनी किरणें इस स्तर पर परमाणु को तोड़कर आयनीकरण कर देते हैं। और इस स्तर में पूर्ण रूप से इनका अवशोषण हो जाता है। थोड़ा-सा पराबैंगनी किरणों का भी अवशोषण रासायनिक अभिक्रिया के कारण होता है। यह सब ऊर्जा ऊपरी स्तर को गरम करने में प्रयोग होती है। इसके अलावा ऊपरी स्तर में सीधे सूर्य से ऊर्जा सूर्य वात (Solar wind) के रूप में आती है। इस तरह यह स्तर ऊपर से गर्म होता है और ताप बढ़ता जाता है।

अध्याय 7

# ओजोन की परत और उसके ह्रास से विश्व का संकट : आधुनिक प्रेक्षण

आजकल ओजोन की परत, ओजोन छिद्र आदि के विषय पर बहुत चर्चा है। हम यह विचार करेंगे कि वास्तव में यह समस्या है क्या, क्यों उत्पन्न हो गई है और उसका क्या समाधान है? इस समस्या के महत्व का इसी बात से पता चलता है कि 1995 का रसायन विज्ञान का नोबेल पुरस्कार तीन वैज्ञानिकों को उनके उस महत्वपूर्ण कार्य पर दिया गया जो उन्होंने वायुमंडल के रसायन विषय पर विशेष रूप से ओजोन के निर्माण तथा इसके टूटने पर किया है। ये तीन वैज्ञानिक हैं:

1. पाल जे. क्रुटजेन (मैक्स प्लांक इन्स्टीट्यूट फुर केमी)
   (Paul J. Crutzen, Max Planck Institute für Chemie)
2. मेरियो जे. मोलिना (मैसाच्यूसेट्स इन्स्टीट्यूट ऑफ टैक्नोलॉजी)
   (Mario J. Molina Massachusetts Institute of Technology)
3. एफ.शेरवुड रोलैंड (यूनिवर्सिटी ऑफ कैलीफोर्निया, इरविन)
   (F. Sherwood Rowland, University of California at Irvin)

पहले तो हम इस पर विचार करें कि क्या ओजोन की कहानी बस अब कुछ ही वर्षों से शुरू हुई है? ओजोन गैस का बनना और इसका विघटन क्या पहले नहीं होता था? अब ऐसी कौन-सी नई बात हो गई जिस कारण सब चिन्तित हैं? सच तो यह है कि जब से हमारे वायुमंडल में आक्सीजन गैस बनी होगी और उसके ऊपर सूर्य की किरणें पड़ी होंगी तभी से ओजोन का बनना और विघटन होना चलता आ रहा है। अब कई प्रश्न उठते हैं। पृथ्वी के वायुमंडल में यह ओजोन कितनी मात्रा में है, और किस तरह वायुमंडल में फैली है, वायुमंडल की किस परत में यह गैस है? पिछले कुछ वर्षों में यह गैस कहाँ पर और कितनी कम हो गई है? इस कमी का हम सब पर क्या प्रभाव पड़ेगा? आदि। संक्षेप में हम इनके उत्तर देंगे।

## ओजोन का वायुमंडल में वितरण और मात्रा

हम देख चुके हैं कि ओजोन, वायुमंडल में सूर्य की किरणों द्वारा उत्पन्न होती है। वायुमंडल के स्ट्रैटोस्फीयर स्तर में, सूर्य की किरणों से प्रकाश रासायनिक अभिक्रियाएँ (photochemical reaction) होती रहती हैं। इन क्रियाओं द्वारा प्राकृतिक रूप से ओजोन उत्पन्न होती है और उसका विघटन भी। अन्त में इस प्रकार एक गतिक-संतुलन स्थापित हो जाता है। चूँकि ओजोन सूर्य की किरणों द्वारा उत्पन्न होती है, अतः यह सोचना स्वाभाविक है कि भूमध्य रेखा के निकट ओजोन की उत्पत्ति अधिक होगी। कारण यह है कि भूमध्य रेखा के निकट वाले क्षेत्र (ऊष्ण कटिबंधीय क्षेत्र (tropics)) के वायुमंडल पर सूर्य की किरणें अधिक लम्बवत् पड़ती हैं जिसके फलस्वरूप इस क्षेत्र के स्ट्रैटोस्फीयर में ओजोन का बाहुल्य होना चाहिए। परन्तु प्रेषणों से ऐसा नहीं पाया गया है। ओजोन मध्य अक्षांश (mid-latitude) और ध्रुव के बीच पाई जाती है। मध्य अक्षांश में ओजोन गैस की अधिकतम मात्रा वायुमंडल की 10 km से 30 km की ऊँचाई पर पाई जाती है जबकि भूमध्य रेखा (equator) के पास वाले उष्ण कटिबन्धीय क्षेत्र में ओजोन की अधिकतम मात्रा वायुमंडल की 20 km से 40 km की ऊँचाई पर पाई जाती है।

अब प्रश्न यह है कि जब ओजोन का अधिकतम उत्पादन भूमध्य रेखा के पास वाले क्षेत्र में होता है तो ओजोन की मात्रा पृथ्वी के मध्य अक्षांश के पास वाले क्षेत्र में अधिक क्यों है? इसका एक स्पष्ट कारण है कि भूमध्य रेखा के पास उत्पादन के बाद ओजोन गैस का ध्रुव की ओर परिवहन हो जाता है। इसका अर्थ यह हुआ कि वायुमंडल के स्ट्रैटोस्फीयर वाले स्तर में, जहाँ ओजोन की उत्पत्ति होती है वहाँ हवा की एक धारा है जो भूमध्य रेखा से ध्रुव की ओर बह रही है। यह धारा ओजोन को बहाकर ले जाती है। वास्तव में यही बात है। इसका कारण यह है कि भूमध्य रेखा के पास वाले क्षेत्र पर अधिक सौर ऊर्जा पड़ती है। इसलिए वहाँ का ताप अधिक होगा और वहाँ की हवा गर्म होकर ऊपर उठेगी। उसका स्थान लेने के लिए निकटवर्ती उत्तरी और दक्षिणी क्षेत्र से हवा की एक धारा चल पड़ेगी। इस तरह एक स्थिर वायु की धारा स्थापित हो जायेगी। इस धारा में स्ट्रैटोस्फीयर की ऊँचाई के स्तर पर गर्म हवा भूमध्य रेखा से ध्रुव की ओर जायेगी और ध्रुव पर ठंडी होकर नीचे उतरेगी। इसके विपरीत वायुमंडल के निचले ट्रोपोस्फीयर स्तर पर ठंडी हवा ध्रुव से भूमध्य रेखा की ओर चलेगी। वास्तव में स्ट्रैटोस्फीयर स्तर पर हवा का यह पथ आधे रास्ते तक ही सीधा जाता है। उसके बाद वह तरंगों के रूप में ध्रुव तक जाता है। हवा के इस रास्ते के टूटने के कई कारण हैं। मुख्य कारण है पृथ्वी का अपने अक्ष पर तेजी से घूर्णन करना।

अब प्रश्न उठता है कि वायुमंडल में ओजोन की मात्रा कितनी है? यदि यह प्रश्न आक्सीजन के बारे में पूछा जाए तो उत्तर होगा कि आयतन के हिसाब से आक्सीजन वायुमंडल का लगभग 20 प्रतिशत है। यह उत्तर इसलिए सही है क्योंकि सब स्थानों पर पृथ्वी के स्तर पर तथा पृथ्वी से काफी ऊँचे स्तरों पर भी आक्सीजन एकसमान रूप से लगभग 20 प्रतिशत है। परन्तु ओजोन गैस में ऐसा नहीं है। पहली बात तो यह है कि ओजोन पृथ्वी की सतह पर तो बहुत कम है। केवल स्ट्रैटोस्फीयर की सतह में ही है। मान लीजिए 20 km से 40 km की ऊँचाई के बीच है तो क्या ओजोन परत की मोटाई 20 km कह सकते हैं? नहीं। इसके दो कारण हैं। पहले तो इस परत में भी ओजोन एकसमान रूप से नहीं बिखरी हुई है। दूसरे वायुमंडल का उस ऊँचाई पर दाब बहुत कम है तथा ताप भी कम है। यदि हम इस ओजोन की परत को मानक दाब और ताप (760 mmHg तथा 0°C) पर

इकट्ठा कर दें तब इस परत की मोटाई क्या होगी? आपको आश्चर्य होगा जब इस परत की मोटाई केवल 2-3 mm ही होगी। ओजोन की परत की मोटाई को बताने के लिए एक मात्रक प्रयोग किया जाता है जिसे डाबसन मात्रक (Dobson unit, DU) कहते हैं (मानक दाब व ताप पर 100 DU = 1 mm ओजोन की मोटाई)।

## ओजोन परत के ह्रास के आधुनिक प्रेक्षण : ओजोन छिद्र

स्ट्रैटोस्फीयर स्तर पर एक हवा की धारा बहती है। इसकी तीव्रता तथा दिशा थोड़ी-थोड़ी बदलती रहती है। इस कारण ओजोन की परत की मोटाई समय के साथ जगह-जगह पर बदलती रहती है। ओजोन की परत का नाप, उपग्रहों द्वारा और पृथ्वी पर रखे संयंत्रों द्वारा पिछले कई दशकों से किया जा रहा है, और बराबर अध्ययन चल रहा है। 1985 में अचानक चौंका देने वाले कुछ परीक्षण सामने आये जब जोजेफ फारमैन (Joseph Farmann) और उनके साथियों ने दक्षिणी ध्रुव (Antarctica) के ऊपर वहाँ के बसंत (Spring) मौसम में सितम्बर, अक्तूबर के माह में ओजोन की परत नापी। उन्होंने लगभग 50% का ह्रास देखा। दक्षिणी ध्रुव पर इस ह्रास का क्षेत्रफल तथा उसकी मात्रा पिछले कई वर्षों से नापी जा रही है। दोनों में बढ़ोतरी दिखाई दे रही थी। दो-तीन साल पहले ओजोन परत 100 DU के आस पास नापी गई जबकि ह्रास से पहले ओजोन परत 275 DU नापी गई थी। दक्षिण ध्रुव के पास, काफी बड़े क्षेत्रफल में ओजोन की परत में 50% से भी अधिक ह्रास से सभी चिन्तित हुए। दक्षिणी ध्रुव के इस ह्रास को पृथ्वी पर फैली हुई ओजोन की परत में एक बड़े छेद के रूप में देखा जा रहा है। इसे ओजोन छिद्र (Ozone hole) का नाम दिया गया है।

## ओजोन परत का प्रभाव और उसका कारण

अब यह प्रश्न स्वाभाविक है कि ओजोन की परत ऐसा क्या करती है कि उसकी मोटाई कम हो जाने से हम सभी चिन्तित हैं? इसका संक्षेप में उत्तर है कि सूर्य से आई हुई पराबैंगनी-बी *

* 320 nm - 400 nm को पराबैंगनी-ए; 280nm - 320nm को पराबैंगनी-बी; 100nm - 280nm को पराबैंगनी-सी कहा जाता है।

(Ultraviolet-B) किरणों को, ओजोन गैस, वायुमंडल में ही रोक लेती है और पृथ्वी तक पहुँचने नहीं देती है। ये पराबैंगनी किरणें यदि हमारे शरीर पर पड़ें तो त्वचा कैंसर (skin cancer) होने की संभावना बढ़ जाती है। पेड़ पौधों के क्लोरोफिल पर भी इसका बुरा असर पड़ने की सम्भावना है। इस तरह ओजोन की परत हम सबके लिए कवच का काम करती है।

पराबैंगनी किरणों को रोकने में ओजोन गैस सक्षम क्यों है? इसका उत्तर है कि वे पराबैंगनी किरणें जिनका तरंगदैर्ध्य $\lambda = 200$ nm से 310 nm के बीच है, ओजोन गैस अणुओं के साथ क्रिया करके उसका विभाजन करती है जिसे प्रकाश अणु विभाजन कहते हैं। इस क्रिया में ये पराबैंगनी किरणें लगभग पूर्ण रूप से अवशोषित हो जाती हैं। सूर्य प्रकाश में इन पराबैंगनी किरणों की मात्रा लगभग 1.75 प्रतिशत होती है। वायुमंडल के 30 km से 60 km की ऊँचाई के बीच यह क्रिया होती है जहाँ उनका अवशोषण हो जाता है। इसके बाद पृथ्वी की ओर जाने के लिए ये किरणें बिलकुल नहीं बचतीं।

## ओजोन के ह्रास के मानवीय कारण और समाधान

यह बात फिर से याद रखने की है कि वायुमंडल में ओजोन गैस सूर्य की किरणों द्वारा प्राकृतिक रूप से उत्पन्न होती है और उसके कुछ अंश का विघटन भी होता रहता है। इस तरह एक गतिक-संतुलन बना रहता है। परन्तु इधर कुछ दशकों से मानवीय गतिविधियाँ इस संतुलन को बिगाड़ रही हैं। फलस्वरूप ओजोन की परत का बहुत कुछ ह्रास हुआ है।

अब प्रश्न यह है कि वे कौन-सी गतिविधियाँ हैं जिनके कारण ओजोन का ह्रास हुआ है? ये गतिविधियाँ कब से शुरू हुईं? इसका समाधान क्या है? सच पूछिये तो ये गतिविधियाँ 1930 में प्रारम्भ हुई जब एक अत्यन्त उपयोगी रसायनों की शृंखला का आविष्कार हुआ। इन रसायनों का नाम है क्लोरोफ्लुओरो कार्बन (Chlorofluro carbons, CFC's)। ये रसायन, निष्क्रिय रसायन हैं और प्रशीतन (refrigeration) उद्योग में बहुत उपयोगी सिद्ध हुए हैं। फ्रिज और एयरकंडीशनर में यह गैस प्रयोग की जाती है। इसी तरह का एक और रसायन

क्लोरोकार्बन (chlorocarbon, CC) है, जिसमें मुख्यतया ट्राइक्लोरईथेन (मिथाइल क्लोरोफार्म) (methyl chloroform) है। यह इलैक्ट्रानिकी घटकों तथा कारों के कलपुर्जों को साफ करने के लिए प्रयोग किया जाता है। 1970 में ध्वनि से भी तीव्र चलने वाले व्यावसायिक हवाई जहाजों के चलाने का प्रस्ताव रखा गया। ये हवाई जहाज स्ट्रैटोस्फीयर के निचले स्तर में उड़कर वहीं पर अपना धुआँ (exhaust) निकालते हैं। इन्हीं गतिविधियों से निकली गैसों द्वारा ओजोन का ह्रास होता है।

ऊपर बताये गये तीन नोबेल पुरस्कार विजेता वैज्ञानिकों की रिसर्च के आधार पर, ओजोन का ह्रास किस प्रकार होता है, समझा जा सकता है। CFC जैसी निष्क्रिय गैस जब स्ट्रैटोस्फीयर में पहुँचती है तब सूर्य की पराबैंगनी किरणों द्वारा उसका विघटन हो जाता है और फलस्वरूप क्लोरीन (chlorine) के परमाणु और क्लोरीन मोनोआक्साइड (ClO) उत्पन्न हो जाते हैं। यही Cl तथा ClO बाद में $O_3$ ओजोन तथा O, जो उस स्तर पर विद्यमान हैं, के साथ रासायनिक क्रिया करते हैं। इस कारण ओजोन अणु, $O_3$ टूटकर $O_2$ अणु बन जाते हैं। यह एक उत्प्रेरिक अभिक्रिया (catalytic reaction) है। इस क्रिया के अन्त में Cl फिर से उत्पन्न हो जाती है। यह क्रिया इस प्रकार है–

$$O_3 + Cl \rightarrow O_2 + ClO$$

$$ClO + O \rightarrow O_2 + Cl$$
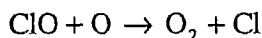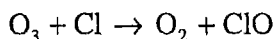
इन रासायनिक क्रियाओं को इस तरह समझना चाहिए। शुरू में Cl परमाणु ने $O_3$ को तोड़कर एक $O_2$ अणु बनाया और स्वयं ClO बन गया। फिर ClO ने एक O परमाणु से क्रिया करके एक $O_2$ अणु बनाया और Cl परमाणु वापस पैदा हो गया। इस प्रकार की उत्प्रेरक रासायनिक अभिक्रियाएँ कुछ और कई रसायनों जैसे NO तथा $NO_2$ आदि के द्वारा हो सकती हैं जो वाहनों और मानव गतिविधियों द्वारा उत्पन्न होते हैं। इनकी क्रिया इस प्रकार है –

$$O_3 + NO \rightarrow O_2 + NO_2$$

$$NO_2 + O \rightarrow O_2 + NO$$
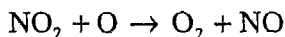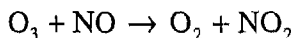
चूँकि इन रासायनिक क्रियाओं में ओजोन का विघटन करने के बाद ये विध्वंशक रसायन फिर से उत्पन्न हो जाते हैं, अतएव स्ट्रैटोस्फीयर में इन विनाशकारी रसायनों की बड़ी लम्बी उम्र है। कई दशक तक ये विनाश करते रहते हैं।

मानव को इसका समाधान बहुत जल्दी ढूँढ़ना है। इस प्रकार की विनाशकारी गैसें जितनी मात्रा में वायुमंडल में पहले से छोड़ी जा चुकी हैं, उसका फल तो मानव भुगतेगा ही। परन्तु अब भविष्य में इस प्रकार की और गैसें न छोड़ी जाएँ। इसी उद्‌देश्य का 1987 में एक अन्तर्राष्ट्रीय समझौता मान्ट्रियाल प्रोटोकाल (Montreol Protocol) के नाम से हुआ और CFC तरह की गैसों को वायुमंडल में छोड़ने पर प्रतिबंध लगाया गया। 1992 में कोपेनहेगेन (Copenhagen) में यह निश्चय पक्का किया गया कि विकासशील देश 1995 तक CFC आदि गैसों पर पूर्ण प्रतिबंध लगा दें। प्रेक्षणों से पता चला है कि इस प्रतिबंध का बहुत हद तक पालन हो रहा है और CC (trichloroethane) तथा CFC गैसें वायुमंडल में धीरे-धीरे घट रही हैं। प्रशीतन (refrigeration) उद्योगों के प्रयोग के लिए CFC गैसों का विकल्प ढूँढ़ा जा रहा है। इसमें काफी सफलता भी मिल गई है। परन्तु अभी तक, $N_2O$ (nitrous oxide) गैस की मात्रा धीरे-धीरे वायुमंडल में बढ़ रही है जिसका कारण ठीक से पता नहीं है। वायुमंडल के प्रदूषण की समस्या एक बड़ी और व्यापक समस्या है। इसका अध्ययन हम अलग से करेंगे।

अध्याय 8

# सूर्य, वायुमंडल और पृथ्वी का पारस्परिक ऊर्जा का संतुलन-एक मात्रात्मक विवरण

इस पृथ्वी का लगभग एक-तिहाई भाग धरती है और दो-तिहाई भाग समुद्र है। धरती की सतह पर प्राणी, पौधे और तरह-तरह के जीव-जन्तु रहते हैं जो आपस में एक दूसरे से तथा पृथ्वी और वायुमंडल से लगातार प्रक्रिया करते हैं। दूसरी ओर समुद्र है जिसमें भी जन्तु रहते हैं। समुद्र भी वायुमंडल से प्रक्रिया करता है। पृथ्वी पर सूर्य की किरणें लगातार पड़ती हैं, जिसके कारण इन सबकी क्रियाएँ प्रभावित होती हैं। इन सबके पारस्परिक संबंध से वायुमंडल प्रभावित होता है। इस पारस्परिक संबंध पर हम विचार करेंगे।

सबसे पहले हम सूर्य और पृथ्वी के पारस्परिक सम्बन्ध पर विचार करेंगे। हमारी पृथ्वी पर बराबर सूर्य की किरणें पड़ती हैं। इससे पृथ्वी को लगातार सौर ऊर्जा प्राप्त होती रहती है। फलस्वरूप दिन-पर-दिन पृथ्वी गर्म होती चली जानी चाहिए थी। वास्तव में ऐसा नहीं होता। क्यों? इस प्रश्न का उत्तर ठीक से समझने के लिए पहले हमें यह पता चलना चाहिए कि सूर्य से कितनी ऊर्जा प्राप्त होती है? इसको जानने के लिए हमें वायुमंडल से ऊपर जाकर सौर ऊर्जा को नापने का प्रयोग करना होगा। कारण यह है कि सूर्य की किरण जब वायुमंडल से होकर गुजरती है तब उसका कुछ भाग वायुमंडल अवशोषित कर लेता है। इसलिए पृथ्वी

की सतह तक सूर्य की किरणों का बचा हुआ भाग ही पहुँचता है। वायुमंडल से ऊपर नापने पर यह पता चलता है कि पृथ्वी पर पड़ने वाली सौर ऊर्जा लगभग $1.37 \times 10^3$ जूल प्रति वर्ग मीटर पर प्रति सेकंड है। इसे सौर स्थिरांक (solar constant) कहते हैं। अतएव इसका मान $1.37 \times 10^3 W/m^2$ है। यह ध्यान रखने की बात है कि $1.37 \times 10^3$ जूल ऊर्जा प्रति सेकंड एक वर्ग मीटर पर तभी प्राप्त होगी जब सूर्य की किरणें उस क्षेत्र पर समकोण दिशा में (at right angle) पड़ेंगी। स्पष्ट है कि यदि किरणें तिरछी पड़ेंगी तो कम ऊर्जा प्राप्त होगी जो इसके कोण पर निर्भर होगा। अब देखिये कि पृथ्वी के किसी स्थान पर सौर ऊर्जा का औसत मान सौर स्थिरांक का केवल 1/4 भाग होगा। इसके दो कारण हैं– एक कारण तो यह है कि आधा समय दिन और आधा समय रात्रि का है। दूसरा कारण यह है कि किसी क्षेत्र पर सुबह की किरणें तिरछी होंगी, दोपहर को सीधी और शाम को फिर तिरछी, जिस कारण उसकी औसत 1/2 ही होगी। अतएव किसी स्थान पर सौर ऊर्जा की गति केवल $\frac{1.37 \times 10^3}{4} = 344 W/m^2$ मानी जानी चाहिए।

अब प्रश्न है कि जब इतनी अधिक ऊर्जा पृथ्वी पर लगातार पड़ रही है तो क्या पृथ्वी का ताप लगातार बढ़ रहा है? हमारा अनुभव है कि औसत तौर पर पृथ्वी का और वायुमंडल का ताप हजारों वर्षों से स्थिर है। इसलिए हम यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि पृथ्वी और वायुमंडल पर अंतरिक्ष से जितनी ऊर्जा पड़ती है, उतनी ही ऊर्जा पृथ्वी और वायुमंडल से उत्सर्जित होकर अंतरिक्ष को वापस चली जाती होगी। वास्तव में यह सही है। ऐसा क्यों होता है? इस बात को अब हम विस्तार से समझेंगे।

इसके लिए हम पृथ्वी और वायुमंडल की सौर ऊर्जा का एक बजट बनायेंगे, जैसे हम अपने घर की आमदनी और खर्चे का बनाते हैं। कितनी ऊर्जा सूर्य से प्राप्त हुई, कहाँ–कहाँ पर यह ऊर्जा गई और उसका क्या हुआ? इसके लिए हमने एक मानचित्र बनाया है। यहाँ ध्यान देने की कुछ बातें हैं। सूर्य से जो विकिरण वायुमंडल के ऊपर आकर पड़ता है उसका एक सतत् स्पैक्ट्रम (continuous spectrum) होता है जिसका एक बड़ा भाग दृश्य–

प्रकाश (visible light) में है। इसका थोड़ा-सा भाग पराबैंगनी क्षेत्र में है और एक भाग निकट अवरक्त क्षेत्र (near infrared) में है। इन तीनों की मिली हुई विकिरण को हम लघु तरंग विकिरण कहेंगे। इसके विपरीत पृथ्वी से और वायुमंडल से जो ऊर्जा उत्सर्जित होती है वह दीर्घ अवरक्त क्षेत्र (long infrared region) में होती है ज़िसे हम दीर्घ-तरंग-विकिरण कहते हैं। अब ऊर्जा बजट इस मानचित्र (चित्र 8.1) में प्रस्तुत है।

जैसा कि हम देख चुके हैं वायुमंडल पर सौर ऊर्जा 344 $J/m^2$ प्रति सेकंड पड़ती है। गणना की आसानी के लिए हम यह मानेंगे कि सूर्य से 100 यूनिट ऊर्जा प्रति सेकंड प्रति वर्ग मीटर वायुमंडल पर पड़ी है (अर्थात् चित्र का एक यूनिट 3.4 के बराबर है)। जैसा कि चित्र में दिखाया गया है। जब सूर्य की किरणें वायुमंडल से होकर गुजरती हैं, तब इस लघु तरंग का 19 + 4 = 23 भाग जलवाष्प, धूल, $O_3$ तथा बादलों द्वारा अवशोषित हो जाता है। दूसरी ओर 8 + 17 + 6 = 31 भाग वायु, बादल और पृथ्वी से लघु तरंग प्रकाश के रूप में ही परावर्तित होकर अंतरिक्ष को वापस चला जाता है। लघु तरंग का शेष 46 भाग पृथ्वी अवशोषित कर लेती है। ध्यान देने की बात यह है कि सूर्य से 100 यूनिट ऊर्जा आई और 8 + 17 + 6 = 31 यूनिट लघु तरंग के रूप में ही अंतरिक्ष को लौट गई। बाकी 69 लघु तरंग का ब्यौरा इस प्रकार है। 19 + 4 = 23 यूनिट ऊर्जा वायुमंडल में अवशोषित हो गई और 46 यूनिट ऊर्जा पृथ्वी में समा गई। इस तरह 100 यूनिट लघुतरंग ऊर्जा का हिसाब पूरा हो गया।

अब हम यह देख रहे हैं कि 23 यूनिट लघुतरंग ऊर्जा वायुमंडल ने ली और 46 यूनिट लघुतरंग ऊर्जा पृथ्वी ने ले ली। इस ऊर्जा के अवशोषण के कारण वायुमंडल और पृथ्वी दोनों धीरे-धीरे गर्म होते चले जाने चाहिए। परन्तु ऐसा क्यों नहीं होता? कारण यह है कि ये 69 यूनिट लघुतरंग प्रकाश को जलवाष्प आदि तथा पृथ्वी अवशोषित करने के बाद दीर्घतरंग ऊर्जा में परिवर्तित कर देते हैं और अंतरिक्ष को इतनी ही ऊर्जा वापस भेज देते हैं।

चित्र 8.1 के दाहिने ओर देखिये कि 9 + 40 + 20 = 69 यूनिट ऊर्जा अंतरिक्ष को दीर्घ तरंग ऊर्जा के रूप में वापस जाती दिखाई गई है। 31 यूनिट पहले ही लघु तरंग प्रकाश के रूप में वापस जा चुकी थी। इस तरह अंतरिक्ष से 100 यूनिट ऊर्जा आई थी और उतनी ही लौट
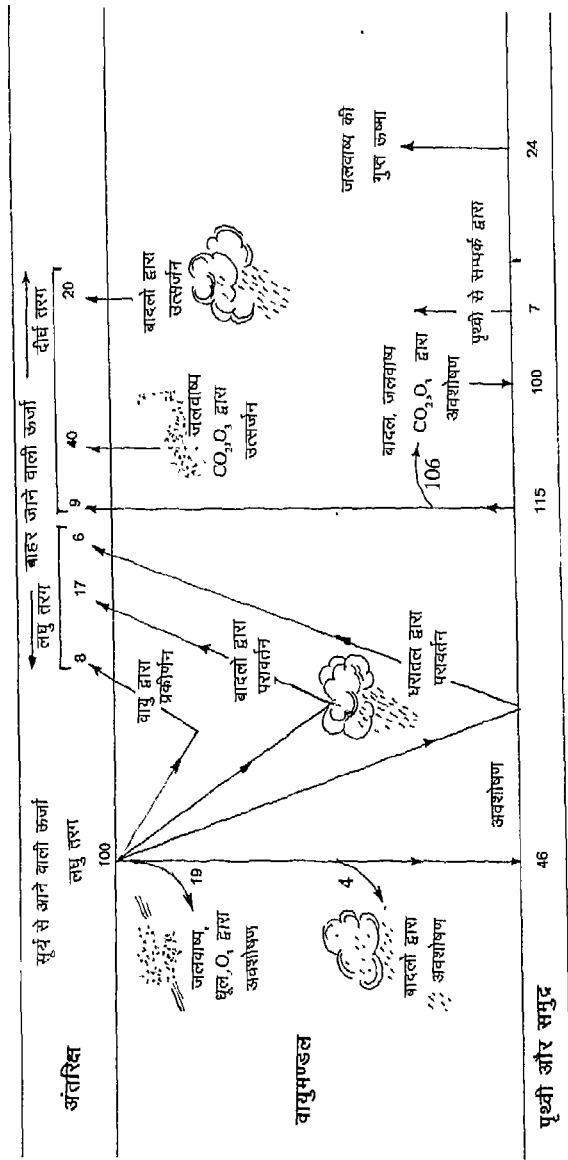
**चित्र 8.1**

**अंतरिक्ष वायुमंडल और पृथ्वी का ऊर्जा बजट**

अंतरिक्ष

अंतरिक्ष से – 100 यूनिट लघु तरंग ऊर्जा आई

अतरिक्ष को – (8 + 17 + 6) = 31 यूनिट लघु तरंग ऊर्जा +
(9 + 40 + 20) = 69 यूनिट दीर्घ तरंग ऊर्जा
= 100 यूनिट ऊर्जा वापस गई

पृथ्वी और समुद्र

पृथ्वी + समुद्र को – 46 यूनिट लघु तरंग ऊर्जा + 100 यूनिट दीर्घ तरंग ऊर्जा
= 146 यूनिट ऊर्जा मिली

पृथ्वी + समुद्र से = 115 + 7 + 24 = 146 यूनिट दीर्घ तरंग ऊर्जा वापस गई

वायुमंडल

वायुमंडल को – (19 + 4) = 23 यूनिट लघु तरंग ऊर्जा +
(106 + 7 + 24) = 137 यूनिट दीर्घ तरंग ऊर्जा
= 160 यूनिट ऊर्जा मिली

वायुमंडल से – 100 यूनिट दीर्घ तरंग ऊर्जा पृथ्वी को वापस

गई। अब प्रश्न यह है कि बादल, पृथ्वी आदि अवशोषित (19 + 4) + 46 = 69 यूनिट लघुतरंग प्रकाश को (9 + 40 + 20) = 69 यूनिट दीर्घतरंग ऊर्जा में कैसे परिवर्तित कर देते हैं? उसका ब्यौरा इस प्रकार है।

प्रत्येक वस्तु से हर समय विकिरण के रूप में ऊर्जा निकलती है। उत्सर्जित ऊर्जा की मात्रा कितनी होगी तथा कौन-कौन सी विकिरण किस वस्तु से निकलेगी, यह उसके परम ताप पर निर्भर है। किसी आदर्श कृष्णपिंड (black body) से कितनी ऊर्जा उत्सर्जित होती है? यह ऊर्जा $T^4$ के अनुपात में होती है जहाँ T उस पिंड का परम ताप है। स्टीफेन बोल्ट्ज़मैन (Stefan Boltzmann) नियम के अनुसार यह ऊर्जा $\delta = \sigma T^4$ होती है, जहाँ $\sigma = 5.67 \times 10^{-8} \frac{W}{m^2 K^4}$ को स्टीफेन बोल्ट्ज़मैन स्थिरांक कहते हैं। समस्त पृथ्वी पर और साल भर का औसत लेने पर पृथ्वी से उत्सर्जित ऊर्जा निकाली जा सकती है। यदि हम पृथ्वी का औसत ताप 16°C मान लें तो

$$\delta = \sigma T^4 = 5.67 \times 10^{-8} (289)^4 = 395 \ W/m^2$$

चूँकि हमने 344 W प्रति मीटर$^2$ को 100 यूनिट माना था, इसलिए 16°C औसत ताप पर पृथ्वी से उत्सर्जित ऊर्जा $\delta = 395 \frac{W}{m^2}$ जो लगभग 115 यूनिट हुई।

यहाँ पर यह चकराने की बात नहीं है कि सूर्य से तो पृथ्वी की ओर 100 यूनिट ऊर्जा आई, तब फिर पृथ्वी 115 यूनिट ऊर्जा कैसे दे सकती है? पृथ्वी अपने ताप T के अनुसार ऊर्जा उत्सर्जित करती है और सूर्य अपने ताप के अनुसार। दोनों का तालमेल हम एक उदाहरण से समझना चाहेंगे और फिर इससे स्पष्ट हो जायेगा। धूप में रखे एक दहकते हुए लोहे के गोले पर विचार कीजिए। गोले पर धूप रूपी सौर ऊर्जा पड़ रही है पर गोला अपने ताप $T^4$ के अनुसार ऊर्जा उत्सर्जित कर रहा है। पास खड़े होने पर अनुभव होगा कि यह उत्सर्जित ऊर्जा धूप से अधिक है। चूँकि इस गोले पर प्राप्त ऊर्जा के मुकाबले में बाहर

निकलने वाली ऊर्जा अधिक है, इसलिए गर्म गोला धीमे-धीमे ठंडा होता जायेगा जब तक कि गोले से उत्सर्जित ऊर्जा धूप के बराबर न पहुँच जाए। यदि यह बर्फ का गोला हो तो इसके विपरीत वह गर्म होकर पिघल जायेगा। पृथ्वी के ताप पर यह उत्सर्जित ऊर्जा ऊष्मा के रूप में दीर्घ अवरक्त तरंगें (long wave infrared rays) होती हैं। इसका अनुभव हमें गर्म सड़क से ऊर्जा निकलते समय होता है।

किसी कृष्णपिंड से कौन-कौन सी तरंगदैर्ध्य वाली विकिरण उत्सर्जित होगी यह उसके परम ताप T पर ही निर्भर है। प्लैंक के विकिरण नियम (Planck's law of radiation) से यह परिकलन किया जा सकता है कि किस तरंगदैर्ध्य के किस मात्रा में कितना विकिरण निकलेगा। पृथ्वी के ताप पर उत्सर्जित स्पैक्ट्रम एक सतत् स्पैक्ट्रम (continuous spectrum) होगा जो लगभग 3μm से 100μm* तक फैला होता है। इसका अधिकतम मान 10μm के आस पास होगा। इस तरंगदैर्ध्य के क्षेत्र को हमने अपने चित्र में दीर्घतरंग या ऊष्मा की तरंग कहा है।

यदि पृथ्वी को 100 यूनिट ऊर्जा प्राप्त हो और वह 115 यूनिट ऊर्जा उत्सर्जित करती रहे तो वह धीरे-धीरे ठंडी हो जायेगी। वास्तव में पृथ्वी से अत्सर्जित ऊष्मा की 115 यूनिट जब अंतरिक्ष की ओर जाती है तो रास्ते के वायुमंडल में बादल, जलवाष्प, $CO_2$, $O_3$, पड़ता है, जो इसमें से 106 यूनिट अवशोषण कर लेते हैं। केवल 9 यूनिट सीधे अंतरिक्ष की ओर जाती है। इस तरह वायुमंडल को पृथ्वी से एक निश्चित मात्रा में ऊर्जा प्राप्त होती है जिससे उसका ताप बढ़ता है। परन्तु वायुमंडल भी अपने ताप पर स्टीफेन बोल्ट्ज़मैन नियम के अनुसार दीर्घ तरंगदैर्ध्य की ऊर्जा को उत्सर्जित करता है जो कि हमारे चित्र में 100 यूनिट के बराबर है (चित्र के दाहिने भाग में नीचे की ओर तीर)। *पृथ्वी से ऊर्जा प्राप्त करके वायुमंडल का गर्म होना और फिर पृथ्वी को ऊर्जा वापस देना हरित गृह प्रभाव (Green house effect) कहलाता है।* अध्याय 10 में हम इस प्रभाव का विस्तारपूर्वक अध्ययन करेंगे। ऊर्जा का यह आदान-प्रदान ही हरित गृह प्रभाव है, जिसकी आजकल इतनी चर्चा है। इसके अलावा

---

$1\ \mu m = 10^{-6}\ m = 10^{3} nm$

वायुमंडल को पृथ्वी से दो अलग प्रकार से ऊर्जा प्राप्त होती है। एक तो वायुमंडल पृथ्वी को छूता है और दूसरे पृथ्वी का पानी वाष्प बनकर वायुमंडल में आता है। इन दोनों के कारण, पृथ्वी से वायुमंडल को 7 यूनिट ऊर्जा तथा 24 यूनिट ऊर्जा अर्थात् 24+7=31 यूनिट ऊर्जा प्राप्त होती है। अब ऊर्जा बजट की आखरी कड़ी इस प्रकार है। वायुमंडल में विद्यमान जल वाष्प, $CO_2$, $O_3$ द्वारा 40 यूनिट ऊर्जा अंतरिक्ष को जाती है। इसके अलावा इसी तरह 20 यूनिट ऊष्मीय ऊर्जा बादलों से अंतरिक्ष की ओर जाती है।

अब देखिये कुल मिलाकर हमारे ऊर्जा के बजट संतुलन किस तरह हैं? पहले अंतरिक्ष पर ध्यान दीजिए। अंतरिक्ष से 100 यूनिट ऊर्जा लघुतरंग प्रकाश के रूप में वायुमंडल पर पड़ी। इसमें से 31 यूनिट प्रकाश (लघुतरंग) के रूप में ही वापस लौट गई तथा (9 + 40 + 20) = 69 यूनिट दीर्वतरंग वाली ऊष्मीय ऊर्जा पृथ्वी और वायुमंडल से अंतरिक्ष की ओर आई। इस तरह 31+69 = 100 यूनिट ऊर्जा वापस अंतरिक्ष को चली गई।

अब वायुमंडल पर विचार कीजिए। वायुमंडल को 19 + 4 = 23 यूनिट सूर्य से लघु तरंग रूपी ऊर्जा मिली तथा 106 यूनिट दीर्घतरंग उत्सर्जित ऊर्जा पृथ्वी से मिली। इसके अलावा 7 + 24 = 31 यूनिट दीर्घतरंग ऊष्मीय ऊर्जा वायुमंडल को पृथ्वी से उसके सम्पर्क के कारण तथा जलवाष्प की गुप्त ऊर्जा के कारण मिलती है। इस तरह कुल 23 + 106 + 7 + 24 = 160 यूनिट ऊर्जा वायुमंडल को मिली। अब देखिये वायुमंडल ने 100 यूनिट दीर्घतरंग ऊर्जा पृथ्वी को तथा 40 + 20 = 60 यूनिट अंतरिक्ष को दीर्घतरंग की ऊर्जा दी। अर्थात् 160 यूनिट ऊर्जा मिली और उतनी ही चली गई।

अब पृथ्वी पर विचार कीजिए। इसे 46 यूनिट लघुतरंग प्रकाश रूपी ऊर्जा तथा 100 यूनिट ऊष्मीय ऊर्जा वायुमंडल से मिली। कुल मिलाकर 146 यूनिट। पृथ्वी ने 115 यूनिट दीर्घतरंग ऊर्जा वायुमंडल को उत्सर्जित करके दी तथा 7 + 24 = 31 यूनिट ऊष्मा के फ्लक्स के रूप में दी। अर्थात् 115 + 31 = 146 यूनिट ऊर्जा वायुमंडल को दे दी। इस तरह जितनी ऊर्जा पृथ्वी को मिली उसने उतनी ही वापस दे दी।

यह है सम्पूर्ण संतुलन। अंतरिक्ष, वायुमंडल, पृथ्वी तीनों जितनी ऊर्जा लेते हैं, उतनी ही वापस देते हैं। अतएव इस प्रक्रिया में तीनों का तापमान स्थिर है। यह प्रकृति का संतुलन है। पृथ्वी पंर बराबर धूप पड़ती है और फिर भी पृथ्वी का ताप स्थिर है। इसी तरह वायुमंडल का ताप भी बराबर स्थिर है। सूर्य से पृथ्वी और वायुमंडल दोनों को प्रकाश रूपी लघुतरंग ऊर्जा प्राप्त होती है परन्तु पृथ्वी और वायुमंडल आपस में ऊर्जा का आदान-प्रदान करते रहते हैं। यह ध्यान देने की बात है कि संतुलन की बात समस्त पृथ्वी तथा साल भर की औसत लेने के बाद ही कही जाती है। स्थानीय तथा दैनिक परिवर्तन तो होता रहता है।

अब यह स्पष्ट है जिस रात को बादल घिरे होते हैं वह रात अपेक्षाकृत गरम होती है। कारण यह है कि पृथ्वी से उत्सर्जित ऊर्जा अंतरिक्ष को वापस नहीं जा पाती है। अत: वह बादलों में रुक कर वायुमंडल को गर्म कर देती है।

अध्याय 9

# वायुमंडल में कार्बन डाइआक्साइड तथा आक्सीजन का संतुलन

वायुमंडल में लगभग 20 प्रतिशत आक्सीजन ($O_2$) है और केवल 0.03 प्रतिशत कार्बन डाइआक्साइड $CO_2$ गैस है। इतनी थोड़ी मात्रा में होते हुए भी $CO_2$ का इस पृथ्वी तथा वायुमंडल के ताप का संतुलन बनाये रखने में बहुत महत्त्वपूर्ण योगदान है। इसीलिए वायुमंडल में $O_2$ तथा $CO_2$ का आपसी संतुलन बनाये रखना बहुत आवश्यक है। यह संतुलन प्रकृति ने लाखों साल से वायुमंडल में बनाया हुआ है।

प्रश्न है कि प्रकृति ने वायुमंडल में $CO_2$ तथा $O_2$ का आपस में संतुलन किस प्रकार बना रखा है? इस प्रश्न का एक महत्वपूर्ण पहलू है पौधों और प्राणियों का पारस्परिक संबंध। पहले हम इस पर विचार करेंगे।

वायुमंडल में $CO_2$ तथा $O_2$ का संतुलन रखने के लिए प्रकृति ने एक प्रकाश संश्लेषण (photosynthesis) की अद्‌भुत फैक्ट्री बनाई है, जिस कारण जीवित प्राणी और पौधे आपस में एक दूसरे को भोजन देते हैं। सरल शब्दों में जीवित रहने के लिए मनुष्य तथा अन्य प्राणी, वायुमंडल से आक्सीजन अपनी श्वास में लेते हैं और $CO_2$ बाहर निकालते हैं। इसी
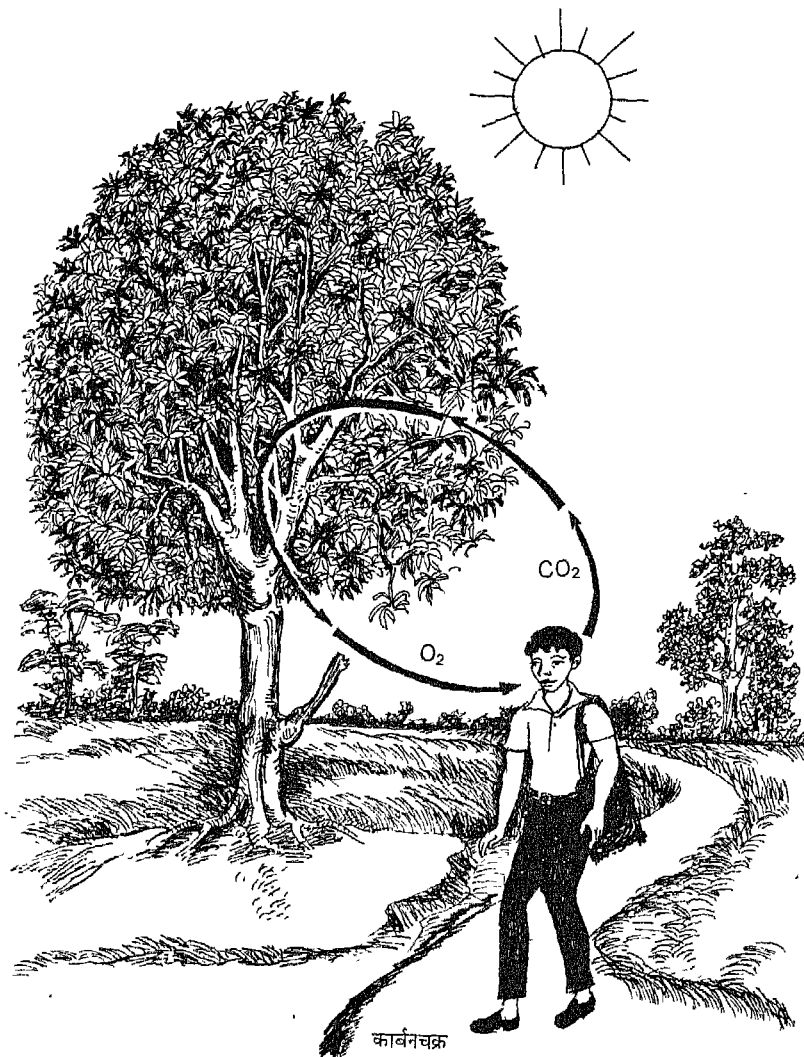
चित्र 9.1

$CO_2$ को पौधे अपने पोषण के लिए अन्दर लेते हैं और आक्सीजन $O_2$ बाहर निकालते हैं। और इस तरह यह चक्र जिसे कार्बन चक्र (carbon cycle) कहते हैं, चलता रहता है।

इस चक्र की क्रिया जटिल है जो इस प्रकार है। पौधे तथा सब जीवित प्राणी कार्बन के यौगिक (Compound) से बने हुए हैं। अर्थात् जितने जैविक अणु हैं वे सब कार्बन के यौगिक हैं। पहले पौधों को लीजिए। पौधों की पत्तियों की कोशिका (cell) में एक अद्भुत पदार्थ है जिसे क्लोरोफिल (chlorophyll) कहते हैं। इसकी मदद से पौधों के जीवित ऊतक (tissue) सूर्य के प्रकाश का अवशोषण करते हैं। वे वायुमंडल से $CO_2$ लेकर तथा अपनी जड़ों से पृथ्वी से पानी लेकर तथा दोनों को मिलाकर कार्बोहाइड्रेट (carbohydrate) बनाते हैं। इस चमत्कारी प्रक्रिया को प्रकाश संश्लेषण (photosynthesis) कहते हैं। इसके द्वारा $CO_2$ तथा $H_2O$ मिलकर, जीवन देने वाले कार्बोहाइड्रेट (corbohydrate) में बदल जाते हैं। कार्बोहाइड्रेट का एक लम्बा रासायनिक फार्मूला है, जिसमें $CH_2O$ की कई कड़ियाँ होती हैं। इसका फार्मूला $C_m(H_2O)_n$ है, जैसे सुक्रोज़ $C_{12}H_{22}O_{11}$ अथवा $C_{12}(H_2O)_{11}$ । आसानी के लिए निम्न समीकरण में हम कार्बोहाइड्रेट को केवल $CH_2O$ लिखेंगे। अब हम प्रकाश संश्लेषण की प्रक्रिया को इस प्रकार लिख सकते हैं।

$CO_2 + H_2O +$ (सौर ऊर्जा क्लोरोफिल की उपस्थिति में) $\rightarrow CH_2O + O_2$

अर्थात् (कार्बन डाइआक्साइड + जल + ऊर्जा) $\rightarrow$ (कार्बोहाइड्रेट + आक्सीजन)
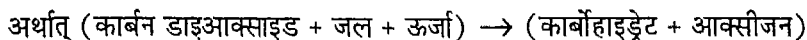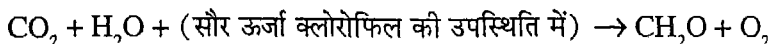
इस प्रक्रिया में पौधों ने वायुमंडल की कार्बन डाइआक्साइड गैस को अपने अन्दर कार्बोहाइड्रेट के रूप में ले लिया। इसी से पौधे की जड़, तना, पत्ती आदि बनेंगे। रासायनिक प्रक्रिया समीकरण को देखने से यह स्पष्ट है कि पौधे में समाये हर कार्बन परमाणु के स्थान पर आक्सीजन का एक अणु वायुमंडल में वापस आता है। दूसरी बात यह है कि इस प्रक्रिया में कार्बोहाइड्रेट बनाने के लिए सौर ऊर्जा की आवश्यकता होती है। अपने आप स्वयं $CO_2$ तथा $H_2O$ यौगिक नहीं बनाते और फलस्वरूप कार्बोहाइड्रेट का निर्माण नहीं करते हैं। यह नापा गया है कि प्रति 30 ग्राम कार्बोहाइड्रेट बनाने के लिए 112000 कैलोरी (112 किलो कैलोरी) ऊर्जा खर्च होती है। यह सौर ऊर्जा कार्बोहाइड्रेट में रासायनिक ऊर्जा के रूप में

संचित हो जाती है। यही वह ऊर्जा है जो दैनिक जीवन में खाद्य पदार्थों की कैलोरी कही जाती है। परन्तु इस प्रसंग में एक विशेष बात ध्यान रखने की है। जीवन में अकसर एक किलो कैलोरी को कैलोरी कहते हैं। उदाहरण के लिए एक चपाती में लगभग 80 कैलोरी ऊर्जा कही जाती है, जो जठराग्नि में जलने के बाद हमारे शरीर को मिलती है। यह 80 कैलोरी वास्तव में 80 किलो कैलोरी ऊर्जा है।

अब मनुष्यों और जानवरों की क्रिया देखिये। वे अपने शरीर के पोषण के लिए आवश्यक कार्बन, पौधों से प्राप्त करते हैं। हम लोग फल, सब्जी और अन्न खाते हैं। और इस तरह से हम कार्बोहाइड्रेट प्राप्त करते हैं। जिंदा रहने के लिए हमें ऊर्जा की आवश्यकता होती है। हमारे शरीर की कोशिकायें कार्बोहाइड्रेट के अणु को श्वास द्वारा प्राप्त आक्सीजन के अणु से जोड़ने का काम करती हैं। इस प्रक्रिया में वही संचित रासायनिक ऊर्जा विमुक्त होती है जो सौर ऊर्जा से प्राप्त हुई थी। यह श्वसन (respiration) की प्रक्रिया है। यह रासायनिक प्रक्रिया इस प्रकार है –

$CH_2O + O_2$ (कोशिका द्वारा अन्दर प्रक्रिया) $\rightarrow$ रासायनिक ऊर्जा + $CO_2 + H_2O$
अब स्पष्ट है प्रकाश संश्लेषण (photosynthesis) और श्वसन (respiration) की प्रक्रियाएँ एक दूसरे की पूरक हैं (देखिए चित्र 9.1)।

यदि ये दोनों प्रक्रियाएँ बिलकुल संतुलन में हों तो प्रकाश संश्लेषण द्वारा बनाये गए जैविक कार्बन पदार्थ (carbohydrate) की समस्त मात्रा प्राणियों की श्वसन प्रक्रिया द्वारा $CO_2$ तथा $H_2O$ में वापस बदल जायेगी। इस तरह $CO_2$ तथा $O_2$ का संतुलन बना रहेगा। परन्तु जैविक कार्बन का कुछ अंश अवसाद (Sediment) बनकर इकट्ठा हो जाता है। इसे समुद्र के जीव (Organism) ले लेते हैं और मरने के बाद समुद्र तल में अवसाद (sediment) बन जाते हैं। इसी प्रक्रिया द्वारा फॉसिल ईंधन (fossil fuel), कोयला और पेट्रोल बना है। ध्यान देनें की बात यह है कि जब एक कार्बन का परमाणु दबता है तो उससे एक आक्सीजन अणु वायुमंडल में विमुक्त होकर आ जाता है। इसलिए कुछ वैज्ञानिकों का विचार है कि आदिकाल से बने जैविक पदार्थों के अवसाद के रूप में दबने से ही हमारे

वायुमंडल में आक्सीजन प्राप्त हुई है। इस फॉसिल ईंधन (fossil fuel) को जलाकर हम उसी विमुक्त आक्सीजन को कम कर रहे हैं। पिछले दो सौ वर्षों से औद्योगीकरण में यही हो रहा है। हम तेज गति से कोयला, पेट्रोल, डीजल आदि जला रहे हैं और प्रकाश संश्लेषण (photosynthesis) और श्वसन प्रक्रिया (respiration) का संतुलन बिगाड़ रहे हैं।

अब प्रश्न है कि क्या $CO_2$ की मात्रा वायुमंडल में वास्तव में बढ़ रही है? बहुत यथार्थता के प्रेक्षणों से यह सिद्ध हो चुका है कि $CO_2$ की मात्रा वायुमंडल में बढ़ रही है। उदाहरण के तौर पर एक यथार्थता वाले नाप के अनुसार दक्षिणी ध्रुव तथा हवाई टापू (Hawai Island) पर 1958 में $CO_2$ की मात्रा 315 ppmV (अर्थात् आयतन के अनुसार 0.0315 प्रतिशत) थी। वह 40 वर्षों में बढ़कर 355 ppmV से भी अधिक हो गई। रेडियोधर्मी नापों से निष्कर्ष निकाला गया है कि यह वृद्धि फॉसिल ईंधन के जलाने के फलस्वरूप ही है।

## श्वास प्रक्रिया में तथा मशीनों द्वारा उत्पन्न $CO_2$ की मात्रा

अब प्रश्न यह उठता है कि प्रत्येक मनुष्य श्वास से प्रतिदिन कितनी आक्सीजन लेता है और कितनी कार्बन डाइआक्साइड वायुमंडल में छोड़ता है? दुनिया की सम्पूर्ण आबादी से प्रति वर्ष वायुमंडल में कितनी $CO_2$ उत्पन्न होती है? मोटर कार और कोयला, आदि कितनी $CO_2$ पैदा करते हैं?

जो हवा हम वायुमंडल से श्वास के द्वारा अन्दर ले जाते हैं, उसकी संरचना लगभग इस प्रकार होती है:

| | | |
|---|---|---|
| नाइट्रोजन | – | 79% |
| आक्सीजन | – | 20% |
| कार्बन डाइआक्साइड | – | 0.04% |

जो हवा श्वास से बाहर निकालते हैं उसकी संरचना यह होती है:

| | | |
|---|---|---|
| नाइट्रोजन | – | 79% |

| | | |
|---|---|---|
| आक्सीजन | – | 16% |
| कार्बन डाइआक्साइड | – | 4.04% |

श्वास से निकली हवा में जलवाष्प भी होता है जिसका ताप शरीर के ताप (37°C) के बराबर होता है।

इस तरह बाहर आई श्वास में आक्सीजन की मात्रा 20% से घटकर 16% रह जाती है, अर्थात् 4% आक्सीजन की कमी होती है और उतनी ही कार्बन डाइआक्साइड की वृद्धि होती है। श्वास प्रक्रिया में $CO_2$ की मात्रा जानने के लिए हमको यह पता होना चाहिए कि हमारे फेफड़े एक बार श्वास लेने में कितनी हवा लेते हैं और हम प्रति मिनट कितनी बार साँस लेते हैं? फेफड़ों की क्षमता (capacity) लगभग $4\frac{1}{2}$ से 5 लीटर के बीच होती है। परन्तु हम लोग जब आराम से बैठे होते हैं तब केवल 500 cc या 1/2 लीटर हवा अन्दर लेते और बाहर निकालते हैं। हम प्रति मिनट लगभग 15 साँसें लेते हैं। चूँकि बाहर आई श्वास में 4% आक्सीजन की कमी होती है, अतएव श्वास द्वारा आक्सीजन की खपत की मात्रा प्रति मिनट निम्नलिखित होगी:

$$\left(\frac{1}{2}\times\frac{4}{100}\times 15\right) = \frac{3}{10} \text{ लीटर}$$

अतएव प्रतिदिन यह आक्सीजन की मात्रा ( $\frac{3}{10}\times 60\times 24$ लीटर) = 432 लीटर है। दूसरे शब्दों में इसका आयतन 0.432 $m^3$ हुआ। यदि आक्सीजन का घनत्व 1.2kg /$m^3$ लें तो इस आक्सीजन का द्रव्यमान लगभग 0.5 kg हुआ। इस प्रकार श्वास के लिए हमें प्रतिदिन 12.5 kg हवा चाहिए क्योंकि हवा का केवल 1/5 भाग ही आक्सीजन है और इस 1/5 भाग आक्सीजन का हम 1/5 भाग ही अपने अन्दर अवशोषित करते हैं।

हमारे शरीर में रक्त का हीमोग्लोबिन (haemoglobin) आक्सीजन से भरपूर होता है। इस रक्त का सारे शरीर में प्रवाह होता है और पतली-पतली नलिकाओं में पहुँचता है। जीवित ऊतक

(tissue) की कोशिकायें इस आक्सीजन युक्त रक्त से आक्सीजन ले लेती हैं। आक्सीकरण के बाद हम कार्बन डाइआक्साइड बाहर निकाल देते हैं। यह सरल रासायनिक क्रिया इस प्रकार है:

$$C + O_2 \rightarrow CO_2$$
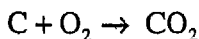
इस समीकरण से 12kg कार्बन 32 kg आक्सीजन से मिलकर 44kg कार्बन डाइआक्साइड बनाता है। अतएव प्रति पुरुष जब हम प्रति दिन 0.5 kg आक्सीजन वायुमंडल से अपने शरीर में लेते हैं तब $0.5 \times \frac{44}{32} = 0.7\,kg$ कार्बन डाइआक्साइड की वृद्धि वायुमंडल में करते हैं। और प्रति पुरुष प्रति वर्ष $365 \times 0.7 = 255$ kg कार्बन डाइआक्साइड हवा में बढ़ा देते हैं। यह बढ़ोतरी लगभग 1/4 टन हुई।

गणना कीजिए कि समस्त संसार की आबादी कितनी $CO_2$ पैदा करती है? संसार की आबादी यदि $6 \times 10^9$ मान लें तो इस कार्बन डाइआक्साइड की मात्रा $6 \times 10^9 \times 255$ kg प्रति वर्ष होगी अर्थात् लगभग $1530 \times 10^6$ टन प्रति वर्ष होगी।

इसकी तुलना हम कोयला जलाने की प्रक्रिया से करेंगे। 12 kg कार्बन को जलाने के लिए हमें 32 kg आक्सीजन की आवश्यकता होती है। अतएव 1 kg कार्बन जलाने पर हवा में लगभग $\frac{32}{12} = 2.7\,kg$ कार्बन डाइआक्साइड की बढ़ोतरी होती है। इसी तरह पेट्रोल जिसकी रासायनिक संरचना हम $C_8H_{18}$ मान लें तो प्रक्रिया इस प्रकार है:

$$2C_8H_{18} + 25O_2 \rightarrow 16\,CO_2 + 18\,H_2O$$
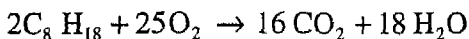
अर्थात् $2\,(12 \times 8 + 18) = 228$ kg पेट्रोल के लिए $(25 \times 2 \times 16) = 800$ kg आक्सीजन चाहिए। उसके फलस्वरूप इस रासायनिक क्रिया में $16\,(12 + 32) = 704$ kg $CO_2$ उत्पन्न होगी। अर्थात् 1kg पेट्रोल जो लगभग 1 लीटर है, को जलाने के लिए 3.5 kg आक्सीजन की आवश्यकता होती है। ध्यान दीजिए कि यह एक मनुष्य की एक सप्ताह के आक्सीजन की खपत के बराबर है। 1000 km के सफर में मोटर कार लगभग 100 लीटर

पेट्रोल जलायेगी और इस तरह लगभग 350 kg आक्सीजन जला देगी। इतना सफर अकसर एक कार प्रति मास करती है। यह खपत एक व्यक्ति की साल भर की खपत से भी अधिक है। इस हिसाब से साधारण तौर पर चलने वाली हर कार 10-15 व्यक्तियों के बराबर आक्सीजन लेती है। संसार में करोड़ों कारें हैं। वे सब इसी रफ्तार से आक्सीजन लेकर वायुमंडल में $CO_2$ उगल रही हैं। कारों के अलावा लाखों हवाई जहाज हैं। अन्दाज है कि एक जेट हवाई जहाज, 8 घंटे के सफर में लगभग 50-75 टन आक्सीजन प्रयोग करता है। उद्योगों में हम लाखों टन कोयला या दूसरा फॉसिल (जीवाश्मी) ईंधन जलाते हैं। इन सब गतिविधियों से प्रतिवर्ष अनुमान के अनुसार हम $5 \times 10^9$ टन $CO_2$ वायुमंडल में बढ़ा रहे हैं। जंगलों को काट कर और जलाकर भी करोड़ों टन $CO_2$ की मात्रा वायुमंडल में जा रही है। यह अनुमान है कि उद्योगों के कारण अमेरिका प्रति वर्ष प्रति पुरुष लगभग 20 टन $CO_2$ को वायुमंडल में बढ़ाता है। यूरोप में जरमनी को लीजिये। वह लगभग 10 टन $CO_2$ प्रति वर्ष प्रति पुरुष उत्पन्न करता है। प्रगतिशील देश चीन की यह संख्या 3 टन के लगभग है। भारत में इससे कुछ कम है। यह फिर से याद दिलाने की बात है कि प्रति पुरुष प्रति वर्ष साँस लेने की क्रिया से वायुमंडल में केवल 1/4 टन $CO_2$ पैदा होती है। यह स्पष्ट है कि वायुमंडल में $CO_2$ की बढ़ोतरी बड़ी तेज गति से हो रही है। इसको रोकने के लिए क्या किया जाए? सुझाव है कि सौर ऊर्जा का प्रयोग बढ़ाया जाए। इससे प्रदूषण भी नहीं होगा और $CO_2$ की मात्रा भी नहीं बढ़ेगी। वास्तव में $CO_2$ गैस हरित गृह प्रभाव बढ़ाने में बहुत सक्षम है। इसलिए अब अपारम्परिक ऊर्जा के स्रोतों पर, जिनमें सौर ऊर्जा के अलावा, पवन ऊर्जा, बायोगैस, समुद्र की तरंगों से ऊर्जा, भूगर्भीय ऊर्जा, जल विद्युत ऊर्जा, आदि शामिल हैं, खोज चल रही है।

अब यह निर्विवाद है कि प्रदूषण रोकने के लिए फॉसिल ईंधन का प्रयोग घटाना ही होगा।

अध्याय 10

# हरित गृह प्रभाव, उसकी वर्तमान बढ़ोत्तरी और पृथ्वी के ताप पर प्रभाव

कई अध्यायों में हम हरित गृह प्रभाव (Green house effect) की चर्चा कर चुके हैं। प्रश्न है कि यह बहुचर्चित हरित गृह प्रभाव क्या है? इसको यह नाम क्यों दिया गया?

इस प्रभाव को समझने से पहले हम उद्यानों में शीशे से ढके गृह (glass house) की क्रिया को समझ लें। चित्र (10.1) में शीशे का गृह दिखाया गया है। दृश्य प्रकाश किरणों का तरंगदैर्ध्य लगभग 400 nm से 700 nm* तक फैला होता है। तरंगदैर्ध्य के इस क्षेत्र के लिए शीशा पारदर्शी है। अतएव दृश्य प्रकाश की किरणें शीशे को पार करके पोधों पर पड़ती हैं। इस प्रकाश का कुछ अंश पौधों पर पड़कर इधर-उधर बिखर जाता है और कुछ भाग परावर्तित होकर शीशे को पार करके बाहर वापस लौट जाता है। इन किरणों की वापसी इसलिए संभव है, क्योंकि इनका तरंगदैर्ध्य वही है जो अन्दर घुसने वाली किरणों का था। परन्तु वे किरणें जो पौधों पर अथवा आस पास की जमीन पर पड़ती हैं उनका पौधों और आस पास की जमीन द्वारा अवशोषण हो जाता है। इस प्रकार सौर ऊर्जा का एक भाग पौधों

---

$1 nm = 10^{-9} m$

$1 \mu m = 10^{-6} m$

तथा आस पास की जमीन के अन्दर घुस जाता है जिसके परिणामस्वरूप उनका ताप थोड़ा-सा बढ़ जायेगा। जैसा कि हम अध्याय 8 में देख चुके हैं कि प्रत्येक पदार्थ अपने परम ताप
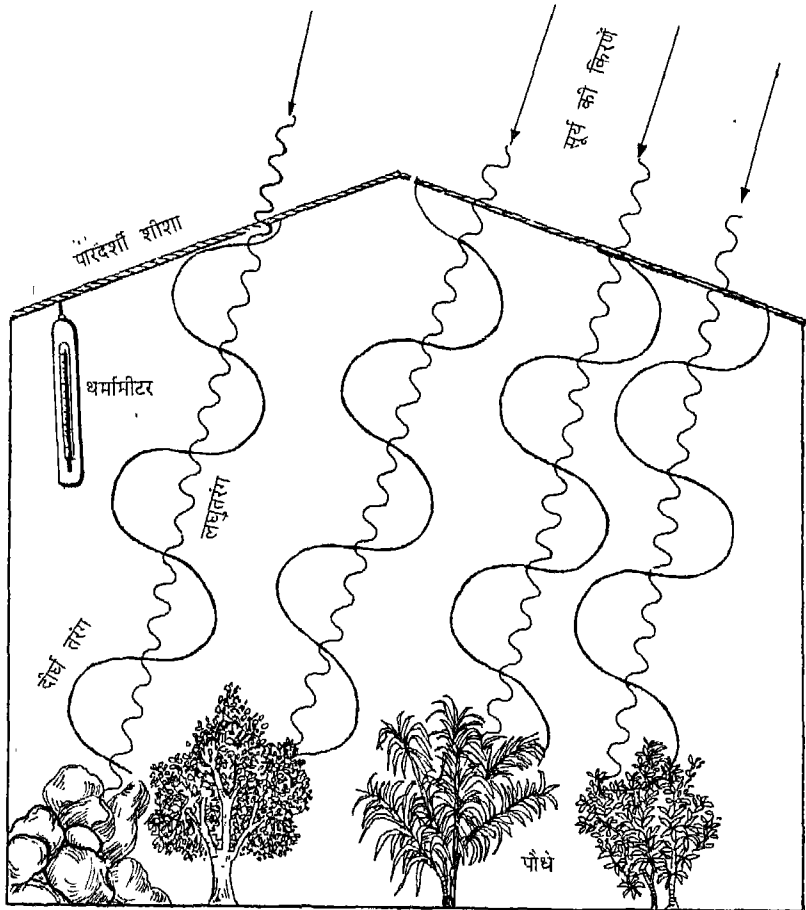
हरित गृह

**चित्र 10.1**

के अनुसार ऊर्जा उत्सर्जित करता है। इस उत्सर्जित ऊर्जा की किरणों में कौन-कौन सी तरंगदैर्ध्य और किस-किस मात्रा में होंगी? इसका उत्तर प्लैंक का विकिरण नियम (Planck's law of radiation) से मिलता है। यदि हम पौधों के ताप को लगभग 300 K मान लें, तो इस सिद्धांत के अनुसार विकिरण का एक सतत् स्पैक्ट्रम होता है जो लगभग 3μm से 100μm तक फैला होता है। इसकी अधिकतम तीव्रता लगभग 10μm पर होती है (चित्र 10.2)। यह स्पैक्ट्रम आँख को दिखाई नहीं देता और अवरक्त क्षेत्र (infrared region) में होता है। ये दीर्घ तरंगदैर्ध्य की किरणें हैं। जब ये किरणें पौधे और आस पास की जमीन से निकलकर हवा से होकर शीशे की ओर चलती हैं तब इसका कुछ अंश तो हवा ही अवशोषित कर लेती हैं। बाकी बची हुई कुछ विकिरणें शीशे पर पड़ती हैं। ये दीर्घ तरंगदैर्ध्य के विकिरण शीशे से आर पार होकर बाहर नहीं जा पाते और वापस लौट आते हैं। इसके अलावा पौधों से उठी गर्म हवा यदि बाहर न जाने पाये तो फलस्वरूप शीशे के गृह में घुसी सौर ऊर्जा का एक अंश उसी शीशे के गृह के अन्दर रह जायेगा। फलस्वरूप पौधों और कमरे का ताप बढ़ जायेगा। इस प्रकार के शीशे के गृह में जाड़े के दिनों में पौधों को गर्मी पहुँचाई जा सकती है। अतएव ठंड के मौसम में भी गर्मी के मौसम के फल और सब्जियाँ उगाई जा सकती हैं।

इस प्रक्रिया की निम्न बातें ध्यान देने योग्य हैं। घुसी हुई सूर्य की किरणों का तरंगदैर्ध्य 400 nm से 700nm तक है जिसे हम लघुतरंग विकिरण कहेंगे। इसका एक भाग पौधे और आस पास की जमीन अवशोषण कर लेते हैं जिस कारण पौधों और आस पास का ताप थोड़ा-सा बढ़ जाता है। पौधे अपने परम ताप के अनुसार ऊर्जा उत्सर्जित करते हैं, जिसका स्पैक्ट्रम तरंगदैर्ध्य अवरक्त क्षेत्र में 3μm से 100μm के बीच होता है (चित्र 10.2)। इसे हम दीर्घतरंग विकिरण कहेंगे। इन दीर्घतरंग विकिरणों को हवा अवशोषित कर लेती है और इस प्रकार ये तरंगें हवा को थोड़ा-सा गरम कर देती हैं। अब स्थिति यह है कि सूर्य की लघु तरंगों के अवशोषण के फलस्वरूप पौधों का तथा उसके आस पास की जमीन का ताप बढ़ा। पौधों और आस पास की जमीन ने दीर्घतरंग ऊर्जा उत्सर्जित की। इसका एक बड़ा भाग हवा ने अवशोषित किया। इससे हवा का ताप बढ़ा। हवा भी अपने ताप के अनुसार दीर्घतरंग ऊर्जा

का उत्सर्जन करेगी। यह ऊर्जा पौधों को वापस मिलेगी। ऊर्जा के इस आदान-प्रदान को हरित गृह प्रभाव का नाम दिया गया है। अर्थात् पौधे और आस पास की जमीन का सूर्य की किरणों द्वारा गर्म होकर दीर्घतरंग उत्सर्जित करके हवा को गर्म करना और इस गर्म हवा से दीर्घतरंग उत्सर्जित होकर पौधों और जमीन को ऊर्जा वापस देने को ही हरित गृह प्रभाव (green house effect) का नाम दिया गया। ऐसी ही क्रिया खुली पृथ्वी पर होती है। सूर्य की लघुतरंग किरणों का एक अंश पृथ्वी की सतह पर पड़ता है जिसका पृथ्वी अवशोषण कर लेती है। इससे पृथ्वी के ताप में थोड़ी-सी वृद्धि होती है। पृथ्वी अपने परम ताप के अनुसार दीर्घतरंग विकिरणों का उत्सर्जन करती है। इसका एक बड़ा भाग वायुमंडल अवशोषण कर लेता है। इससे वायुमंडल के ताप में थोड़ी वृद्धि होती है। अब वायुमंडल अपने परमताप के अनुसार दीर्घतरंग विकिरणें उत्सर्जित करता है और एक बड़ा भाग पृथ्वी को वापस दे देता है। पहले पृथ्वी से प्राप्त दीर्घ तरंगों द्वारा वायुमंडल का गर्म होना और गर्म वायुमंडल द्वारा पृथ्वी को दीर्घतरंग के रूप में ऊष्मीय ऊर्जा वापस देना ही हरित गृह प्रभाव कहा जाता है। स्पष्ट है कि यह उद्यान के शीशे के गृह की तरह की क्रिया है। ध्यान देने योग्य बात यह है कि हरित गृह प्रभाव में केवल पृथ्वी और वायुमंडल के पारस्परिक ऊर्जा के लेन-देन को ही महत्व दिया जाता है।

अब प्रश्न यह उठता है कि पृथ्वी पर यह प्रभाव कब से है? यदि यह हरित गृह प्रभाव न होता तो क्या होता? प्रायः सुनने में आता है कि यह प्रभाव बढ़ रहा है और पृथ्वी के गर्म होने की आशंका है। भविष्य में क्या संभावनाएँ हैं? आइये इन बातों पर विचार करें।

सबसे प्रथम प्रश्न है कि हरित गृह प्रभाव कब से है? इसका उत्तर है कि यह प्रभाव तो वायुमंडल की संरचना में जो गैसें हैं उनके कारण होता है। विशेष तौर पर $CO_2$ गैस के कारण होता है। अतएव जब से हमारे वायुमंडल में $CO_2$ रही होगी, जो वर्तमान वायुमंडल में है, तब से यह हरित गृह प्रभाव रहा होगा। अतएव हम यह मान सकते हैं कि यह प्रभाव लाखों करोड़ों वर्षों से चला आ रहा है।

अब दूसरा प्रश्न है कि यदि पृथ्वी से उत्सर्जित दीर्घतरंग ऊष्मीय ऊर्जा का वायुमंडल द्वारा

अवशोषण न हो तो उसका क्या प्रभाव होगा? अर्थात् यदि हरित गृह प्रभाव न हो तो क्या होगा?

हरित गृह प्रक्रिया में पृथ्वी की सतह तथा वायुमंडल, दोनों का ही ताप बढ़ता है। यह परिकलन करके निकाला गया है कि पृथ्वी की सतह का ताप इस कारण लगभग 20°C बढ़ जाता है। अर्थात् यदि यह प्रभाव न हो तो पृथ्वी की सतह का ताप जल के जमाव बिन्दु (हिमांक) से काफी कम होगा। अतएव सारे समुद्र जमकर बर्फ हो जायेंगे। यह माना जाता है कि भूवैज्ञानिक भूतकाल (geological past) में बर्फीला समय था और मौसम बिलकुल ठंडा था। जैसा कि हम अध्याय 2 में चर्चा कर चुके हैं पिछला बर्फीला मौसम 18000 वर्ष पहले माना जाता है और हर 20000 वर्ष बाद यह बर्फीला मौसम आ सकता है। हो सकता है कि वह बर्फीला मौसम हरित गृह प्रभाव से संबंधित रहा हो।

अब अगला प्रश्न है कि यदि यह प्रभाव बढ़ जाए तो क्या होगा? वास्तव में अब जो समस्या सामने आ रही है वह हरित गृह प्रभाव की बढ़ोतरी की है। इसका आभास तो अब हुआ है जब औद्योगिक क्रियाओं के कारण कोयला, गैस और पेट्रोलियम पदार्थों को अत्यधिक मात्रा में जलाया जाने लगा है जिसके फलस्वरूप $CO_2$ गैस की मात्रा बढ़ रही है। यह बढ़ोतरी नापी गई है जिसकी चर्चा हम अध्याय 9 में कर चुके हैं। यह औद्योगिक क्रांति सन् 1750 के बाद शुरू हुई है जिसे लगभग 250 वर्ष ही हुए हैं। यह हरित गृह प्रभाव की बढ़ोतरी वायुमंडल में विशेष रूप से $CO_2$ की बढ़ोतरी के फलस्वरूप है। हरित गृह प्रभाव की बढ़ोतरी ही वास्तव में समस्त संसार की समस्या बन गई है।

बड़े-बड़े कम्प्यूटरों द्वारा यह आँका गया है कि अगले सौ पचास वर्षों तक यदि वायुमंडल में $CO_2$ की मात्रा इसी तरह बढ़ती रही तो पृथ्वी और वायुमंडल दोनों का ताप, हो सकता है, कई डिग्री बढ़ जायेगा। इस समस्या को भूमंडलीय कोष्णता (Global warming) कहते हैं। बड़े-बड़े वैज्ञानिक इसका अध्ययन करने में लगे हैं। मान लीजिए ताप केवल 2-3 डिग्री ही बढ़ता है तो उसका क्या प्रभाव होगा? ऐसा लगता है कि इतनी थोड़ी-सी ताप वृद्धि से तो कोई विशेष प्रभाव नहीं होगा। परन्तु यह सच नहीं है। इतनी ही वृद्धि से मौसम

पर बहुत गम्भीर प्रभाव पड़ सकता है। पृथ्वी के भिन्न-भिन्न क्षेत्रों की वर्षा की मात्रा बढ़ जायेगी क्योंकि समुद्र से भाप अधिक बनेगी। अतएव भिन्न-भिन्न स्थानों पर जल की उपलब्धि बिलकुल बदल सकती है। उपजाऊ जमीनों का क्षेत्र बदल सकता है। एक और प्रभाव यह होगा कि पृथ्वी के भिन्न भागों में पड़ी बर्फ बहुत मात्रा में पिघल जायेगी और समुद्र की सतह ऊपर उठेगी। गर्मी के कारण पानी के प्रसार (expansion) से भी समुद्र की सतह ऊपर उठेगी। यदि समुद्र की सतह एक दो मीटर भी उठ जाए तो भयंकर परिणाम हो सकते हैं। तूफान और ज्वार भाटे के कारण समुद्र तट के निचले भागों में भारी बाढ़ आयेगी और बड़ी बरबादी हो सकती है। यदि पृथ्वी की समस्त बर्फ जो लगभग $25 \times 10^6$ घन किलोमीटर है, पिघल कर पानी बन जाए तो क्या होगा? ऐसा होने पर समुद्र की सतह 65 मीटर तक ऊपर उठेगी। महाद्वीपों के निचले भागों में पानी भर जायेगा। वास्तव में दुनिया की बहुत बड़ी आबादी इन्हीं क्षेत्रों में बसी हुई है। फिर भी आशा की जाती है कि शायद लाखों वर्ष तक ऐसा न होगा।

## हरित गृह प्रभाव उत्पन्न करने वाले वायुमंडल में गैसें

प्रश्न है कि हमारे वायुमंडल में हरित गृह प्रभाव उत्पन्न करने वाली गैसें, जिन्हें ग्रीन हाउस गैसें कहते हैं, कौन-कौन सी हैं? हमारे वायुमंडल में सबसे महत्वपूर्ण ग्रीन हाउस गैस कार्बन डाइआक्साइड ($CO_2$) है। इसके बाद क्रमशः क्लोरोफ्लोरो कार्बन (CFC) गैसें हैं, मीथेन ($CH_4$), नाइट्रस आक्साइड ($N_2O$) तथा ओजोन ($O_3$) गैस का नम्बर है। अब प्रश्न उठता है कि यह कैसे पता चलता है कि कौन-सी गैस हरित गृह प्रभाव उत्पन्न करेगी और कितना? संक्षेप में उत्तर इस प्रकार है।

जैसा कि हमें पता है कि प्रत्येक पदार्थ अ. . परम ताप के अनुसार ऊर्जा उत्सर्जित करता है। पृथ्वी का परम ताप हम 300 K मान सकते हैं। पृथ्वी इस ताप पर जो ऊर्जा उत्सर्जित करती है, उसका स्पैक्ट्रम अवरक्त क्षेत्र में होता है। यह एक सतत् स्पैक्ट्रम है जो लगभग 3μm से 100μm से कुछ अधिक क्षेत्र में फैला होता है जैसा कि चित्र 10.2 में दिखाया
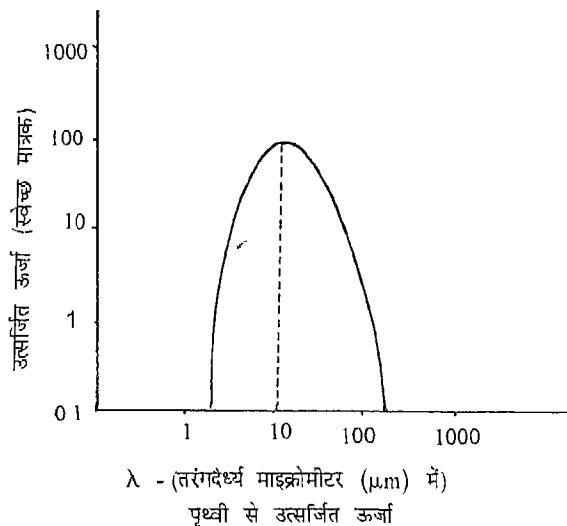
चित्र 10.2

गया है। ये विकिरण जब किसी गैस में से होकर गुजरते हैं तब उस गैस और विकिरण के बीच प्रतिक्रिया होती है। यह प्रतिक्रिया उस गैस के गुणों पर निर्भर है। कुछ गैसें इस स्पैक्ट्रम की विकिरणों के लिए पारदर्शी हैं। अर्थात् ये विकिरण ऐसी गैसों में बिना अवशोषण के पार हो जायेंगे। वायुमंडल में विद्यमान $O_2$, $N_2$, Ar, Ne, He, Kr, Xe, $H_2$ इसी प्रकार की गैसें हैं। यह ध्यान देने की बात है कि ये वे गैसें हैं जिनके अणु की रचना ऐसी है कि वे सममित (symmetrical) अणु हैं। अब $CO_2$, $CH_4$, CFC, $O_3$, अणुओं पर विचार कीजिये। ये सब असममित (asymmetrical) अणु हैं। जब पृथ्वी से उत्सर्जित अवरक्त किरणें उपरोक्त गैसों में से होकर गुजरती हैं, तब किरणों और अणुओं में आपसी प्रतिक्रिया होती है। फलस्वरूप उनका अवशोषण होता है। किस तरंगदैर्ध्य का तथा कितनी मात्रा में अवशोषण होगा यह उस गैस के गुणों पर निर्भर है।

पहले $CO_2$ गैस पर विचार कीजिये। इस गैस का अवशोषण स्पैक्ट्रम (absorption spectrum) का अध्ययन करने पर हम यह देखते हैं कि 2.7 $\mu$m, 4.3 $\mu$m तथा 14.5 $\mu$m वाली किरणों का $CO_2$ बहुत अधिक अवशोषण करती है। अतएव वायुमंडल की $CO_2$ गैस, पृथ्वी से उत्सर्जित ऊर्जा के उस भाग का, जो इन तरंगदैर्ध्य के निकट होगा, अवशोषण कर लेगी।

अब पृथ्वी से उत्सर्जित ऊर्जा के स्पैक्ट्रम पर ध्यान दीजिये जिसे चित्र 10.2 में दिखाया गया है। इस उत्सर्जित ऊर्जा की तीव्रता 3 $\mu$m से 100 $\mu$m तब एकसमान नहीं है। इस उत्सर्जित ऊर्जा की तीव्रता भिन्न तरंगदैर्ध्यों पर कितनी है? इसे चित्र 10.3 में दिखाया गया है। शुरू में 3 $\mu$m के पास उत्सर्जित ऊर्जा की मात्रा बहुत कम है। यह मात्रा लगातार बढ़ती जाती है और 5 $\mu$m से 20 $\mu$m के पास इसका मान अधिकतम है। इसके बाद यह मात्रा धीरे-धीरे घटती जाती है। किस तरंगदैर्ध्य क्षेत्र में कितनी ऊर्जा है? इसकी एक गणना की गई है। इसके अनुसार 3 $\mu$m से 5 $\mu$m के बीच उत्सर्जित ऊर्जा का केवल 1 प्रतिशत भाग है। 5 $\mu$m से 10 $\mu$m के बीच कुल उत्सर्जित ऊर्जा का लगभग 25 प्रतिशत भाग है। 10 $\mu$m से 14 $\mu$m के बीच फिर 25 प्रतिशत भाग है। इसी तरह 14 $\mu$m से 21 $\mu$m के बीच भी लगभग 25 प्रतिशत ऊर्जा का भाग है। और 21 $\mu$m से 32 $\mu$m के बीच लगभग 15 प्रतिशत भाग है। अब स्पष्ट हो जाता है कि $CO_2$ की अवशोषण शिखरें (absorption peaks) जो 2.7 $\mu$m तथा 4.3 $\mu$m के पास हैं, हरित गृह प्रभाव में न के बराबर योगदान देंगी। कारण यह है कि इन तरंगदैर्ध्यों पर पृथ्वी से उत्सर्जित ऊर्जा की मात्रा बहुत कम है। 14.5 $\mu$m वाली अवशोषण शिखर काफी चौड़ी है और पृथ्वी से उत्सर्जित ऊर्जा के स्पैक्ट्रम के अधिकतम भाग में है। अतएव 14.5 $\mu$m वाली अवशोषण शिखर ही मुख्यतया हरित गृह प्रभाव उत्पन्न करती है।

इसी तरह हम और गैसों के प्रभाव की गणना कर सकते हैं। उदाहरण के तौर पर मीथेन $CH_4$ गैस को लीजिये। इस गैस की अवशोषण शिखर लगभग 3.3 $\mu$m तथा 7.8 $\mu$m के पास है। इसी प्रकार $N_2O$ गैस में ये लगभग 4.6 $\mu$m तथा 7.8 $\mu$m के पास है। स्पष्ट है कि इन दोनों गैसों की 7.8 $\mu$m वाली अवशोषण तरंगदैर्ध्य ही हरित गृह प्रभाव के लिए प्रभावी होगी। अब $O_3$ गैस पर विचार करें। इसका अवशोषण शिखर लगभग 9.6 $\mu$m के पास है जो बहुत प्रभावशाली होगा।
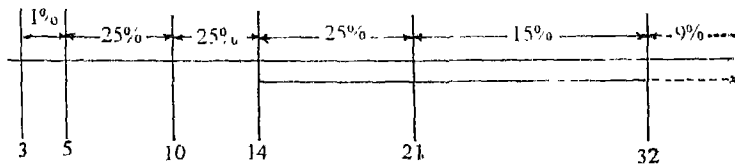
λ - (तरंगदैर्ध्य, μm में)

पृथ्वी को उत्सर्जित ऊर्जा का प्रतिशत भाग

**चित्र 10.3**

अन्त में एक और बात पर ध्यान देना आवश्यक है। चूँकि ऊर्जा का अवशोषण अणु और विकिरण की आपसी प्रतिक्रिया के कारण उत्पन्न होता है, अतएव किसी तरंगदैर्ध्य पर अवशोषण की मात्रा उस गैस के अणुओं की संख्या पर निर्भर होगी। इसलिए $CO_2$ द्वारा 14.5 μm विकिरण का अवशोषण, $CO_2$ के अणुओं की संख्या के अनुपात में होगा। दूसरे शब्दों में यह $CO_2$ की वायुमंडल में सान्द्रता (concentration) पर निर्भर होगा। इसीलिये औद्योगीकरण के फलस्वरूप वायुमंडल में $CO_2$ की बढ़ी हुई मात्रा और उसके हरित गृह प्रभाव के कारण वायुमंडल तथा पृथ्वी दोनों का ताप बढ़ेगा। मानव की गतिविधियों के कारण हरित गृह प्रभाव वाली अन्य गैसें हैं: CFC गैसें, $CH_4$, $N_2O$ तथा $O_3$।

अब जलवाष्प, जो वायुमंडल में प्राकृतिक तौर से विद्यमान है, पर विचार कीजिए। जलवाष्प द्वारा प्रभावी अवशोषण 5.5 μm तथा 7.2 μm के बीच होता है। अतएव जलवाष्प भी हरित गृह प्रभाव उत्पन्न करने में सक्रिय भाग लेगा। परन्तु ध्यान देने की बात है कि ट्रोपोस्फीयर में ऊँचाई के साथ तापमान घटता जाता है। अतएव कुछ ऊँचाई (मान लीजिए लगभग 4 km) के बाद यह ताप हिम बिन्दु से कम हो जायेगा। अतएव जलवाष्प द्रवित होकर जल का रूप ले लेगा और फिर इस ऊँचाई के बाद जलवाष्प विद्यमान न रहने के कारण हरित गृह प्रभाव में योगदान नहीं देगा। अतः जलवाष्प द्वारा हरित गृह प्रभाव ट्रोपोस्फीयर के निचले भाग में, पृथ्वी के निकट, ही प्रभावी होगा।

अध्याय 11

# मानव गतिविधियों के कारण वायुमंडल में प्रदूषण : विभिन्न गैसों तथा निलम्बित कणों की बढ़ती मात्रा

जैसा कि हम जानते हैं कि स्वच्छ वायुमंडल में मुख्यतया नाइट्रोजन 78% आक्सीजन 21% हैं और बहुत कम मात्रा (0.03%) में $CO_2$ गैस है। इसके अलावा लगभग 1% अक्रिय गैसें हैं जिसका अधिकतर भाग आर्गन गैस है। जलवाष्प की मात्रा स्थान और समय पर निर्भर करती है। परन्तु यदि हम किसी शहर के आस पास की हवा पर ध्यान दें तो वायुमंडल में बहुधा कुछ धुआँ-सा दिखाई देता है। साथ ही साथ कहीं-कहीं पर कुछ बदबू भी आती है। ऐसा क्यों है? संक्षेप में इसका उत्तर है कि फैक्ट्रियों से, उद्योग धंधों से, कारों और अन्य वाहनों से और अन्य प्रकार के कचरों द्वारा मनुष्य ने वायुमंडल में तरह-तरह की गैसें, धुआँ तथा निलम्बित कण फैला दिये हैं। अब हम जानना चाहेंगे कि ये कौन-कौन सी गैसें, कौन-कौन से कण हैं तथा वे कैसे उत्पन्न होते हैं और उनका क्या प्रभाव वायुमंडल और हम पर पड़ता है?

## हवा में निलम्बित कण ( एरोसॉल Aerosol ) : प्राकृतिक स्रोत

हवा में धूल के कणों से तो हम सब परिचित हैं। परन्तु इसके अलावा हमारे वायुमंडल में तरह-तरह के छोटे, बड़े कण निलम्बित रहते हैं और उड़ते रहते हैं। सबसे पहला प्रश्न है कि ये कण क्या हैं और वायुमंडल में कहाँ से आते हैं?

वायुमंडल में उड़ते हुए कणों के कुछ प्राकृतिक स्रोत हैं और कुछ मानवकृत। मानव की गतिविधियों के कारण तरह-तरह के कण हवा में उड़ते हैं तथा उनकी मात्रा आजकल वायुमंडल में काफी बढ़ गई है। हवा में निलम्बित ठोस या द्रव के कण या कणों के समूह को एरोसॉल (aerosol) कहते हैं। इन सबके कारण पृथ्वी के मौसम में बदलाव का डर पैदा हो गया है। अतएव इसके अध्ययन का अब महत्व बहुत बढ़ गया है।

आइये हम पहले प्राकृतिक स्रोतों पर विचार करते हैं। मिट्टी और रेत के कण हवा द्वारा उड़कर वायुमंडल में काफी मात्रा में पहुँच जाते हैं। पेड़, पौधे भी अपने कण बिखेरते हैं। यह पाया गया है कि कुकुरमुत्ते (mushroom) तथा फर्न (fern) के स्पोर (spores), फूल के परागकण (pollengrain) आदि तो हवा में काफी ऊँचाई तक मिलते हैं। हर वर्ष जंगलों में आग लगती है और धुएँ के रूप में सूक्ष्म ठोस कणों का वायुमंडल में विसर्जन हो जाता है। इसी तरह समुद्र की लहरें और तूफान समुद्र के पानी की छोटी-छोटी बूँदों को कई किलोमीटर की ऊँचाई तक पहुँचा देती हैं। सूखने पर ये बूँदें बाद में नमक और खनिज पदार्थों के छोटे-छोटे कण उस ऊँचाई पर बन जाते हैं। इसके अतिरिक्त एक अनुमान के अनुसार प्रतिदिन पृथ्वी पर अंतरिक्ष से 10,000 टन धूल गिरती रहती है। यह अंतरिक्ष धूल कहाँ से आती है, अभी ठीक से पता नहीं है। एक स्रोत और है- ज्वालामुखी पहाड़ों का फटना। इस कारण बहुत मात्रा में ठोस तथा द्रव कण तथा गैसें वायुमंडल की काफी ऊँचाई तक पहुँच जाते हैं, जहाँ वे कई सप्ताह और वर्षों तक बने रहते हैं। उदाहरण के तौर पर फिलिपाइन में माउंट पिनाटुबो (Mt. Pinatubo) जो 15°N, 120°E पर स्थित है, जून 1991 में फटा था। अनुमान लगाया गया है कि इसके द्वारा लगभग 2 करोड़ टन ($2 \times 10^7$ Tonne), $SO_2$ गैस सीधे स्ट्रैटोस्फीयर में पहुँच गई, अर्थात् 20 km की ऊँचाई पर तथा उससे ऊँचे वाले

वायुमंडल के स्तर में पहुँच गई। वास्तव में $SO_2$ उस ऊँचाई पर OH से रासायनिक क्रिया करने के बाद $H_2SO_4$ का कण बन जाता है।

अब प्रश्न है कि ये निलम्बित ठोस कण (suspended particulate matter-SPM) कितने बड़े होते हैं? वायुमंडल के एरोसॉल की परिभाषा में हम धुन्ध, कोहरा, बादल, आदि भी सम्मिलित कर सकते हैं। इन कणों का व्यास $10^{-9}$m से लेकर $10^{-4}$m तक पाया जाता है। चित्र 11.1 में कुछ कणों के व्यास को माइक्रोमीटर ($1\,\mu m = 10^{-6}m$) मात्रक में दिखाया गया है।

कुछ कणो के व्यास (µm)
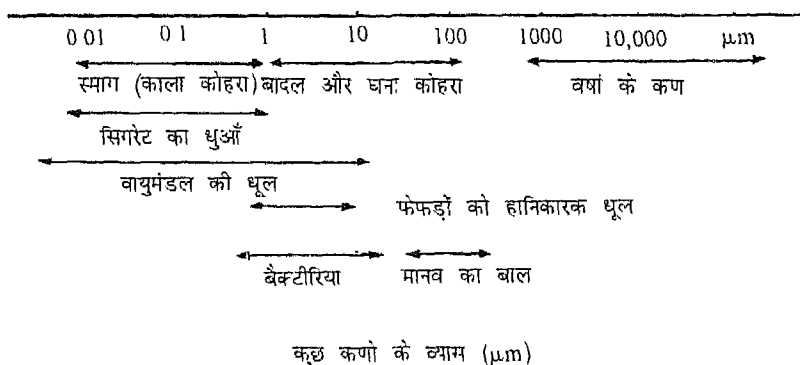
चित्र 11.1

## मानवकृत निलम्बित कण तथा गैसें

उद्योग तथा तकनीकी धंधों में ऊर्जा की आवश्यकता होती है। इस ऊर्जा को हम लोग कोयला, तेल, प्राकृतिक गैस या ईंधनों को जलाकर प्राप्त करते हैं। इसी तरह कार, ट्रक, हवाई जहाज और अन्य परिवहन को चलाने के लिए भी ऊर्जा इन्हीं ईंधनों से प्राप्त की जाती है। फॉसिल ईंधन ऊर्जा के पारम्परिक स्रोत हैं। आजकल पनबिजली, आण्विक ऊर्जा, सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा, सागर ऊर्जा, भूगर्भ ऊर्जा आदि के नये स्रोत भी उपलब्ध हो गये हैं। परन्तु अभी भी फॉसिल ईधन बहुत अधिक मात्रा में प्रयोग होता है जिसके कारण

वायुमंडल में प्रदूषण फैलता है और यही हवा में एरोसॉल या निलम्बित कणों का एक बहुत बड़ा स्रोत है।

अब पहले कोयले पर विचार करें। पत्थर का कोयला वास्तव में एक रासायनिक मिश्रण है। इसमें कार्बन, वाष्पशील पदार्थ (volatile matter) तथा खनिज पदार्थ होते हैं। इसको जलाने पर कार्बन वाला भाग पूर्ण रूप से आक्सीकरण होने पर $CO_2$ और अपूर्ण आक्सीकरण पर CO (carbon monoxide) बनता है। वाष्पशील पदार्थ कोलतार के रूप में इकट्ठा कर लिया जाता है। कोयले के जलने पर बची हुई राख (ash) में अधिकतर $SiO_2$, $Al_2O_3$ होता है और थोड़ी मात्रा में Fe, Ca, Mg आदि के आक्साइड। कोयले में 0.5 से 5 प्रतिशत तक सल्फर (S) भी होती है जो जलने पर $SO_2$ गैस बन जाती है। यह गैस उचित परिस्थिति पाकर $H_2SO_4$ बन जाती है। ऊँचाई पर यही सल्फेट एरोसॉल है।

अब हाइड्रोकार्बन (पेट्रोल, डीजल, गैस आदि) पर ध्यान दें। इनको कारों, आंतरिक दहन इंजन (internal combustion engine) भट्टियों आदि में जलाया जाता है। यदि पूर्ण रूप से दहन क्रिया (combustion) न हो तो (i) बिना जला हुआ हाइड्रोकार्बन विसर्जित धुएँ द्वारा हवा में आयेगा। (ii) $CO_2$ तथा $H_2O$ के अलावा CO गैस निकलेगी। तकनीकी तौर पर यह सम्भव है कि पूर्ण आक्सीकरण कराकर CO का उत्पादन रोका जाए परन्तु ध्यान देने की बात यह है कि हाइड्रोकार्बन में थोड़ी-सी मात्रा में यदि सल्फर S भी होता है जो जलने पर वह $SO_2$ बन जाता है। उत्पादित $SO_2$ गैस की मात्रा पेट्रोल में सल्फर की मात्रा पर निर्भर है। $SO_2$ का बनना ईंधन की आक्सीकरण क्षमता बढ़ाने से भी रोका नहीं जा सकता है। इसके अलावा SO, $N_2O$ तथा $NO_2$ गैसें भी बन सकी हैं जो वायुमंडल में उत्सर्जित धुएँ के साथ निकलेंगी।

तरह-तरह के उद्योगों से, विभिन्न धातुओं की तथा रासायनिक फैक्ट्रियों से कई विषैली गैसें निकलती हैं। इन सबका हम जिक्र नहीं करेंगे। जिस गैस की इन दिनों विशेष चर्चा है वह है क्लोरोफ्लोरो कार्बन (CFC) गैस। इस गैस का ओजोन परत का क्षय करने में विशेष हाथ है। इसके अलावा मीथेन ($CH_4$) गैस की मात्रा भी वायुमंडल में बढ़ रही है। मीथेन गैस

धान की खेती से, विशेष रूप से जहाँ पानी इकट्ठा रहता है, और मानव तथा जानवरों के अपशिष्ट से पैदा होती है। वायुमंडल में मीथेन गैस काफी समय तक नष्ट नहीं होती है। एक अनुमान है कि यह लगभग 10 वर्ष तक बनी रहती है।

सारांश यह है कि मानव अपनी गतिविधियों द्वारा बहुत-सी गैसें तथा ठोस व द्रव कणों को वायुमंडल में फैला रहा है। कुछ गैसों के कारण आजकल खतरा पैदा हो रहा है और उन पर विशेष ध्यान दिया जा रहा है। मुख्य रूप से ये निम्न गैसें हैं:

कार्बन मोनो आक्साइड (CO), सल्फर डाइआक्साइड ($SO_2$), हाइड्रोकार्बन, नाइट्रोजन के आक्साइड ($N_2O$) आदि, ओजोन तथा मीथेन ($CH_4$)।

अब प्रश्न उठता है कि मानव अपनी गतिविधियों द्वारा प्रति वर्ष कितनी मात्रा में इन गैसों को वायुमंडल में छोड़ता है। इसके कई अनुमान लगाये गए हैं। कुछ गैसों के आंकड़े इस प्रकार हैं जो 1992 की रिपोर्ट IPCC (Intergovernmental Panel on climate change) से लिए गए हैं। इनका विवरण इस प्रकार है।

1. $CO_2$: कार्बन को जलाने से यह गैस निम्न क्रिया द्वारा उत्पन्न होती है।

$$C + O_2 \rightarrow CO_2$$
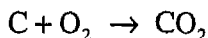
अर्थात् 12 kg कार्बन 32 kg आक्सीजन से मिलकर 44 kg कार्बन डाइआक्साइड गैस बनती है। रिपोर्ट के अनुमानों के आंकड़ों में केवल कार्बन की मात्रा बताई जाती है जो कार्बन डाइआक्साइड के द्रव्यमान का केवल $\frac{12}{44}$ वाँ भाग होगा। यह अनुमान है कि 1990 में कार्बन की मात्रा निम्न थी :

$$7 \text{ Gigatonne (Carbon)} = 7 \times 10^9 \text{ tonne} = 7 \times 10^9 \times 10^3 \text{ kg}$$
$$= 7 \times 10^{12} \text{ kg (carbon)}$$

इसको संक्षेप में 7 GtC लिखा जाता है।

2. $CH_4$: मीथेन गैस के उत्पादन का अनुमान 1990 में लगभग 500 terragram है जिसे 500 Tg लिखते हैं। $500 Tg = 500 \times 10^{12} g = 5 \times 10^{11} kg$

3. $N_2O$: इसके अनुमान में भी नाइट्रोजन (N) की मात्रा ही बताई जाती है। अर्थात् $N_2 + \frac{1}{2} O_2 \rightarrow N_2O$ रासायनिक क्रिया में 28kg नाइट्रोजन का 16 kg आक्सीजन से मिलकर 44 kg $N_2O$ गैस बनती है। इस तरह $N_2O$ गैस के द्रव्यमान में 28/44 वाँ भाग नाइट्रोजन है। यह अनुमान है कि 1990 में लगभग 13 TgN छोड़ी गई।

4. $SO_2$: इस अनुमान में सल्फर (S) की मात्रा बताई जाती है। $S + O_2 \rightarrow SO_2$ रासायनिक क्रिया में 32 kg सल्फर, 32 kg आक्सीजम से मिलकर, 64 kg सल्फर डाइआक्साइड ($SO_2$) गैस बनती है। अतएव $SO_2$ के द्रव्यमान में सल्फर का भाग आधा है। एक अनुमान है कि 1990 में लगभग 100 TgS वायुमंडल में छोड़ा गया।

ये मात्राएँ निम्न तालिका में दिखाई गई हैं:

| C | $CH_4$ | N | S |
|---|---|---|---|
| 7GtC | 500 Tg | 13 TgN | 100 TgS |

आइए अब इन मात्राओं का पृथ्वी के वायुमंडल के द्रव्यमान से मुकाबला करें। वायुमंडल का द्रव्यमान लगभग $5.3 \times 10^{18}$kg है। अतएव छोड़ा गया कार्बन इसका केवल $10^{-6}$ वाँ भाग अर्थात् एक दस-लाखवाँ भाग ही है। इसी अनुमान से और प्रदूषक तो और भी कम मात्रा में छोड़े जाते हैं। इन आंकड़ों से ऐसी धारणा हो सकती है कि इतनी कम मात्रा में प्रदूषक से कोई विशेष प्रभाव न पड़ेगा।

हमें अब यह विचार करना है कि क्या यह सही है? स्पष्ट है कि यह सही नहीं है। कारण यह है कि ये प्रदूषक वायुमंडल में कई साल तक बने रहते हैं और इकट्ठे होते रहते हैं। दूसरी बात यह है कि प्रदूषक वायुमंडल में फैलकर तुरन्त एकसमान नहीं हो जाते। कहीं पर

कम और कहीं पर अधिक होते हैं। तीसरी बात कुछ गैसें तो थोड़ी-सी मात्रा में भी बहुत हानिकारक हैं। अब हम यह देखेंगे कि इन प्रदूषकों का क्या प्रभाव होता है?

## प्रदूषक गैसों और निलम्बित कणों के प्रभाव

प्रदूषक गैसों और कणों के प्रभाव को समझने के लिए हम उन्हें तीन समूह में बाँटेंगे (1) जो विषैले हैं (2) जो हरित गृह प्रभाव करते हैं (3) जो ओजोन की परत को क्षीण करते हैं।

पहली श्रेणी का उदाहरण है कार्बन मोनो आक्साइड CO गैस। इस गैस का कोई गंध या रंग नहीं है। परन्तु श्वास में जाने पर यह शरीर के अंगों के ऊतकों (tissue) में आक्सीजन को पहुँचने से रोक देती है और अन्त में मृत्यु हो सकती है। उदाहरण के तौर पर यदि कार का इंजन बन्द गैरेज में चलता रहे तो शीघ्र ही इसकी मात्रा में CO उत्पन्न हो सकती है जो जान लेवा हो सकती है। इसी तरह बन्द कमरों में जाड़े के दिनों में जलती हुई कोयले की अँगीठी रखने से, या बन्द कमरे में बिजली के जेनरेटर चलाने से बहुत लोग जान गँवा चुके हैं।

दूसरी श्रेणी में हरित गृह प्रभाव वाली गैसें हैं। वायुमंडल में दीर्घकाल तक बनी रहने वाली हरित गृह गैसों में प्रमुख कार्बन डाइआक्साइड ($CO_2$), मीथेन ($CH_4$), नाइट्रस आक्साइड ($N_2O$) तथा क्लोरोफ्लोरो कार्बन (CFC) वाली गैसें तथा कार्बन टेट्राक्लोराइड ($CCl_4$) हैं। ये गैसें पृथ्वी से उत्सर्जित विकिरण का अवशोषण करती हैं जिसके फलस्वरूप पृथ्वी और वायुमंडल के ताप में वृद्धि होती है।

तीसरी श्रेणी में क्लोरोफ्लोरो कार्बन गैसें (CFC's) तथा नाइट्रिक आक्साइड (NO) और नाइट्रोजन डाइआक्साइड ($NO_2$) गैसें हैं। सूर्य के प्रकाश में ये गैसें स्ट्रैटोस्फीयर में विद्यमान ओजोन से रासायनिक प्रक्रिया करती हैं। इसके फलस्वरूप ओजोन गैस ($O_3$) टूटकर आक्सीजन ($O_2$) गैस बन जाती है। इस कारण ओजोन की परत क्षीण हो जाती है। ओजोन की परत पृथ्वी पर रहने वाले प्राणियों की पराबैंगनी किरणों से रक्षा करती है। ओजोन की

परत झीनी होने पर पृथ्वी की सतह तक इन पराबैंगनी किरणों के पहुँचने के कारण त्वचा कैंसर जैसे रोग होने की संभावना बढ़ जाती है।

अब एरोसॉल (aerosol) पर ध्यान दीजिए। इन निलम्बित कणों का प्रभाव उनके साइज तथा प्रकृति पर निर्भर है। सबसे पहले हम यह जानना चाहेंगे कि जब निलम्बित कण वायुमंडल में विद्यमान हैं और सूर्य की किरणें उन पर पड़ती हैं तो क्या प्रभाव हो जाता है? ये छोटे-छोटे कण सूर्य की किरणों का प्रकीर्णन करके उन्हें अंतरिक्ष की ओर वापस भेज देते हैं। अतएव सौर ऊर्जा का एक छोटा-सा भाग जो पृथ्वी तक आने वाला था, इन निलम्बित कणों के कारण वापस लौट जाता है। पृथ्वी और वायुमंडल को कम ऊर्जा प्राप्त होने के कारण पृथ्वी थोड़ी ठंडी हो जायेगी। यह प्रभाव हरित गृह प्रभाव वाली गैसों से उल्टा है।

एक दूसरा प्रभाव जो दैनिक जीवन में दिखाई देता है, वह इसके कारण अधिक कोहरे का बनना है। इसका कारण यह है कि इन छोटे-छोटे कणों पर जलवाष्प की छोटी-छोटी बूँदें बन जाती हैं। यह उस समय होता है जब वायुमंडल का ताप कम होता है। कोहरे के अलावा अधिक धुएँ वाले शहरों में अब काला कोहरा बनने लगा है। इसे स्मॉग (Smog) कहते हैं। यह अंग्रेजी के शब्द (Smoke) धुआँ तथा (fog) (कोहरा) के मेल से बना है। यह स्मॉग क्यों बनता है? साधारणतया पृथ्वी की सतह से गर्म हवा ऊपर उठ कर चली जाती है और उसकी जगह निकट के क्षेत्रों से ताजी हवा आ जाती है। गर्म हवा का ऊपर जाने का कारण स्पष्ट है। जैसे-जैसे हम पृथ्वी से ऊपर की ओर जाते हैं तापमान घटता जाता है। यह तापमान लगभग 6°C प्रति किलोमीटर घटता है। अतएव हवा की ऊपर की परतें नीचे की परतों की तुलना में ठंडी होती हैं। और इस कारण गर्म हवा का ऊपर उठना जारी रहता है। अब सोचिये यदि मौसम के किन्हीं कारणों से पृथ्वी से कुछ ऊँचाई पर एक गर्म हवा की परत आ जाए तो क्या होगा? इस उल्टी परत (inversion layer) की वजह से पृथ्वी से उठकर धुएँ आदि वाली गर्म हवा ऊपर नहीं जायेगी और पृथ्वी की सतह के पास ही मँडराती रहेगी। इस प्रदूषित हवा में कारों से, फैक्ट्रियों से तथा घरों से निकला धुआँ विद्यमान होगा। इस तरह की अधिक दूषित हवा में साँस लेने में कष्ट होता है, गले में खराश और दम घुटता है। इस प्रकार

का कोहरा लन्दन में 20-30 वर्ष पहले अक्सर हुआ करता था। परन्तु अब वहाँ धुआँरहित ईंधन जलाने के कारण लन्दन में इस प्रकार के कोहरे नहीं होते। इसके विपरीत दिल्ली में यह प्रदूषण बढ़ रहा है। यह अनुमान है कि दिल्ली शहर में लगभग 2500 टन प्रदूषक पदार्थ प्रतिदिन मोटर वाहनों, कारखानों और अन्य स्रोतों से निकलते हैं। इसमें CO, NO, $NO_2$, $SO_2$, हाइड्रोकार्बन, निलम्बित ठोस पदार्थ आदि होते हैं। इस कारण दिल्ली में साँस का रोग बढ़ रहा है।

अन्त में, एक और प्रभाव का जिक्र करेंगे, वह है अम्ल वर्षा (acid rain)। यह तो हम देख चुके हैं कि फॉसिल ईंधन को जलाने से थोड़ी-सी मात्रा में $SO_2$ गैस बनती है जो वायुमंडल के ऊपरी स्तर में $OH^-$ (hydroxyl radical) से अभिक्रिया करने पर $H_2SO_4$ अम्ल बन जाती है। इसी तरह $N_2O$ गैस $HNO_3$ अम्ल में परिवर्तित हो जाती है। वर्षा का पानी इसे अपने साथ नीचे ले आता है। यह वर्षा पेड़, पौधे, प्राणियों पर हानिकारक प्रभाव डालती है। यहाँ तक कि प्राचीन इमारतों, हवा में खुली हुई मूर्तियों, कारों आदि सब पर संक्षारण (Corrosion) का प्रभाव होता है। इस सभ्यता की देन से मानव का भविष्य खतरे में है।

अध्याय 12

# पृथ्वी पर हवाएँ क्यों चलती हैं? मानसून क्यों आता है, तूफान क्यों उठता है?

प्रश्न है कि पृथ्वी पर हवाएँ क्यों चलती हैं? यह तो.हम जानते हैं कि गुरुत्वाकर्षण के कारण हमारा वायुमंडल पृथ्वी के साथ-साथ घूमता है। अर्थात् वायुमंडल और पृथ्वी की गति तुल्यकालिक (Synochronous) है। यदि ऐसा न होता तो सदैव पूर्व से पश्चिम की ओर तेज हवा चलती रहती क्योंकि पृथ्वी पश्चिम से पूर्व की ओर घूर्णन करती है। हम आसानी से गणना कर सकते हैं कि भूमध्य रेखा के निकट यह गति लगभग 1600 km प्रति घंटा होती है। परन्तु ऐसा नहीं है। इसलिए अब फिर प्रश्न उठता है कि तब पृथ्वी पर हवाएँ क्यों चलती हैं? सरल विज्ञान के सिद्धांत के अनुसार हम सब जानते हैं कि पवन एक उच्च दाब के क्षेत्र से निम्न दाब के क्षेत्र की ओर चलती है। इसलिए अब प्रश्न का रूप बदलकर यह हो जाता है कि किसी एक क्षेत्र में वायुमंडल का उच्च दाब और दूसरे क्षेत्र में निम्न दाब क्यों हो जाता है जिस कारण हवा का प्रवाह होता है? अर्थात् अब हमें पृथ्वी पर विभेदी दाब (differential pressure) के कारण का पता लगाना है। संक्षेप में इसका उत्तर यह है कि सूर्य की किरणों द्वारा भिन्न-भिन्न स्थानों पर विभेदी ताप उत्पन्न होते हैं जिसके फलस्वरूप भिन्न-भिन्न स्थानों पर विभेदी दाब उत्पन्न होते हैं और फिर इसी कारण पवन का प्रवाह होता है।

## सामान्य हवाएँ तथा हैडले सेल

हवाओं का बहना स्थान और समय के साथ बदलता रहता है। फिर भी हवाओं के बहने का एक सामान्य रूप है। हमारी पृथ्वी पर सामान्य रूप से हवाएँ किस प्रकार चलती हैं? इस समस्या को समझने के लिए हम पृथ्वी का एक सरल रूप मानेंगे। वह यह है कि समस्त पृथ्वी पर मिट्टी या जल एकसमान फैला हुआ है। वास्तव में कहीं पर महाद्वीप हैं, पहाड़ हैं, कहीं पर महासागर आदि हैं। इस कारण जो स्थानीय प्रभाव होता है उसे हम बाद में समझेंगे। इस काल्पनिक एकसमान पृथ्वी पर सूर्य की किरणें पड़ती हैं। पृथ्वी अपने अक्ष पर, जो उत्तरी और दक्षिणी ध्रुवों से होकर गुजरती है, घूर्णन करती है और 24 घंटों में एक चक्कर लगाती है। इसके साथ-साथ पृथ्वी सूर्य के चारों ओर, एक अंडाकार या दीर्घवृत्तीय कक्षा में चक्कर लगाती है। और एक वर्ष में एक चक्कर पूरा करती है। पृथ्वी की घूर्णन करने की अक्ष की दिशा अंडाकार कक्ष के तल पर समकोण नहीं है बल्कि 23.45° झुकी हुई है। इसके कारण भूमध्य रेखा के पास वाले उष्ण कटिबन्ध क्षेत्र (tropics) पर तो सूर्य की किरणें सीधी पड़ती हैं परन्तु दोनों ध्रुवों के निकट वाले क्षेत्र पर तिरछी। अतएव भूमध्य रेखा के निकट वाले क्षेत्र को अधिक सौर ऊर्जा मिलती है। फलस्वरूप इस क्षेत्र के वायुमंडल का ताप बढ़ेगा और उस कारण दाब। हवा गर्म होकर ऊपर की ओर उठेगी। इसकी जगह लेने के लिए निकटवर्ती उत्तरी और दक्षिणी क्षेत्रों से हवा आयेगी।
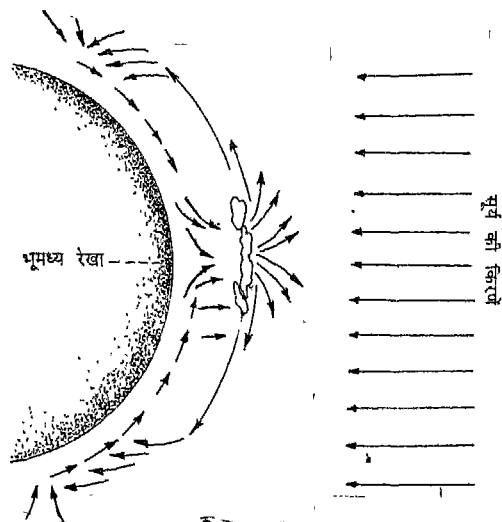
चित्र 12.1

इस प्रकार अन्तत: एक पवन का प्रवाह स्थापित हो जायेगा। आकाश में ऊँचाई पर गर्म हवा भूमध्य रेखा से ध्रुवों की ओर चलेगी। ध्रुवीय क्षेत्र को गर्म करने पर यह हवा ठंडी होकर वहाँ नीचे आ जायेगी। अत: पृथ्वी की सतह के निकट एक ठंडी हवा का प्रवाह दोनों ध्रुवों से भूमध्य रेखा की ओर होगा। देखिये चित्र 12.1। यह हवा भूमध्य रेखा पर पहुँचकर फिर गर्म होती और पहले की तरह ऊपर उठेगी, और ध्रुवों की ओर जायेगी। इस तरह संवाहन (Convection) के कारण यह चक्र चलता रहेगा। वायुमंडल में हवाओं के प्रवाह का यह सरल मॉडल सर्वप्रथम ब्रिटिश वैज्ञानिक जार्ज हैडले (George Hadley) ने 1735 में सोचा था। उनके सम्मान में इस तरह के उत्तरी और दक्षिणी हवा के प्रवाह के रास्ते को हैडले सैल (Hadley cell) कहते हैं।

यद्यपि मोटे तौर पर यह मॉडल सही है परन्तु विस्तार से विचार करने पर इसमें कुछ संशोधन करना आवश्यक है। भूमध्य रेखा के क्षेत्र में पृथ्वी की सतह से गर्म होकर हवा ट्रोपोस्फीयर स्तर में ऊपर उठती है। वायुमंडल के इस स्तर के ऊपरी भाग का ताप कम है। यहाँ हवा ऊर्जा देकर खुद कुछ ठंडी हो जायेगी और तब यह ध्रुव की ओर सफर पर चलेगी। परन्तु यह प्रवाह ध्रुव तक नहीं जाता। मध्य अक्षांश (mid latitude) तक ही पहुँचकर यह गर्म हवा ठंडी होकर नीचे उतर आती है और पृथ्वी की सतह के निकट होकर भूमध्य रेखा की ओर वापस लौटना शुरू कर देती है। अर्थात् हैडले सैल भूमध्य रेखा से ध्रुवों तक नहीं फैला है बल्कि लगभग आधे रास्ते तक ही है। इसका मुख्य कारण है पृथ्वी का तेज गति से घूर्णन करना*।

---

* पृथ्वी के घूर्णन का प्रभाव, पवन के प्रवाह पर कोरिऑलिस बल (Coriolis force) के कारण पड़ता है। गैस्पर्ड गुस्टाव डी कोरिऑलिस (Gaspard Gustov de Coriolis 1792-1843) एक फ्रांसीसी वैज्ञानिक थे। उन्होंने यह अध्ययन किया कि घूर्णन करती हुई पृथ्वी पर एक चलायमान पिंड की गति में क्या बदलाव आयेगा। हम यहाँ संक्षेप में चर्चा करेंगे। हवा के किसी एक पार्सल को सोचिये। उसकी चाल के दो भाग हैं। (1) वह जो पृथ्वी के स्थिर होने पर होता (2) वह जो पृथ्वी के घूर्णन ने उस हवा के पार्सल को दिया। एक प्रेक्षक जो पृथ्वी को दूर से देखेगा उसे हवा के पार्सल की चाल तथा पृथ्वी का घूर्णन दोनों ही दिखाई देंगे और वह सम्पूर्ण चाल नापेगा। परन्तु पृथ्वी पर बैठे प्रेक्षक को, चूँकि वह स्वयं पृथ्वी के साथ घूम रहा है पवन की चाल की दिशा में बदलाव नजर आयेगा। इसे हम कोरिऑलिस बल के कारण कहेंगे।

## सामान्य हवाओं का भूमंडल पर प्रवाह–एक चित्र

कोरिऑलिस बल को ध्यान में रखकर भूमंडल की हवाओं का अध्ययन किया गया है। हम यहाँ पर उसका परिणाम निम्न चित्रों में दिखा रहे हैं। इन चित्रों की प्रमुख बातों का हम अध्ययन करेंगे।

1. पहले पृथ्वी की सतह के निकट वाले चित्र को देखिये (चित्र 12.2)। हैडले सैल भूमध्य रेखा से लगभग 30° अक्षांश लैटीट्यूड तक ही है। इसके बाद हवा का प्रवाह उल्टी दिशा में होता है। इसे फैरेल सैल (Ferrel cell) कहते हैं जैसा चित्र में दिखाया गया है। ध्रुव के बिलकुल निकट हवा का प्रवाह प्रति चक्रवात (anticyclone) के रूप में होता है।

2. भूमंडल के उत्तरी तथा दक्षिणी दोनों भागों में लगभग 30° अक्षांश (लैटीट्यूड) से भूमध्य रेखा तक पृथ्वी की सतह के पास हवाएँ चलती हैं। ये पूर्व से पश्चिम की ओर भूमध्य रेखा की ओर चलती हैं, समुद्रों पर इन हवाओं को व्यापारिक पवन् (tradewind) कहा जाता है और जहाजों को चलाने में उपयोग किया जाता था। एटलांटिक महासागर को पार करके अमेरिका पहुँचने के लिए कोलम्बस ने इसी प्रवाह का उपयोग किया था। कहा जाता है कि उन्हें यह डर लग रहा था कि इस प्रवाह के साथ तो चले जायेंगे पर लौटेंगे कैसे?
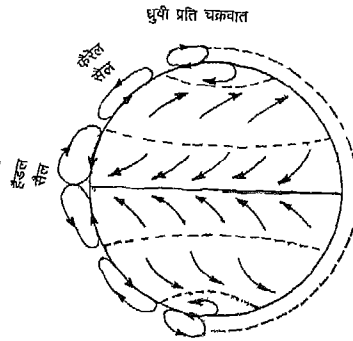
पृथ्वी की सतह के निकट हवाओ के प्रवाह की दिशा

चित्र 12.2

3. 30°-40° अक्षांश (लैटीट्यूड) पर हवा की दिशा दोनों उत्तरी और दक्षिणी गोलार्धों में पश्चिम में पूर्व की ओर है। दक्षिणी गोलार्ध (Southern hemisphere) में ये हवाएँ

बहुत प्रबल होती हैं और वहाँ सदैव तूफान चलता रहता है। इस कारण नाविक 40° के पास के अक्षांश (लैटीट्यूड) को "तूफानी चालीसा" (roaring forties) कहते हैं।

ट्रोपोस्फीयर के ऊपरी भाग म हवाओं के प्रवाह की दिशा

**चित्र 12.3**

आइये अब हम पृथ्वी की सतह से ऊपर वाले भाग अर्थात् स्ट्रैटोस्फीयर की हवाओं के प्रवाह पर विचार करें। विशेष तौर पर इस ऊँचाई पर हवाएँ पृथ्वी की सतह की हवाओं से उल्टी दिशा में चलती हैं। देखिये चित्र 12.3।

1. मध्य रेखा से मध्य अक्षांश (लैटीट्यूड) तक हवाएँ पश्चिम से पूर्व की ओर चलती हैं।
2. 30° अक्षांश के पास पृथ्वी के चारों ओर एक प्रबल हवा पश्चिम से पूर्व की ओर चलती है। इसे जेट धारा (jet stream) कहते हैं। यह लगभग 9 किलोमीटर की ऊँचाई पर होती है। इस प्रवाह की औसत गति लगभग 100 किलोमीटर प्रति घंटे से अधिक होती है। इसलिए वैज्ञानिक प्रयोग के लिए छोड़े गये हीलियम से भरे गुब्बारे इस प्रवाह में कभी-कभी दर्जनों बार पृथ्वी की परिक्रमा करते पाये गये हैं। यह ध्यान देने की बात है कि यह परिक्रमा केवल दक्षिणी गोलार्ध में ही सम्भव है। उत्तरी गोलार्ध में हिमालय पर्वत इसके रास्ते में पड़ता है। इसलिए उत्तरी भाग में परिक्रमा नहीं हो पायेगी। एक बात स्पष्ट रूप से समझ लेनी चाहिए कि चित्र में हवाओं की सामान्य तथा औसत दिशा ही दिखाई गई है। ये हवाएँ सदैव नहीं चलतीं जैसा शायद इस चित्र को देखने से भ्रम हो सकता है। दूसरी बात वायुमंडल की हवाओं के प्रवाह को पूरी तरह अभी नहीं समझा गया है और इसलिए पूर्वानुमान भी नहीं किया जा सकता है।

## स्थानीय हवाएँ–तटवर्ती समुद्री समीर

हमने अभी तक एक काल्पनिक पृथ्वी पर विचार किया है जिसमें सभी स्थानों पर मिट्टी और जल आदि एकसमान रूप से फैले हुए हैं। इस मॉडल के आधार पर पृथ्वी पर चलने वाली सामान्य हवाओं का अध्ययन किया गया। परन्तु वास्तव में इस पृथ्वी पर कहीं पर महाद्वीप हैं, कहीं पर पहाड़, और कहीं पर समुद्र हैं। अतएव हमें यह देखना है कि सूर्य की किरणें जब इस तरह की वास्तविक पृथ्वी पर पड़ती हैं तब ताप, दाब और हवा के जगह-जगह पर क्या रूप होते हैं? यहाँ पर समस्या यह है कि जब धूप धरती, जल और वायु पर पड़ती है तब इन तीनों का ताप समान रूप से नहीं बढ़ता। इस कारण इनमें एक तापीय प्रवणता (thermal gradient) पैदा होती है। तापीय प्रवणता के कारण दाब प्रवणता उत्पन्न होती है और फलस्वरूप हवाएँ चलती हैं। ये हवाएँ स्थान-स्थान पर भिन्न होंगी।

इसको विस्तार से समझने के लिए दैनिक जीवन के अनुभव की ओर ध्यान दीजिए। समुद्र के तट से 10-20 किलोमीटर के भीतर रहने वालों को यह अनुभव है कि धूप वाली दोपहर के समय समुद्र की ओर से ठंडी हवाएँ आती हैं। इसके विपरीत शाम के बाद गर्म और उमस वाली हवाएँ चलती हैं जो जमीन से समुद्र की ओर चलती हैं। इस प्रभाव को आसानी से इस प्रकार समझा जा सकता है।

किसी स्थान पर सूर्य से आई धूप की किरणें धरती, उसके ऊपर की हवा, तथा समुद्र के पानी पर एकसमान पड़ती हैं। परन्तु धरती, हवा और समुद्र का पानी धूप पड़ने पर एकसमान गर्म नहीं होते। कारण यह है कि एक घन मीटर हवा, एक घन मीटर मिट्टी और एक घन मीटर पानी का ताप 1°C बढ़ाने के लिए अलग-अलग ऊष्मा की आवश्यकता होती है। ये भिन्न-भिन्न मात्राएँ इस प्रकार हैं:

| | | |
|---|---|---|
| हवा | - | $3 \times 10^2$ कैलोरी |
| मिट्टी | - | (0.5 से 0.8) $\times 10^6$ कैलोरी |
| पानी | - | $1 \times 10^6$ कैलोरी |

इसके अनुसार हवा को गर्म करने के लिए तो बहुत ही कम ऊष्मा की आवश्यकता होती है। उतने ही पानी को उतना ही गर्म करने के लिए हजार गुना से भी अधिक ऊष्मा की जरूरत होगी। मिट्टी को उतना हीं गर्म करने में पानी की अपेक्षा लगभग आधी ऊष्मा की जरूरत होगी।

इस ऊष्मीय क्षमता के अलावा एक और कारण है जिससे धूप पड़ने पर धरती शीघ्र गर्म हो जायेगी और फलस्वरूप समुद्र के पानी और पृथ्वी की सतह के ताप में अन्तर बढ़ जाता है। पृथ्वी की सतह ठोस है और मिट्टी की संरचना ऐसी है कि उसकी ऊष्मा चालकता
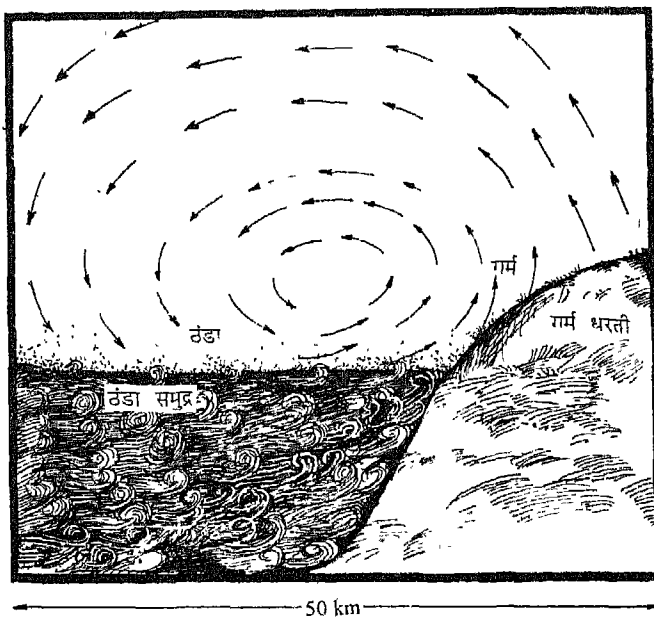
समुद्री समीर - दिन का चक्र

**चित्र 12.4**

(thermal conductivity) कम है। अतएव पृथ्वी पर धूप पड़ने पर ऊष्मा पृथ्वी के अन्दर धीरे-धीरे घुसती है। सौर ऊर्जा का अधिकतर भाग पृथ्वी की ऊपरी सतह तथा उससे छूती हुई हवा को गर्म करने में व्यय हो जाता है। यह पृथ्वी की दिन में स्थिति है।

अब देखिये समुद्र के जल की स्थिति, दिन में जब जल की सतह पर धूप पड़ती है। पहली बात तो यह है कि जल की ऊष्मीय क्षमता अधिक है। इसलिए यदि और बातें एक-सी भी हों तो जल के ताप में वृद्धि कम होगी। दूसरी बात है कि, पृथ्वी के विपरीत, सौर ऊर्जा शीघ्र ही समुद्र की काफी गहराई तक घुस जाती है। इसका कारण है समुद्र के ऊपर चलने वाली हवाएँ, जो पानी को हिलाकर उसका एक प्रकार से मन्थन करती हैं। यह अनुमान लगाया गया है कि सौर ऊर्जा का प्रभाव समुद्र में 200 मीटर से भी अधिक गहराई तक पहुँचता है। इस तरह प्राप्त सौर ऊर्जा इस सारे आयतन में फैल जाती है और उन सबको गर्म करने में व्यय होती है। फलस्वरूप ताप में वृद्धि कम ही होगी। तीसरी बात, थोड़ा-थोड़ा जल, वाष्प में बदलता रहता है और जल से गुप्त ऊष्मा लुप्त होती रहती है। इसलिए पृथ्वी की सतह के ताप की अपेक्षा, समुद्र के जल के ताप में बढ़ोतरी काफी कम होती है और धीरे-धीरे होती है। भूमंडल के उत्तरी गोलार्ध में यह देखा गया है कि पृथ्वी का ताप, समुद्र के जल के ताप की अपेक्षा, 5°C से 10°C तक अधिक हो जाता है। पृथ्वी से पास हवा का भी ताप इसी प्रकार बढ़ जाता है।

अत: निष्कर्ष यह निकलता है कि दिन में पृथ्वी और उससे छूती हुई हवा का ताप, समुद्र के ताप की अपेक्षा अधिक हो जाता है। अतएव भूमि की सतह से गर्म हवा ऊपर की ओर उठती है और समुद्र की ओर, जो ठंडा है, फैलने लगती है। इस गर्म हवा की जगह लेने के लिए समुद्र से हवाएँ भूमि की ओर चलने लगती हैं, और ये हवाएँ ठंडी होंगी। इस तरह हवाओं के चलने का एक चक्र स्थापित हो जाता है जैसा कि चित्र 12.4 में दिखाया गया। यह समुद्री शीतल समीर के प्रवाह का दिन का चक्र (Sea breeze day cycle) है।

अब रात्रि की स्थिति पर विचार कीजिए। सौर ऊर्जा पड़नी बन्द हो चुकी है। पृथ्वी के

ऊपर की हवा और साथ ही साथ पृथ्वी की सतह शीघ्र ठंडी हो जायेगी। इसके विपरीत समुद्र अपेक्षाकृत गर्म होगा। दिन में पृथ्वी गर्म थी और समुद्र ठंडा। अब स्थिति उलट गई है, समुद्र गर्म और पृथ्वी ठंडी है। इसलिए शाम के बाद समुद्र के स्तर से गर्म और उमस वाली हवाएँ ऊपर उठेंगी और उसकी जगह लेने के लिए पृथ्वी से समुद्र की ओर हवा चलेगी। समुद्र से गर्म और उमस वाली हवाएँ थोड़ी दूर चलकर पृथ्वी पर उतरेंगी। इस समुद्री समीर का प्रभाव तट से लगभग 20–30 किलोमीटर तक ही सीमित रहेगा। समुद्री हवा का रात का चक्र चित्र 12.5 में दिखाया गया है।
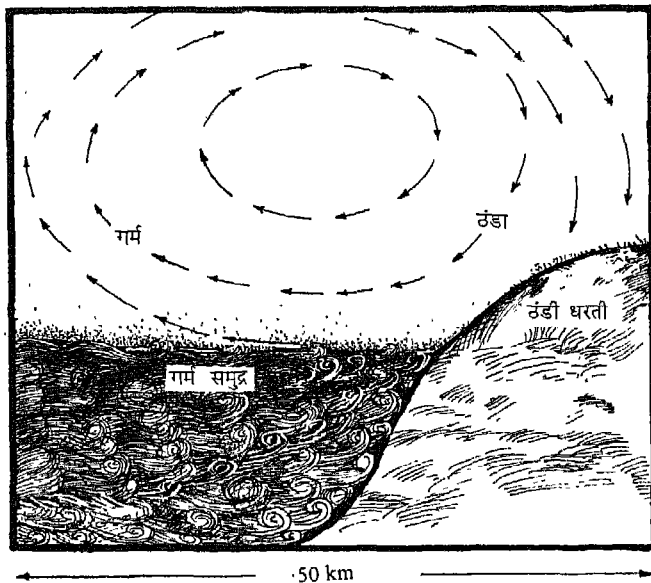
समुद्री समीर - रात का चक्र

**चित्र 12.5**

## मानसून

मानसून का विषय भारतवासियों के लिए विशेष महत्वपूर्ण है। सच पूछिये तो हमारी अर्थव्यवस्था मानसून पर निर्भर है। यह मानसून क्या है? गर्मियों के बाद जो वर्षा होती है, उसे मानसून कहा जाता है। मई के महीने के बाद से यह मानूसन की वर्षा दक्षिणी भारत में केरल की ओर से आती है। धीरे-धीरे यह मानसून सारे भारत पर फैल जाता है। देखा गया है कि प्रति वर्ष यह मानसून विभिन्न स्थानों पर लगभग निश्चित समय पर पहुँचता है। उदाहरण के तौर पर, इसके पहुँचने की तारीख दिल्ली के लिए 29 जून कही जाती है। मानसून पहुँचने से पहले कभी-कभी वर्षा होती है परन्तु वर्षा बहुत तेज होने पर भी मौसम वैज्ञानिक उसे मानसून की वर्षा नहीं कहते। अब प्रश्न है कि मानूसन फिर किसे कहते हैं?

मानसून पर बड़ी-बड़ी वैज्ञानिक पुस्तकें लिखी गई हैं। इस विषय पर बहुत शोध कार्य हो रहा है। जगह-जगह पर आंकड़े इकट्ठे करके इसको समझने का प्रयास जारी है। इसके पूर्वानुमान करने के लिए बड़े-बड़े कम्प्यूटर लगाये जा रहे हैं। फिर भी यह विषय ऐसा है कि पूरी तरह से समझ में नहीं आ पाया है। हम संक्षेप में इसकी कुछ प्रमुख बातों को समझने का प्रयास करेंगे।

सामान्य हवाओं के अ्ध्ययन में हम यह देख चुके हैं कि भूमंडल के उत्तरी गोलार्ध के ऊष्ण कटिबंधीय क्षेत्र में पृथ्वी की सतह पर हवाएँ पूर्व से पश्चिम की ओर चलती हुई भूमध्य रेखा की ओर जाती हैं। अर्थात् ये हवाएँ उत्तर-पूर्वी दिशा की ओर चलती हैं। इन्हें व्यापारिक पवन (trade winds) के नाम से कई शताब्दियों से जाना जाता रहा है, क्योंकि पुराने जमाने में इन हवाओं की मदद से जहाज एक जगह से दूसरी जगह जाते थे और व्यापार होता था। कई शताब्दियों पहले समुद्री व्यापारियों ने एक अजीब बात देखी कि उत्तरी हिन्द महासागर तथा उससे लगे हुए अरब सागर पर हवाओं की दिशा छः महीने तक एक तरफ रहती है और अगले छः महीने तक यह दिशा विपरीत हो जाती है। इन हवाओं की दिशा छः महीनों बाद बिलकुल निश्चित रूप से तथा निश्चित समय पर हर साल बदलती है। इन्हीं हवाओं का एकत्रित नाम मानसून है। यह नाम मौसम शब्द से बना है। ये हवाएँ गर्मी के मौसम के बाद भारत पर छः महीने तक दक्षिण पश्चिम दिशा

की ओर से आती हैं। इन्हीं हवाओं द्वारा भारत पर अधिकांश वर्षा होती है। इसे ग्रीष्म मानसून कहते हैं। अगले छः महीने अर्थात् जाड़े में ये हवाएँ उत्तर-पूर्व दिशा से आती हैं। ये हवाएँ जाड़े की मानसून लाती हैं।

अब प्रश्न है कि क्या हवाओं की दिशा का इस प्रकार उलटना समस्त भूमंडल पर होता है? उत्तर है नहीं। अटलांटिक महासागर तथा प्रशान्त महासागर पर ये हवाएँ सदैव एक ही दिशा में चलती हैं। हिन्द महासागर के दक्षिणी भाग में भी ऐसा ही है। इन हवाओं की दिशाएँ भूमंडल की सामान्य हवाओं की दिशाओं के अनुरूप हैं। यह बात ध्यान देने की है कि हिन्द महासागर के उत्तरी भाग में भी छः मास तक हवाओं की दिशा भूमंडल की हवाओं के सामान्य दिशाओं के अनुरूप है। केवल गर्मियों के बाद यहाँ की हवाओं की दिशा उलट जाती है। क्यों? इसका उत्तर 1686 में ब्रिटिश खगोल शास्त्री एडमंड हैली (Edmund Halley) ने सुझाया। उन्होंने कहा कि यह ध्यान रखने की बात है कि हिन्द महासागर के उत्तरी दिशा में 30 डिग्री अक्षांश के भीतर सब जगह धरती है जिसमें अरब, ईरान, भारत आदि देश हैं। अतएव इस धरती समूह की उपस्थिति ही इसका कारण है। इसका संक्षिप्त वर्णन इस प्रकार है।

हम देख चुके हैं कि धरती और समुद्र पर जब सौर ऊर्जा पड़ती है, तब दोनों एकसमान गर्म नहीं होते हैं। धरती और जल के ऊष्मीय गुणों के कारण इनके बीच विभेदी ताप उत्पन्न होता है। इसी सिद्धांत पर तटवर्ती क्षेत्रों में समुद्री समीर का चलना समझा जाता है। अब इसी सिद्धांत पर मानसून भी समझा जा सकता है। समुद्री समीर का चक्रकाल 24 घंटे है और स्पष्ट है कि इसका कारण है दिन में सौर ऊर्जा का पड़ना और रात्रि में इस ऊर्जा का न होना। अब देखिये उत्तरी गोलार्ध के उस धरती के टुकड़े को जो भारत, ईरान, अरब आदि देशों का है। ग्रीष्म काल में सूर्य कर्क रेखा (tropic of cancer) के ऊपर होता है। इस कारण धरती का यह क्षेत्र दिन में रोज तपता है। यद्यपि रात्रि में यह क्षेत्र कुछ ठंडा हो जाता है परन्तु दिन की तपन अधिक होती है। इस क्षेत्र के ताप के अध्ययन से पता चलता है कि भारत के उत्तर में तिब्बत के पठार का तपना विशेष महत्वपूर्ण है। इस क्षेत्र के ग्रीष्म ऋतु में लगातार तपने के कारण यहाँ की हवा ऊपर उठती रहेगी और इसका स्थान लेने के लिए समुद्र की ओर से

हवाएँ धरती की ओर आयेंगी। यह उसी प्रकार है जैसे दिन के चक्र में समुद्री समीर बहती है। यही ग्रीष्म मानसून है। समुद्र की ओर से आई हुई हवाएँ अपने साथ वर्षा लाती हैं। जाड़े में सूर्य दक्षिण की ओर चला जाता है और मकर रेखा (tropic of capricorn) के ऊपर होता है। अब हवाएँ धरती से समुद्र की ओर बहेंगी जैसे कि समुद्री समीर के रात्रि चक्र में होता है। यह है जाड़े का मानसून। यह हुआ प्रमुख तौर पर मानसून और उत्तरी हिन्द महासागर पर हवाओं के दिशा के पलटने का विवरण। मानसून का और विस्तार से अध्ययन करने से पता चला है कि यह केवल हिन्द महासागर के पास के क्षेत्र के ताप आदि पर निर्भर नहीं है। बड़ी दूर-दूर तक की और तरह-तरह की परिस्थितियों से यह प्रभावित होता है। अधिक जानकारी के लिए डा. कुलश्रेष्ठ की लिखी मानसून पर पुस्तक पढ़िये।

## कुछ विशिष्ट हवाएँ और विभिन्न तूफान

पृथ्वी पर हवाएँ सामान्य रूप से तथा स्थानीय हवाएँ किस प्रकार चलती हैं, इसका अध्ययन हम कर चुके हैं। यह तो सभी का अनुभव है कि हवाओं की दिशाएँ तथा वेग सदैव एक से नहीं रहते। कभी-कभी इनमें जबरदस्त परिवर्तन व विक्षोभ आता है। अक्सर ये विक्षोभ थोड़े ही समय के लिए आते हैं। परन्तु ये क्षणिक-विक्षोभ बहुत तहस-नहस मचा सकते हैं। इन विक्षोभों द्वारा कई तरह के तूफान उत्पन्न होते हैं। कुछ प्रमुख तूफानों को निम्न नाम दिये गए हैं। चक्रवात (cyclone), प्रतिचक्रवात (anticyclone), तड़ित झंझा (thunderstorm), टारनेडो (tornado), प्रभंजन (hurricane), टाइफून (typhoon), भंवर, वातावर्त (whirlwind), रेतीली और धूल भरी आँधी (sand storm and dust storm), बर्फानी तूफान (blizzard) आदि। भिन्न-भिन्न स्थानों पर इन तूफानों को कभी-कभी भिन्न नामों से भी पुकारा जाता है। इन सब तूफानों का अध्ययन एक लम्बा और जटिल विषय है। यहाँ पर हम संक्षेप में कुछ सामान्य बातों का ही इन विभिन्न तूफानों के बारे में विवरण प्रस्तुत करेंगे।

यह बात फिर से स्पष्ट तौर पर समझ लेनी चाहिए कि सौर ऊर्जा द्वारा भिन्न स्थानों पर विभेदी ताप और फलस्वरूप विभेदी दाब उत्पन्न करना ही हवाओं के बहने का कारण है। प्रमुख तौर पर

पृथ्वी के उस क्षेत्र पर, जो भूमध्य रेखा के पास है (ऊष्ण कटिबन्धीय क्षेत्र), अधिक सौर ऊर्जा पड़ती है। फलस्वरूप भूमध्य रेखा तथा ध्रुवों के बीच तापमान में काफी अन्तर हो जाता है। गर्म स्थान से ठंडे स्थान पर हवा का प्रवाह इस ताप के अन्तर को कम करने की प्रक्रिया है। हवाओं के साथ जलवाष्प मिलकर बादल का रूप और कभी-कभी तूफान का रूप ले लेती है।

## चक्रवात, प्रतिचक्रवात

वास्तव में प्रतिचक्रवात (anticyclone) हवा का अपेक्षाकृत उच्च दाब का क्षेत्र है और चक्रवात (cyclone) हवा के निम्नदाब* का क्षेत्र। दोनों में एक लक्षण समान है। दोनों में हवाओं के प्रवाह का प्रतिरूप अर्थात् पैटर्न, सर्पिल (spiral) की शक्ल का है।

उत्तर गोलार्ध में चक्रवात में हवाओं का प्रवाह दक्षिणावर्त (clockwise) होता है और प्रतिचक्रवात का वामावर्त (anticlockwise) होता है। दक्षिणी गोलार्ध में ये दिशाएँ उलट जाती हैं। ये चक्रवात और प्रतिचक्रवात सारी दुनिया में होते हैं। चक्रवात बहुधा कठोर मौसम लाते हैं, और उसमें हवा का प्रवाह ऊपर की ओर होता है। औसत वेग 5-10 cm/s होता है। प्रतिचक्रवात शान्त शुष्क मौसम लाते हैं और काफी बड़े पैमाने पर होते हैं यहाँ तक कि कभी-कभी सैकड़ों किलोमीटर की दूरी तक फैले होते हैं। इनमें हवा का वेग 1-3 cm/s और नीचे की ओर होता है।

## तड़ित झंझा (Thunderstorm)

ये गरजते तूफान हैं। इस तरह के तूफानों में बिजली तथा गर्जन दोनों होते हैं। इसके साथ बहुधा तेज हवा और वर्षा भी होती है। ये तूफान थोड़ी देर के लिए आते हैं। ये एक विशेष

---

* हम यह देख चुके हैं कि समुद्र तल पर हवा का औसत दाब लगभग $10^5$Pa है। मौसम वैज्ञानिक हवा के दाब की मात्रा को बताने के लिए अक्सर बार (bar) तथा मिलीबार (millibar) मात्रक का प्रयोग करते है।

$10^5$Pa = 1 bar = 1000 millibar (mb)

अक्सर दाब का परिवर्तन लगभग 5% होता है। उदाहरण के तौर पर निम्नदाब के क्षेत्र का दाब 925 mb हो सकता है और उच्चदाब का 1030 mb हो सकता है।

प्रकार के बड़े विशाल बादल (Cumulonimbus) के साथ आते हैं, जिसे चित्र 12.6 में दिखाया गया है। यह विशाल बादल 2 km की ऊँचाई से 12-14 km की ऊँचाई तक फैले हो सकते हैं। इस प्रकार के बादलों का काफी अध्ययन किया गया है। संक्षेप में इन बादलों के लगभग 10km ऊँचाई वाले भाग में, जहाँ ताप लगभग -45°C है, धन विद्युत आवेश होता है। नीचे वाले भाग में अर्थात् लगभग 5 km की ऊँचाई के आस पास जहाँ ताप लगभग –15°C होगा, ऋणात्मक आवेश होता है। बीच वाले भाग में दोनों तरह के आवेश होते हैं। यह अनुमान लगाया गया है कि विद्युत आवेश लगभग 40 कूलम्ब होता है। बादल और पृथ्वी के बीच विभव अन्तर (potential difference) लगभग $10^8$ वोल्ट (volt) होता है। बादल से बादल तक और बादल से पृथ्वी तक बिजली गिरती है। यह बिजली कैसे गिरती
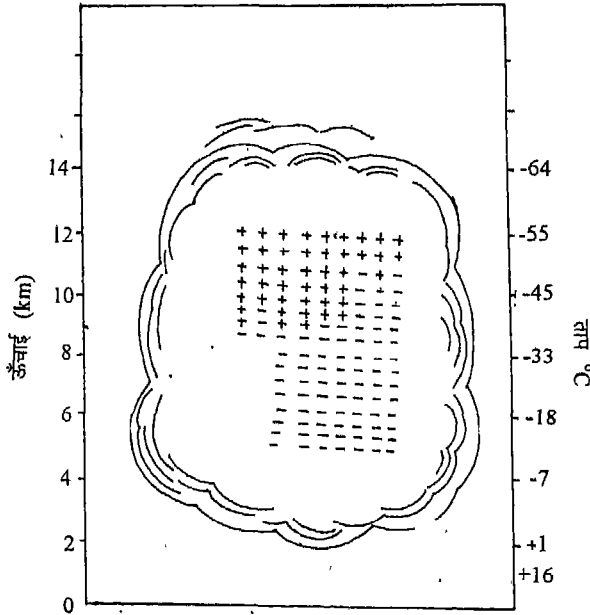
चित्र 12.6

है और उसका क्या स्वरूप होता है, आदि एक अलग ही विषय है। हम इतना ही यहाँ बतायेंगे कि यह क्रिया क्षणिक होती है जिसकी अवधि $10^{-6}$ सेकंड होती है। इसमें हजारों एम्पियर विद्युत प्रवाह होता है। बिज़ली के रास्ते में उस ऊँचाई पर ताप 3000 K तक पहुँच जाता है। जब हवा में बिजली की धारा गुजरती है तब उसका ताप तेजी से बढ़ता है और इस कारण हवा का तेजी से प्रसार होता है। यही प्रसार शीघ्र ही ध्वनि की गति से चलता है और गर्जन सुनाई देती है। इस क्रिया में तेज रोशनी चमकती है, गड़गड़ाहट होती है। हम जानते हैं कि प्रकाश $3 \times 10^8$ km/s के वेग से चलता है और ध्वनि 335 m/s वेग से। इसलिए पहले बिजली की चमक दिखाई देती है और बाद में गर्जन। उदाहरण के तौर पर गर्जन की आवाज यदि बिजली चमकने के 2 सेकंड बाद सुनाई देती है तब वह बादल लगभग 670 मीटर दूरी पर स्थित है। यह अनुमान किया गया है कि एक अच्छे तूफान में $10^7$ kWh (kilowatt hour) ऊर्जा होती है। यह 20 किलोटन अणुबम की शक्ति के बराबर है जो हिरोशिमा पर डाला गया था। कुछ बड़े तूफानों (thunderstorm) में तो इससे 10–100 गुनी अधिक ऊर्जा होती है।

अब प्रश्न है कि यह ऊर्जा कहाँ से आई? उत्तर है कि यह अधिकतर जलवाष्प के द्रवण होकर जल बनने से आती है। प्रति ग्राम वाष्प के पानी बनने में लगभग 550 कैलोरी गुप्त ऊष्मा बादल को मिलती है। पानी के जमने में इसके अतिरिक्त 80 कैलोरी प्रति ग्राम गुप्त ऊष्मा आती है। कितना पानी वर्षा के रूप में पृथ्वी पर आया उसकी मात्रा से इस ऊर्जा की गणना की जा सकती है। उदाहरण के तौर पर हम गणना कर सकते हैं कि यदि एक बादल 1 km × 1 km क्षेत्र में 1 cm वर्षा करता है तो उस बादल में कितनी ऊर्जा थी? सर्व प्रथम हम इस क्षेत्र में वर्षा द्वारा पानी की मात्रा निकालेंगे, फिर उसकी गुप्त ऊष्मा। पानी का आयतन $= (1000 \times 100)\text{cm} \times (1000 \times 100)\text{cm} \times 1\ \text{cm} = 10^{10}\ \text{cm}^3 \approx 10^{10}$ ग्राम पानी। इस पानी की मात्रा को बनने में जलवाष्प ने $10^{10} \times 550$ कैलोरी गुप्त ऊष्मा मुक्त की होगी जो $10^{10} \times 550 \times 4.2$ J ऊर्जा के बराबर है। यह लगभग एक अच्छे तूफान की ऊर्जा $10^7$kWh के बराबर है।

यह ऊर्जा जब बादलों में मुक्त होती है तो कहाँ जाती है? स्पष्ट है कि वहाँ की हवा को यह गतिज ऊर्जा के रूप में मिलेगी। यही तेज हवा तहस-नहस मचाती है। इस प्रकार के तूफानों का वेग नापा गया है। इनकी औसत गति 20 km प्रति घंटा पाई गई है परन्तु 65 से 80 km प्रति घंट्रा के तूफान भी कभी-कभी आते हैं।

इन तूफानों के बनने के लिए सबसे अनुकूल परिस्थितियाँ भूमध्य रेखा के $10^{0}$ उत्तर तथा दक्षिण में मिलती हैं। उदाहरण के लिए अफ्रीका और दक्षिण अमेरिका के भूमध्य रेखा वाले क्षेत्र में एक वर्ष में इस तरह के तड़ित झंझा औसतन 180 बार पाये गए हैं। उच्च अक्षांश (लैटीट्यूड) के ठंडे क्षेत्रों में इस तरह के तूफान बहुत कम उठते हैं।

## *टारनेडो (tornado), वातावर्त (whirlwind) और जल स्तम्भ (waterspout)*

टारनेडो, वातावर्त दोनों धरती के ऊपर वायुमंडल में भंवर (Vortex) का रूप है। टारनेडो की अपेक्षा वातावर्त छोटे होते हैं। जल स्तम्भ, जल की सतह पर बनने वाले टारनेडो को कहते हैं। इसमें कभी-कभी पानी का स्तम्भ सैकड़ों मीटर की ऊँचाई तक उठता देखा गया है।

टारनेडो, वायुमंडल के सबसे प्रचंड तूफान होते हैं। इसमें हवा के चक्र की गति 480 km प्रति घंटा आँकी गई है और कभी-कभी तो 800 km प्रति घंटा से ऊपर हो सकती है। उत्तरी गोलार्ध में टारनेडो बहुधा वामावर्त anticlockwise होते हैं। इनकी एक स्थान से दूसरे स्थान तक जाने की गति बहुधा 48 से 64 km प्रति घंटा होती है, परन्तु 112 km तक भी पाई गई है। अक्सर टारनेडो का क्षेत्र केवल सौ या दो सौ मीटर चौड़ा और 20-30 किलोमीटर लम्बा होता है। जब टारनेडो किसी स्थान से गुजरता है तो वह कुछ क्षणों में ही जबरदस्त विध्वंस कर देता है। एक बार एक प्रचंड टारनेडो ने एक पूरा स्कूल तहस-नहस कर दिया, स्कूल के 85 छात्रों को 137 मीटर दूर ले जा फेंका। परन्तु सौभाग्य से उसमें कोई मृत्यु नहीं हुई। इस तूफान ने पाँच रेलवे के डिब्बों को जिनमें प्रत्येक का भार 70 टन था, रेल की पटरी से उतार दिया, और एक कोच को 24 मीटर दूर धकेल दिया। टारनेडो बहुत स्थानों पर उठते हैं परन्तु सबसे अधिक भयंकर ये तूफान अमेरिका में होते हैं और अक्सर मई के महीने में होते हैं। यह आंका गया है कि एक

टारनेडो की गतिज ऊर्जा $10^{10}$J से $10^{13}$J (या $10^4$ से $10^7$kWh) होती है। तुलना के लिए हिरोशिमा के बम की ऊर्जा $\approx 10^{13}$ जूल थी।

टारनेडो के क्षेत्र में हवा का दाब यकायक घट जाता है। यह परिवर्तन कितना होता है यह ठीक से नापा नहीं जा सका है। इसके संलग्न क्षेत्रों में दाब 100-200 mb (या 10-20kPa) तक घट जाता है। चूँकि यह परिवर्तन 30 सेकंड के अन्तराल से कम में हो जाता है, इसलिए घरों और इमारतों के अन्दर के दाब को बाहरी घटे हुए दाब के साथ संतुलन करने का समय नहीं मिलता। अतएव इस यकायक चूषण (suction) प्रभाव के कारण छतें उड़ जाती हैं और दीवारें बाहर की ओर टूट कर गिर जाती हैं। उदाहरण के तौर पर मान लीजिए एक कमरे की छत का नाप $5m \times 4m$ है। अन्दर का दाब 1000 mb है और यकायक बाहर का दाब 900 mb हो जाए तो छत को बाहर धकेलने वाले बल की मात्रा इस प्रकार निकाली जा सकती है। दाब का अन्तर $(1000-900)$mb = 100mb है। यह दाब $100 \times 10^{-3}$ bar हुआ। हम यह पहले देख चुके हैं कि 1 bar = $10^5$ Pa है। इसलिए यह दाब $10^4$Pa हुआ। अतएव छत को धकेलने का बल $10^4 \times 5 \times 4N = 2 \times 10^5N$ है जो लगभग $2 \times 10^4$kg भार के बराबर है। यह 20 टन वजन का बल है जो छत को उड़ाकर ले जा सकता है और दीवारों को ढहा सकता है।

## प्रभंजन (hurricane) और टाइफून (typhoon)

प्रभंजन और टाइफून उष्ण कटिबंधीय चक्रवात तूफान हैं। इनमें हवा की गति 118 km प्रति घंटा से अधिक पाई जाती है। हवा का प्रवाह सर्पिल की शक्ल का होता है। इन तूफानों के मध्य को आँख (eye) कहते हैं, जो अक्सर 5-15 km चौड़ी होती है। आँख के पास हवा का दाब एकदम कम हो जाता है। एक टाइफून में यह दाब 870 mb नापा गया था। इन तूफानों को भिन्न- भिन्न देशों में अलग-अलग नाम दिये गए हैं। अटलांटिक महासागर और कैरीबियन सागर पर इन्हें प्रभंजन (hurricane) कहा जाता है। पश्चिमी प्रशान्त महासागर तथा चीन सागर पर इन्हें टाइफून (typhoon) कहते हैं। आस्ट्रेलिया के तट पर इन्हें विलीविलिस (willywillies) कहते हैं।

## अध्याय 13

# वायुमंडल की स्थिरता

### वायुमंडल के अणुओं का पलायन न होने का कारण

हमारा वायुमंडल पृथ्वी के साथ कैसे संलग्न है और स्थिर क्यों है? वायुमंडल में उपस्थित गैसों के अणु उड़कर सदैव के लिए अंतरिक्ष में क्यों नहीं चले जाते?

इस समस्या को समझने का प्रयत्न हम दो पहलुओं से करेंगे। एक पहलू इस प्रकार है। कल्पना कीजिए कि पृथ्वी की सतह पर गैस का एक अणु जिसका द्रव्यमान $m$ है, रखा है। इस अणु को पृथ्वी का गुरुत्वाकर्षण उसके (पृथ्वी के) केन्द्र की ओर आकर्षित कर रहा है। इस कारण उस अणु की स्थितिज ऊर्जा $mgR$ है यहाँ $R$ पृथ्वी की त्रिज्या है और $g$ गुरुत्वीय त्वरण। इसके अलावा प्रत्येक अणु की एक औसत गतिज ऊर्जा होती है। यह $kT$ के बराबर होती है। जहाँ $k$ बोल्ट्ज़मैन स्थिरांक है। अब इस अणु की ऊर्जा पर विचार कीजिये एक ओर इसकी स्थितिज ऊर्जा है और दूसरी ओर इसकी गतिज ऊर्जा है। अब दोनों ऊर्जाओं के अनुपात $mgR/kT$ पर ध्यान दीजिए। स्पष्ट है कि यदि स्थितिज ऊर्जा और गतिज ऊर्जा के अनुपात का मान एक से कम होगा तो यह अणु रुकने के बजाए चलायमान हो जायेगा अर्थात् पृथ्वी पर रुकने के बजाए उड़कर बाहर जाने की चेष्टा करेगा। और यदि इस अनुपात का मान एक से काफी अधिक होगा तो पृथ्वी पर ही रुका रहेगा और इस प्रकार वायमुंडल का

सदस्य बन जायेगा। इस अनुपात की गणना हम हाइड्रोजन के अणु के लिए, साधारण ताप पर करेंगे, जो इस प्रकार है।

$$m = 3.5 \times 10^{-27}\,\text{kg};\ \ g = 9.8\ \text{m/s}^2,\ \ R = 6.4 \times 10^6\,\text{m}$$
$$k = 1.4 \times 10^{-23}\,\text{J/K};\ \ T = 300\text{K}$$
$$\frac{mgR}{kT} = \frac{(3.5 \times 10^{-27})\,(9.8)\,(6.4 \times 10^6)}{(1.4 \times 10^{-23})\,(300)} \approx 50$$

इसका अर्थ यह हुआ कि इस अणु की गुरुत्वीय स्थितिज ऊर्जा उसकी औसत गतिज ऊर्जा की अपेक्षा कई गुना अधिक है। अतएव इस अणु की गतिज ऊर्जा इसको उड़ाकर नहीं ले जा सकेगी।

वास्तव में स्थिति क्या है? पृथ्वी की सतह पर गैस का केवल एक अकेला अणु तो है नहीं, बल्कि वायुमंडल में अणुओं का एक बहुत बड़ा समूह है। इस समूह में अणुओं की संख्या कितनी है इसका अन्दाज इस बात से लग सकता है कि केवल 2 ग्राम हाइड्रोजन में या 32 ग्राम आक्सीजन में $6.02 \times 10^{23}$ अणु होते हैं जिसे एवोगैड्रो नम्बर (Avogadro's number) कहते हैं। वायुमंडल का द्रव्यमान $5.3 \times 10^{18}$kg है जिसका हम अध्याय 3 में अध्ययन कर चुके हैं। ये सब अणु सदैव गतिशील हैं और आपस में टक्कर खाते रहते हैं। गतिकी सिद्धांत (kinetic theory) में इन अणुओं के आपसी व्यवहार का अध्ययन किया जाता है। इस सिद्धांत द्वारा सब अणुओं के वेग की गणना पृथ्वी के ताप पर की गई है। यह पाया गया है कि पृथ्वी के ताप पर हाइड्रोजन और हीलियम गैस के अणुओं के झुंड में से कुछ अणुओं का वेग इतना अधिक होगा कि वह पलायन वेग ($\approx 11$ km/s) से भी अधिक होगा। अतएव धीरे-धीरे ये दोनों गैसें पृथ्वी को छोड़कर अंतरिक्ष में चली जायेंगी। बाकी और भारी गैसें $O_2$, $N_2$ तथा अक्रिय गैसें वायुमंडल में ही बनी रहेंगी। इस विषय पर अध्याय 2 में विस्तार से चर्चा की गई है।

सारांश यह है कि यदि हम केवल ऊर्जा के हिसाब से देखेंगे तो सभी गैसें वायुमंडल में रह सकती हैं। परन्तु गतिकी सिद्धांत के अनुसार, केवल $H_2$, He ही पलायमान होकर अंतरिक्ष में जायेंगी। बाकी सब गैसें वायुमंडल में ही रहेंगी। इसका कारण पृथ्वी का गुरुत्वीय त्वरण $g$ का मान है। हम इस गुरुत्वीय त्वरण के मान की गणना इस प्रकार कर सकते हैं।

मान लीजिये एक पिंड जिसका द्रव्यमान $m$ है, पृथ्वी की सतह पर रखा है। पृथ्वी इसको $mg$ बल से आकर्षित कर रही है। न्यूटन के गुरुत्वाकर्षण के सिद्धांत से पृथ्वी और इसके बीच के बल का मान $G.Mm/R^2$ है।

$$mg = \frac{G.m\,M}{R^2} \text{ अतएव } g = \frac{G.M}{R^2}$$

यहाँ $G =$ गुरुत्वीय स्थिरांक $= 6.67 \times 10^{-11}\ \mathrm{Nm^2/kg^2}$

$M =$ पृथ्वी का द्रव्यमान $= 5.9 \times 10^{24}\,\mathrm{kg}$

$R =$ पृथ्वी की त्रिज्या $= 6.4 \times 10^{6}\,\mathrm{m}$

इस समीकरण के हिसाब से $g$ का मान पृथ्वी के द्रव्यमान और त्रिज्या पर निर्भर है। गणना करने पर हमारी पृथ्वी के लिए उसका मान $9.8\mathrm{m/s^2}$ है। यह मान इतना है कि इन सब गैसों को पकड़कर, वायुमंडल में रखने के लिए सक्षम है।

## वायुमंडल रूपी समुद्र और उसकी स्थिरता

वायुमंडल की स्थिरता समझने के लिए दूसरा पहलू इस प्रकार है। इसके अनुसार वायुमंडल को हम वायु के एक विशाल समुद्र के रूप में देखेंगे। वायुमंडल के द्रव्यमान की गणना हम कर चुके हैं। यह लगभग $5.3 \times 10^{18}\mathrm{kg}$ है। इतना भारी वायुमंडल समस्त पृथ्वी के ऊपर विद्यमान है। यह वायुमंडल जो गैसों का एक समुद्र है, सारी पृथ्वी पर छाया हुआ है और पृथ्वी के धरातल से काफी ऊँचाई तक फैला है। वायुमंडल का सबसे निचला भाग पृथ्वी के

तल पर है, जहाँ हम सब रहते हैं। पृथ्वी के स्तर वाली हवा के ऊपर बाकी सारे वायुमंडल का दाब है। अतएव वायुमंडल का दाब (pressure) पृथ्वी के तल पर सबसे अधिक होगा और जैसे-जैसे हम ऊपर जायेंगे यह दाब घटता जायेगा। पृथ्वी के तल पर हवा का दाब 76cmHg के स्तम्भ के बराबर है। हम देख चुके हैं कि यह दाब $p = 1.013 \times 10^5$ Pa है। ऊँचाई के साथ वायुमंडल का दाब गिरता जाता है। इस गिरावट की गणना भी की गई है। उदाहरण के तौर पर लगभग 9km की ऊँचाई पर यह दाब $2 \times 10^4$ Pa है जो पृथ्वी के तल के दाब का केवल 1/5 भाग है और अधिक ऊँचे जाने पर यह दाब बहुत ही कम हो जायेगा जैसे भू-स्थिर उपग्रह की 36000 km की ऊँचाई पर यह दाब केवल $10^{-8}$mmHg के स्तम्भ के बराबर होता है।

अब जरा इस वायुमंडल रूपी समुद्र के विषय में विचार कीजिए। नीचे दाब अधिक है और ऊपर दाब कम है। अतएव नीचे वाली हवा की चेष्टा ऊपर की ओर जाने की होनी चाहिए। इसको समझने के लिए एक प्रयोग की कल्पना कीजिए। दो बल्ब लीजिए जिनमें हवा भरी गई है (चित्र 13.1)। नीचे वाले बल्ब में हवा का दाब $p_1$ है और ऊपर वाले में हवा का दाब $p_2$ है। उन दोनों बल्बों के बीच एक स्टॉप काक है जो दोनों बल्बों की हवा को अलग-अलग रखता है। यदि $p_1 > p_2$ है तो स्टॉप काक खोलने पर नीचे वाले बल्ब से ऊपर वाले बल्ब की ओर हवा जायेगी और अन्त में दोनों बल्ब का दाब बराबर हो जायेगा। इस प्रयोग के अनुसार वायुमंडल की नीचे वाली हवा को ऊपर जाना चाहिए और दाब बराबर हो जाना चाहिए। पर क्या ये दोनों बातें वास्तव में हो सकती हैं? खुले वायुमंडल में नीचे वाले स्तर से हवा ऊपर की ओर तो जा सकती है परन्तु क्या नीचे और ऊपरी स्तरों का दाब बराबर होना सम्भव है। उत्तर है
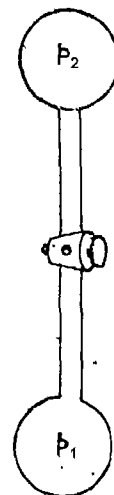
चित्र 13.1

नहीं, कारण यह है कि नीचे वाले स्तर को सदैव ऊपरी स्तरों का भार उठाना पड़ता है। इसलिए वायुमंडल में नीचे वाले स्तर का दाब सदैव अधिक और ऊपर वाले स्तरों का दाब सदैव कम रहेगा। फलस्वरूप नीचे से हवा ऊपर की ओर जाने की निरंतर कोशिश करेगी। अब दोनों बातों का एक साथ विचार इस तरह कीजिए। नीचे वाली हवा जिसका दाब अधिक है, ऊपर की ओर जायेगी जहाँ दाब कम है। हवा का एक विशिष्ट गुण यह है कि दाब घटने पर उसका आयतन बढ़ता है, अर्थात् ऊपर की ओर जाने पर हवा का प्रसार होगा। हवा का एक और गुण है कि यदि हवा का प्रसार होगा तो उसका ताप गिरेगा। यदि इस क्रिया में बाहरी स्रोत से ऊर्जा न अन्दर आए और न बाहर जाए तब इसे रूद्धोष्म प्रसार (adiabatic expansion) कहते हैं। इस तरह हम एक बहुत महत्वपूर्ण निष्कर्ष पर पहुँच गए हैं। वह यह है कि नीचे वाली हवा जिसका दाब अधिक है ऊपर की ओर जायेगी जहाँ दाब कम है। अतएव उसका प्रसार होगा और फलस्वरूप उसका ताप कम हो जायेगा। मुख्यतया इसी प्रभाव के कारण जब हम पृथ्वी से ऊपर की ओर जाते हैं तब वायुमंडल का ताप घटता जाता है। यह हम सबका अनुभव भी है कि पहाड़ों की ऊँचाई पर जैसे शिमला में, मैदानों की अपेक्षा ताप कम होता है।

अब इसी प्रभाव पर सूक्ष्मता से विचार करें। यह तो सही है कि दाब के अन्तर के कारण नीचे की हवा ऊपर की ओर जायेगी। परन्तु ऊँचाई के साथ दाब तो बराबर घटता जाता है। इसलिए ऐसा लगता है कि हवा लगातार ऊपर की ओर चलती चली जायेगी। इस तरह पूरी पृथ्वी के नीचे वाले स्तर से ऊपर की ओर हवा का लगातार प्रवाह होता रहेगा। यदि किसी और कारण से यह प्रवाह रोका नहीं जाता तो वायुमंडल में यह प्रवाह होता रहेगा और वायुमंडल में उथल-पुथल चलती रहेगी और वह स्थिर नहीं हो सकेगा। परन्तु हमारा अनुभव कहता है कि वायुमंडल में स्थिरता है। तब क्या कारण है कि वायुमंडल में पृथ्वी से ऊपर की ओर हवा का यह प्रवाह लगातार नहीं होता लगता। इसका विवरण इस प्रकार है।

हम देख चुके हैं वायुमंडल का सबसे नीचे वाला स्तर जिसे ट्रोपोस्फीयर (troposphere) कहते हैं; पृथ्वी के तल से लगभग 20km की ऊँचाई तक फैला है। पृथ्वी की सतह पर नदी,

नाले, पेड़, पहाड़, समुद्र आदि हैं। इन सबके साथ वायुमंडल एक संतुलित अवस्था में है। इस संतुलित वायुमंडल में पृथ्वी की सतह से ऊपर जाने पर हम सबको पता है कि ताप में गिरावट आती है। जिस गति से यह ताप गिरता है उसे ह्रास दर (lapse rate) कहते हैं। नापने पर पता चलता है कि प्रति किलोमीटर ऊपर जाने पर ताप लगभग 6°C घटता है। अर्थात् यह ह्रास दर (lapse rate) लगभग 6°C/km है।

अब विचार कीजिए उस हवा के प्रसार पर जो नीचे से ऊपर जाती है। हवा के एक पार्सल की कल्पना कीजिए जो नीचे से ऊपर जाती है। ऊपर जाने पर उसका आयतन बढ़ेगा और इस रूद्धोष्म प्रसार (adiabatic expansion) के कारण उसका ताप गिरेगा। ऊँचाई के साथ-साथ इस प्रसार के कारण वाबु के ताप में गिरावट की एक गति होगी। इसे वायु की रूद्धोष्म ह्रासगति adiabatic lapse rate कहते हैं। यह गति गणना करने पर लगभग 9.8°C प्रति किलोमीटर पाई गई है। अर्थात् एक किलोमीटर ऊपर की ओर यदि हवा का पार्सल जाए तो प्रसार के कारण इसका ताप लगभग 9.8°C गिर जायेगा। अब देखिए पृथ्वी की सतह से हवा का एक पार्सल विभेदी दाब के कारण ऊपर उठा ताकि उस ऊँचाई पर इसका दाब वहाँ के वायुमंडल के दाब के बराबर हो जाए। ऊपर उठने के कारण हवा के पार्सल का प्रसार हुआ और उसका ताप थोड़ा गिर गया। हमें पता है कि उस ऊँचाई पर हवा के पार्सल का ताप तो 9.8°C/km की गति से कम हुआ होगा। परन्तु उस पार्सल के चारों ओर विद्यमान वायुमंडल का ताप केवल 6°C/km की गति से गिरता है। अतएव उपयुक्त ऊँचाई पर उठने पर इस हवा के पार्सल का दाब उसके चारों ओर वायुमंडल के बराबर तो हो गया परन्तु उसका ताप आस-पड़ोस की हवा से थोड़ा-सा कम होगा। अतएव इस ठंडी हवा का पार्सल थोड़ा भारी होगा और इस कारण जरा-सा नीचे की ओर वापस लौटने की प्रवृत्ति होगी। इसलिए हवा का यह पार्सल और अधिक ऊपर जाने की बजाए वहीं रुकना चाहेगा। इस तरह वायुमंडल में स्थिरता आ जायेगी। इसके विपरीत यदि ऊपर जाने पर इस हवा के पार्सल का दाब चारों ओर घिरी हुई हवा के बराबर हो परन्तु ताप कुछ अधिक होता तो वह पार्सल अभी और ऊपर उठना चाहता। ऊपर जाने की प्रवृति चलती रहती। इसके कारण वायुमंडल अस्थिर हो जाता। यह हुआ वायुमंडल के स्थिरता का स्पष्टीकरण।

जैसा कि हम पहले देख चुके हैं कि लगभग 20km की ऊँचाई पर वायुमंडल के ताप का गिरना रुक जाता है। 20km से 50km की ऊँचाई तक के स्तर को स्ट्रैटोस्फीयर कहते हैं। इस स्तर में ताप बढ़ता जाता है। उसका कारण है ओजोन की परत, जो सौर ऊर्जा के एक पराबैंगनी भाग का अवशोषण करती है और ताप में वृद्धि होती है। फलस्वरूप ट्रोपोस्फीयर के ऊपर स्ट्रैटोस्फीयर की एक गरम परत है। पृथ्वी पर बादल भी ट्रोपोस्फीयर तक ही सीमित रहते हैं।

अब अन्त में आइये एक बात फिर याद दिला दें। यदि वायुमंडल स्थिर है तो हवाएँ क्यों चलती हैं? हम सबका अनुभव है कि कभी–कभी तेज आँधी, तूफान आदि आते हैं। हम देख चुके हैं कि इस हवा का चलना पृथ्वी के अपने अक्ष पर घूर्णन के कारण नहीं है। जैसा हम अध्याय 12 में देख चुके हैं हवाओं का चलना, तूफानों का उठना, मानसून का आना आदि, सब सूर्य से ऊर्जा प्राप्त होने के कारण है।

Given this background, we observe that in Bengali language the FE children show higher achievement of mean score 16.35 and SD of 5.68 in comparison to NFE learner's 8.17 and 5.46 respectively. In Mathematics too the pattern is the same, with FE learners having a mean score of 19.26 with a SD of 5.5 as compared to the mean of 10.86 and SD of 5.05 of NFE learners. In Social Studies, however, the two groups are comparable, and their achievement does not show much difference. Same is the case with General Science.

It may be seen that West Bengal strikes a different note than Andhra Pradesh, both being in the same pattern of partly integrated curriculum model. However, as pointed out earlier there is an indicator pointing towards the implementation of the scheme in West Bengal which allows learners of even 20 years age to be enrolled under this programme and that too at the stage of level II.

## Integrated Model

### Rajasthan

The performance of children has been categorised as below average and above average i.e. those scoring less than 40% are below average while those above 40% are above average marks.

In Hindi, at level I in NFE 36.05% children score below average and 63.95% score above average marks. In Mathematics, 17% children score below average while 83% scored above average. In the formal schools in Hindi 39%

children score below average while 61% scored above average, in Mathematics 32% scored below average and 68% scored above average. As this is an integrated system, at level III, there is no subject like Environmental Studies.

At level II, 61% children of NFE system scored above average in Hindi while 39% scored below average. In Mathematics 64% scored above average while 36% scored below average. In Environmental Studies 85% children scored above average and only 15% scored below average. In Natural Science the pattern was similar i.e. 85% above average and 15% below it. Against this, 59% children of formal school scored above average in Hindi while remaining 41% were below it. In Mathematics, 62% children of this system scored above average and 38% below it. In Environmental Studies, 59% formal school children scored above average while 41% below it. In Natural Science, 85% of the formal school children scored above average and 15% of them below it.

It would be seen that the performance of children in NFE system as compared to that of those in the formal system is many a times superior. It may, however, be inferred that in absolute terms, both the systems have not been able to deliver the goods at expected level and there is scope for improvement in both. But this can be said, with fairness, that given the input and infrastructure, the NFE has as compared to formal system, it has been more effective in terms cost benefit analysis.

# CHAPTER - VII

## THE NFE AND ITS CONSUMERS

The scheme of NFE needs to be assessed from the point of view of its consumers - the learners, the parents and the employers of the children. We shall examine the scheme, once again, based on the curricular models, from their points of view. The learners are those who have had attended NFE centres at some point of time.

### FORMAL MODEL

In J&K, there were 65.3% learners who were below 11 years of age, the rest 34.7% were above 11 years; 53.5% were male, 46.5% female, none was a scheduled caste or tribe, and 5.25% were such who attended the centre for less than a year while 94.75% attended for more than one year. All of these have joined the centre to get educated, have expressed a liking for the centre; they like the fellow learners; 37.2% consider that education at NFE centres will improve their capacity to do their household work more efficiently while 67.8% feel it would make them vocationally more efficient. About 2.6% say it would help them to keep better account, while 1.3% have given different reasons. As many as 73% have reported that they have no difficulty in following instructions in the NFE centres, 6.4% have difficulty in reading and writing. 22.6% have difficulty in Mathematics, 2.6% have difficulty in language. All of them want to continue in the centre. About 80% wish to join the formal school after finishing at NFE Centre, 14.1% wish to takee up some craft work, 5.2% wish to continue in NFE Centres. About 55% like their fellow learners most: about

59% like best their teacher, 25% like best the things they have learnt. 92.56% acknowledge that they have learnt the language in these centres, 30.7% said they learnt calculation, 94.8% say they have learrnt to read and write. Their expectations from the NFE centre ranges as follows: about 10% want to have more effective programmes of reading, about 29% want it to impart instructions in all the subjects and manner it is done in formal schools, about 31% want to have games and sports programmes in NFE Centres.

In Orissa, 28.21% learner respondents were scheduled caste/scheduled tribes boys under the age of 11 years who had studied at a NFE centre for more than a year, 5.13% were above 11 years of age. 35.90% belonged to other class boys and were below 11 years having studied for more than one year, 5.13% were above 11 years. Among girls, 3.85% were below 11 years and were SC/ST having studied for more than a year, 2.56% were above 11 years, 24.36% belonged to other classes and were more than 11 years while 5.13% were more than 11 years of age. All of these respondents (total 78 in number) reported that they want to go NFE centres to learn reading and writing. Again all of them have been reported to have liked the centre and also liked their fellow learners.

79.48% of the respondents have reported that their learning at NFE centres has helped them in their day to day household work, 38.46% reported that their education at NFE centre has helped them in assisting their parents in their vocations.

All of them have expressed a desire to continue their studies in formal schools after passing from the NFE centres. These learners want their NFE centres (perhaps because the instructions and the materials are the same as in formal schools) should provide mid-day meal, (the classes are held in the evening! ) dress and writing materials, good education and vocational training. Cultural activities and entertainment programmes are also the desirables!

As many as 78 parents were interviewed, of which 25.64% were SC/ST and the remaining other class parents. While all SC/ST parents were males, 3.44% of the remaining were females. 15.38% of all the parent-respondents were illiterate and the age range varied from 28 to 60. Their main vocations were agriculture, cattle rearing, daily wage workers, food gathering from the forests. Very few have regular service or cottage industry as source of livelihood.

The main motivation for sending children to NFE centre was the persuation by the Instructor of the centre (53.85%); 21.79% sent them to NFE centres because it was nearby, 24.36% were so much self-motivated to send their children to any educational institution and NFE centres came in handy. All of them have noticed behavioural changes in their children since joining the NFE centres, particularly adoption of hygienic habits. They also reported that their children could now read and write. 10.26% feel that their children could now keep account, 14.10% say they can write letters, 74.36% say they can help their siblings to read and write, 1.28% say he can 'improve the home', all of them say that manners etc. have improved

and their social behaviour has also improved. Again, all of them chose NFE centres for the education of their children "out of necessity and not by choice" in Orissa, primarily because the NFE centres are nearer their homes than the formal schools.

Of the majority of the employers interviewed 75% were agriculturists while 25% were in business and the children were employed in these activities. 50% of the employed children are tending cattle, 25% graze the cattle of agriculturist employer and 25% work as domestic servant. The work habits have improved (regularity 50%), 25% have acquired more knowledge about agriculture and 25% know more about business - accounting etc. The learner employees have positive attitude towards their employers, have become more polite, have cordial relations with fellow workers. Employer feels that the learners should get more vocational training to improve their work in which they are presently engaged.

**CONDENSED MODEL**

In Assam, the study reveals the views of the learners and the parents. Most of the learners interviewed had their education at NFE centres for 1-2 years and they were motivated to attend centres to acquire knowledge through education and all of them liked the centres and class-mates. This view is corroborated by high percentage of attendance recorded in Attendance Registers of the centres.

Education, the pupils received, was stated to be useful in day-to-day household work (80%); in dealing with people (55%), in assisting parents in vocation (28%).

Most of them expressed that they find difficulties in learning Arithematic. But the study shows that pupil's performance in language is generally poor. Most of the learners wanted to continue their education at NFE centres and would go for further education (88%) and others would do other job after completion of NFE.

78% learners liked their fellow learners and 55% teachers also. All of them are said to have learnt to read and write and calcuate at the centres. All learners expressed that they wanted scope for games and sports, songs and music which their nature demands but all NFE centres lacked these facilities. Co-curricular activities are seldom organised at NFE Centres.

**Parents' views:**

a) Motivation: Most of the parents were motivated to send their children to NFE centres by the Instructors concerned and it is found that major initiative in setting up centres is taken by them. B.D.O. and other social workers are also found to be motivating parents and a few parents spoke of self-motivation.

b) Change in behaviour patterns of NFE Pupils: All parents indicated that their children had displayed definite change in behaviour patterns for the better in respect of health habits; sharing home responsibilities; participating in family decision making and can read and write to some extent.

c) Suggestion for improvement of NFE Centres: All parents want that NFE centres should continue to impart education. The centres should have better facilities in terms of equipments, games and sport, co-curricular activities. Some

parents pleaded for meals and dress to be supplied to their children.

The sample NFE centres under study, had no pupils sent by any amployer and hence employers' views could not be obtained for recording.

Bihar:

In Bihar 80 learners were interviewed - two from each centre selected for the study. There were 57.5% boys and 42.5% girls. 28.75% of total were boys and 27.5% were girls belonging to SC/ST. 17.5% boys and 6.25% girls belonging to SC/ST were in the less than 11 years. 11.25% boys and 21.25% girls were above 11 years. These SC/ST learners were attending the NFE centre for more than one year. The learners belonging to other castes were 43.75%, 28.75% boys and 15.0% girls. 11.25% boys and 6.25% girls were above 11 years and 17.5% boys and 8.75% girls were below 11 years. 23.75% boys and 11.25% girls were attending the NFE centre for more than 1 year. 5% boys and 3.75% girls were learners in the NFE centre for less than one year.

Learners were mostly motivated by the Instructors of the NFE centre. In some cases the Mukhiya of the Gram Panchayat, B.D.O., Pramukh and Supervisors also motivated the learners to come to the NFE centres to study. All the learners liked to attend the centre and were happy to be with the fellow learners. They were fond of their Instructor and learnt many good things from him. It appeared that the behaviour and outlook of the learners have improved to a considerable extent.

They helped their guardians in their household work in a better way, they learnt to show respect to their superiors, paid attention to personal hygiene and developed good habits. Free from the strict formalities of traditional schools, the NFE centres create a very congenial atmosphere where the learners develop healthy attitudes and a sense of belongingness to the centre.

Most of the learners belong to poor families. They aspire for better socio-economic condition. They went to be better managers of farms, shops and other family vocations to augment the income of the family and live a better life.

Altogether 80 parents, two from each centre were interviewed in Bihar. Of them 96.25% were males and 3.75% females. The parents belonging to SC/ST were 46.25% and others 53.75%. Amongst them 81.25% parents were literate ( 37.5% SC/ST and 43.75% others). Of the illiterate parents 8.75% belonged to SC/ST and 10.0% to other castes. Generally the parents were above 45 in age. Their maximum age noted was 72 and minimum 30.

Majority of parents, (80%) were engaged in agriculture. A few of them were labourers (11.25%), businessmen (3.75%) and were in Government Service (3.75%). 3.75% parents were well to do, 27.5% were having average income, and the bulk i.e. 68.75% were poor.

Most of the parents i.e. 91.25% were motivated to send their children to NFE centre by the Instructors. The rests were convinced by other agencies like B.D.O./Pramukh and Block Education Extension Officers. The parents seemed to be satisfied

over the progress their children were making in NFE centres, particularly in terms of literacy, clean health habits and social behaviour.

87.5% parents admitted that their wards could read and write. 16.25% parents reported that their wards could write letters. 31.75% parents reported that their wards could keep accounts. 37.5% parents said that their wards helped their brothers and sisters to read and write. 48.75% parents reported that their wards shared home responsibilities. 42.5% parents responded that the behaviour of their wards with their peer group had remarkably improved. 40% parents said that their wards' behaviour with elders and neighbours became courteous and polite. 15% parents said that their wards behaved nicely with visitors. 72.5% parents said that their wards never attended formal schools and 27.5% parents said that their wards were formerly students of formal primary school but left the formal schools before completion of the course because of unkind treatment of the teachers.

Two employers from Chainpur block, 1 from Kanke Block and 1 from Rajgir block were interviewed. In Ekangarsarai block, in spite of sincere efforts by instructors and supervisor no employer could be available as the learners being children of cultivators, were engaged in their parents family occupation and were not employed by any other. Three employers belonged to scheduled caste of whom two were cultivators and one was a businessman. One employer belonged to other caste and he was a businessman.

Of the four learner employees, two were employed in agriculture and its allied work. Both of them grazed cattle and did odd jobs during harvesting season. One learner employee was engaged as salesman in a shop, the other served in the tea staff of his employer. Of the two learner employees engaged in agriculture work. One has been working for 5 years and the other for two years. Of the other two serving in shops, one is working for more than 1 year and the other for less than 1 year.

Marked improvement was found by the employers in cases of three learner employees belonging to scheduled caste. They are now more faithful, respectful towards their employer. The learner employee working in a tea stall has acquired better understanding in dealing with customers. No improvement was noticed by the employer in the case of the learner employee employed as a salesman in a shop. Because each employee was a lone worker employed by the employers, his behaviour with his co-workers could not be observed.

The businessman employer suggested that the learners should learn accounts work in a non-formal education centre. The other three employers were of opinion that the learners should acquire better skill in reading and writing and their behaviour requires more improvement.

Madhya Pradesh:

In Madhya Pradesh, 92 learners were interviewed. All of them were studying for more than one year. 63.04% were boys and 36.96% girls. 45.65% learners are SC/ST. 31.52% are

under 11 years. All the respondents say that they joined NFE centres to learn reading and writing. 56.52% have expressed their liking for the NFE centre. 44.57% think that after studying in NFE centre, they can assist their parents in a better way. Again 78.26% feel that education would help them in day-to-day household work, 5.43% feel education helps them to deal with people in a better manner. 67.39% respondents like the teacher, 54.34% like the things they learn, 32.61% like the fellow learners. 57.61% wish to continue studies further, 30.43% want to go for service, 6.52% want to join parental vocation, 2.17% wish to do tailoring which they have learnt in NFE centres' 'Earn and Learn Scheme', 3.26% wish to do business. Among the things they want to learn more at the NFE centres the pattern of response is: making tatpatti (mats) - 14.13%, sewing work - 28.26% making toys - 4.34%, sports - 17.39% and NCC - 1.09%.

Among the 92 parents interviewed 65.22% belong to SC/ST communities. 34.78% were illiterate, 4.34% were graduate including 1.09% women, 8.69% were matriculates, 11.96% were middle and 35.87% were primary pass (Class V). Of these respondents, 7.61% were females, 64.13% were farmers, 14.13% were in-service, 11.96% were labourers, 6.52% were artisans, 3.26% were in business.

As many as 90.22% parents say that they were motivated to send their children to NFE centres by the instructors, 3.26% have acredited a fellow learner for motivation, while 6.52% have given various sundry motivating factors. The behavioural changes in the learners were noticed by the parents

such as washing hand before meals was reported by 88.04% parents, washing clothes and daily bathing by 65.22% parents, brushing of teeth daily 80.43%, and 65.22% report that the learners now take food neatly. Again 58.70% parents say that their children can now keep accounts, 65.22% said that now they can write letters, nd 35.87% say that they can now represent the family. However, it may be noted that none of them have reported that they help their brothers and sisters with their studies. 88.04% parents have reported marked change in behaviour towards peer group, 78.26% report that they behave better, with neighbours, 4.35% report that learners behaviour is more polite to visitors. The children of 18.48% parents had earlier studied in a formal school but left the same due to poverty.

As many as 81.52% parents feel that honorarium paid to instructors is highly inadequate. 73.91% suggest introduction of mid-day meal to learners, 63.04% want introduction of games in NFE centre and 84.78% want more and better teaching facilities/aids.

Only eight employers were interviewed, six were agriculturists, one craftsman, and one govt. servant (postman). Of the eight learners who were employed, seven belonged to SC/ST. Five are engaged in Agriculture and three in household work. Two learner-employees were reported to have more knowledge about the job, five were more regular, five were now more efficient, three worked with greater interest, two shared responsibility with their employers; two had more positive attitude towards employer, four shared common interest with the employers, two discussed their problems with them, two readily

accepted the suggestion now, five employers report that their behaviour is polite with co-workers.

The suggestions put forward by employers for improvement in NFE range from greater vocationalisation (5), and incentive to learners (4).

In Uttar Pradesh, a total of 118 learners were interviewed - 57.63% were boys and 42.37% were girls. 6.78% belonged to SC/ST. 35.59% were below 11 years and 64.41% above 11 years. 92.37% were such who were studying for more than one year and 7.63% were studying for less than a year.

77.5% of respondents came to the NFE centres to be educated; 0.8% to be able to get employment, 3.3% because parents wanted them to join, 18.4% did not respond. According to the learners, they consider that education at NFE centre helps them most in performing better the day-to-day household work, it also helps them in assisting their parents in their work while it lightly helps them in dealing with people. Almost all have said that they do not feel any difficulty in the subjects taught and that they want continue their studies. The pattern of response as to the aim after completing courses at NFE centre, 68% want to gain more knowledge about Agriculture, History, Geography, Science etc. 12% want to seek self-employment, 9% want to look after the family and make it modern, 5% want to take part in games and sports, 4% want to follow improved method of agriculture and 2% want to seek employment.

The NFE has provided them the skill of reading and writing (86%), calculation (65%), making toys (27%), playing different games (21%). It is noteworthy that basic educational

skills have been achieved by most of them.

The learners expect that NFE should be able to provide them some skill or knowledge of craft e.g. tailoring, doll or toy making etc., cultural activities, music, more agricultural skills etc.. As it is, it is same in content as formal education.

At the middle stage, in Uttar Pradesh, 16 learners were interviewed, 81.25% being boys while 18.75% were girls. 12.5% belong to SC/ST. About 33% indicated that they joined the NFE centre in order to take public examination of junior High School ( middle level ). 25% said that they came to NFE centre because they could not go to a formal school. All the respondents liked the centre and fellow learners. 66% say that education in NFE centre helped them in their household work. About 55% said that it enabled them to assist their parents in their vocation. However, not many learners said that education helped them to deal with people, may be because the content is largely formal and does not have applied aspect. Most of there learners did not feel any difficulty in subjects except science and mathematics which is found to be difficult by 33% learners. The order of priority with regard to future plans, in that order, are joining high school classes, doing one's own business, helping in parental occupation and improving agriculture. The goal is more concretely set at this level. General suggestion about improvement in NFE programme is that at this level, the time for subject teaching is too short and should be increased, good language teaching (including English) programme should be made available to NFE system, some vocational training should

be given, improved science teaching with practicals be given, and teaching of improved methods of agriculture should be part of NFE.

In order to gauge the impact of NFE programme, a total of 117 parents were interviewed, 42.74% being literate and 57.26% illiterate. Only 1.71% were female parents for obvious social reasons that females generally do not talk to outsiders. In most of the cases the motivator was the instructor and in few cases the 'other learners'. Of course the social worker, centre itself and Gram Pradhan also find a place in the list of motivators identified by the parent - respondents but they are very remotely identified showing the public participation in the programme leaves much to be desired. Gram Pradhan's involvement is essential in the programme.

Some behavioural changes have been noticed by the parents among their learner - children in the system as a whole. While literate parents have reported the following behaviours in order of priority - cleaning of teeth daily, bathing everyday, washing of hands before meals, taking of food neatly; the illiterate parents too report same behavioural changes though in slightly different order, namely, washing of hands before meals, bathing everyday , cleaning of teeth daily and taking of food neatly. This perhaps indicates the emphasis of the two groups on different behavioural aspects. All the learners can now read and write as reported by almost all the parents. The literate parents find the following attributes in their wards in order of priority can represent the family outside, writing

letters, helping brothers and sisters to read and write, keeping accounts, sharing home responsibility; but for the illiterate parents the priority is - writing letters, keeping accounts, helping brothers and sisters with their studies, sharing home responsibility, representing the family outside. This is significant as it reflects the needs of the parents.

The employers in the sample are distributed among the following trade/vocation - Tailor (20%), Weaving (40%), Mantha Plantation (20%), bank employee (20%). A word about the last - he is a sweeper and asks his son to deputise for him at the bank! These learners are given work suited to their age and skill. The employer, however, have noticed that 40% of learners knew more about their job, 80% have become more regular, 80% have improved in efficiency, 100% take more interest in work, 40% share more responsibility and 40% deal with customers better. Also 80% learners have more positive attitude towards the employers, 60% share common interest with employer, 40% discuss the problem with the employers, 80% readily accept employers suggestions. They also behave gently with others and are cordial to them.

Some of the suggestions given by parents and employers are as under: facilities as those at formal school should be available at the NFE centres, training in some useful vocations is necessary ( at times suggestions have come to make education less bookish and more practical),

time allotted for teaching work is too short and needs to be increased, hours for organising classes should be according to the needs of the community, some games and cultural activities should be integral part of the NFE centres, incentives like light refreshments need to be introduced, learners should be rewarded for curricular and co-curricular activities, instructor training needs to be strengthened, frequent supervision, and more intensive training in 3Rs specially mental arithmatic should be given.

### Partly Integrated Model

In Andhra Pradesh, the learners interviewed were in the age range of 10 to 16 years (!) of whom 60% belonged communities. About 50% of them said they were attending centres for more than three years (!). It is, by implication, apparent that the learners have been at the centre for a duration longer than envisaged in the scheme. About 75% have indicated that they attend NFE centre to get knowledge and that it has enabled them to read and write, write letters, and calculate. All of them liked the centre and their fellow learners. As many as 95% of them have said that they assisted their parents in their daily chores and vocations, 98% have indicated that there is no difficulty in learning the subjects and 2% find difficulty in Mathematics. They all want to continue the studies in the centre. They all want to continue the studies in the centre. After completion of the course, they wish to work in Agriculture or beedi making etc. 20% want to pursue their studies

further, either in the formal schools or the higher NFE centres. In general it was reported they liked the things that they learnt at the NFE centre, some of them (less than 5%) want to study English, Burrakatha and Kolatam.

The motivating factor for the parents to send their children to NFE centre has been the instructors in 50% of the cases, 40% parents said that the establishment of the centre itself was the motivation while 6% said that other learners at the centre motivated them to send their children to the centre while 4% were various sundry reasons. 70% of them have noticed the change in habits of the learners e.g. washing their clothers and bathing everyday, 10% say hey take their food neatly, 20% parents report washing of hands by learners before taking the meals. 90% have reported that their children could read and write now while 10% say they cannot, 40% say they (the learners) can keep accounts. 25% say their children donot help their brothers and sisters with studies while 20% say they do, 15% say they are able to write letters. 65% have noticed the good behaviour of the learners with the people around in the neighbourhood while 35% report similar behaviour with the peer group.

The report with regard to observations of the employers is only impressionistic rather than data based. It has been reported that mostly the learners have been employed as cattle grazers, they are more regular and punctual, but there are two cases which have not shown any improvement in their behaviour even after attending the NFE. Normally, they are

positive in attitude to their employers, discuss the problems of work with them and are amendable to suggestions. The employers feel that there should be greater emphasis on agriculture.

In West Bengal, 80 learners were interviewed, 55.5% were boys and 44.5% girls; 42.5% were below 11 years while 57.5% were above 11 years of age. 60% were of SC/ST communities while 40% belonged to other communities. The NFE beneficiaries are, therefore, more of SC/ST communities. The single motivation for joining the NFE centres is academic achievement. There is no discrimination of motive could be identified according to caste, sex, age or period of stay. 100% of them show their liking their fellow learners without any discrimination and also the centre is liked by most of them. 36.25% report that the education they receive help them in assisting their parents in their vocations, 66.25% report that it helps in day-to-day household work and 38.75% report that it helps in dealing with people. As a secondary inference, it could be said that more life oriented programme could motivate learners to enroll and stay. 67.5% did not feel any difficulty in learning the subjects taught while 26.25% feel difficulty in arithmatic, 8.75% have difficulty in General Science. Only in exceptional cases (one each) have difficulty in social science and writing. While 50% of the learners aspire to enter into the formal system of education, 26.25% wish to continue studies, 5.00% want to enter parents vocation, 3.75% want to help the family economically, 3.75% want to enter into

business, 2.5% want to enter into farming, 1.25% want to acquire wider knowledge and 11.25% have not responded.

The learners have developed liking in the following pattern - 35% like fellow learners most, 30% like the things they learn at the centre, 67.5% like the teacher and only 17.5% like the way the teacher teaches. Thus it can be said that the learners, in general, like the teacher but not the way he teaches. This obviously underscores the need of teachers' training in special methods necessary for teaching at an NFE. The learning benefits received from the centre are as follows: 97.5% report that they have learnt to read and write, 41.25% have reported to have learnt to calculate, 1.20% have learnt to make toys, 2.12 have learnt to play different games. They expect that hey would be able to learn other school subjects (26.8%), learn vocations (8.0%), play different games and dances (16.8%), learn various crafts (17.6%), learn household work and home craft (1.6%), learn to rendeer first aid (1.6%) and learn agriculture (0.8%). It can be seen that the perception of the function of NFE centres is varied and so are the expectations.

Of parents interviewed (80 in number), 51.25% were illiterate and 48.75% literate; 92.5% were male while 7.5% were females; 37.5% were engaged as day labourers, 31% were farmers, 8.75% were in service, and small percentage of them were engaged in various other vocations (between 1.25% to 3.75% each) such as bus driving, shopkeeping, beedi making, fishing, carpentry, begging etc. etc.. Most of the parents i.e. 75.6% send two children, and very small percentage send more than two children while the model situation is family with four or

five children. The source of motivation to send the children has been mainly the NFE teacher (about 85%), social worker and other learner (about 11% each) self (7.25%) NFE centre and the local press (2.4% each).

The impact of NFE on these children have been that all parents but one reported (98.8%) that their children can read and write, 42% say that they help by sharing the responsibility at home, 27.5% say that they represent family outside, 27.5% help their siblings with their studies, 18% help in reading and writing letters, 14.5% help by keeping accounts. There have been noticeable behavioural changes in their children as a result of joining NFE centres. Approximately 55% parents report that they wash their hands before meals, about 53.6% notice cleaning of teeth daily, approx. 30% notice them bathing and washing their clothes daily, 18% say they take their meals neatly, about 7.3% notice modest behaviour in them, while smaller number of parents have noticed refinement in activities, wider reading, self-consciousness while interacting with others. The parents have suggested that NFE should improve by following activities: providing tiffin to learners (30%), provision of teaching-learning aids (30%), permanent building with sufficient accommodation (15%), provision of school uniform (12.25%) sufficient reading and writing material adequate and regular salaries to instructors, more time to be given (about 10% each), sufficient equipment and light (about 9% each), sanitary facility and drinking wter (about 5%) and smaller percentage have suggested provision of sports materials, more NFE centres and regular supervision.

Out of the eight employers interviewed majority were shopkeepers, bidi makers, teacher, while one each was agriculturist and an artisan. The distribution of employment was unspecified (50%), sales assistant in shops (about 48%) and about 12% in teading cattle. The noticeable areas of behaviour/ improvement have been, regularity (86%), more interest in work (about 78%), greater efficiency (50%). The change noticed by employers are respectful and modest behaviour (50%), accepting suggestions for modifying own behaviour (25%), taking interest in wider situations (25%), discussing problems with employers (12.5%). The employers expect that NFE should provide work education (12.5%), impart some craft training (12.5%), account keeping (25%) while 37.5% feel it should lead to general improvement.

In general it can be said that people have different perceptions of the role of NFE, that NFE has made impact to some degree, that different groups of direct and indirect beneficiaries have noticed some changes in the achievement and behaviour of the learners, to what degree is a matter that needs our consisted effort to consolidate and build upon. The important changes are primarily literacy and personal and social behaviour. The NFE centres are becoming popular. Parents and learners expect more intensive and comprehensive NFE programmes. Some of the changes are, although not curriculum objectives, but effect of concomitant learning, and more effort is required to establish teacher-learner rapport which appears to be a weak link.

**Integrated Model**

In Rajasthan, 9% learners of SC/ST and below 11 years have been attending the NFE centre for more than a year; 15% learners of SC/ST above 11 years have been doing so. The motivation factors have been enumerated as congenial atmosphere at the centre, liking of the fellow learners, instructors' behaviour, his teaching technique and organisation of teaching-learning activities. It has been reported by 22% of learners of SC/ST and 50% of other communities that their education has enabled them to help their parents intheir respective vocations, 24% of SC/ST and 57% of other communities have reported that it (education) has improved their performance day-to-day household duties, 85% say it has not made any impact on their ability to deal with people. The learners find difficultty in Mathematics (30%) while 50% do not face any difficulty and remaining have not responded. All of them want to continue their education further, of which 63% want to join the formal education system after completing NFE.

97% of the learners feel that they learn reading, writing with comprehension, 67% say they learn how to calculate 24% say they learn to make toys, 30% learn to play different games.

52% learners have expressed their keen desire for making arrangements for some more vocational training during the course to enable them to learn their livelihood. 25% female learners want tailoring and allied vocation.

The parents were also interviewed to find the effectiveness of NFE. 91% were males, 32% were SC/ST and 32% literates. 83% were agriculturist, 10% labours and the remaining are spread over to a number of professions e.g. carpentry, government services, small scale industries etc. 88% parents reported that they were motivated to send their children to NFE centres by the instructors, 9% were motivated by the Block Development Officer.

The parents have noticed somechange in habits of their ward-learners such as washing of hands before meals (58%), daily bathing and washing of clothes (90%), cleaning of teeth daily (74%), taking of food neatly (45%). 40% of the parents reported that their children have learnt to maintain the accounts 55% report letter writing by them, 13% say they represent the family outside, 55% report that they help their youngers with their studies and 42% say that they have started shouldering the responsibility of the family. Further 50% say that they can express themselves better than before, 48% say they are more regular in life, only 4% participate in family decision making, 69% report that they (learners) want to study more, 37% observe appropriate behaviour with peer group and others.

85% parents feel that 'mid-day meal' (!) to all and free uniforms to poor should be given. Scholarship to SC/ST children and to girls should be provided. Prizes may be awarded for excellent performance. They also suggest that the honorarium to instructor should be raised (45%), adequate lighting arrangements be made (22%), sufficient accommodation

be provided (20%), proper games facilities (20%), supply of instructional material (40%), effective supervision (40%), wide publicity to the programme (40%) and adequate certification (40%).

None of the employers interviewed belonged to SC/ST, and all were males. The employers belonged to professions other than the specified groups, such as contractor and service. In all only two employers were interviewed and both of them agreed that the learners were now more regular, more efficient, take more interest in work, and behaviour with others had improved, have positive attitude towards employers, readily accept suggestions etc. One of the employers feels that, besides other things suggested by parents, vocational training should form a part of the instructional programme.